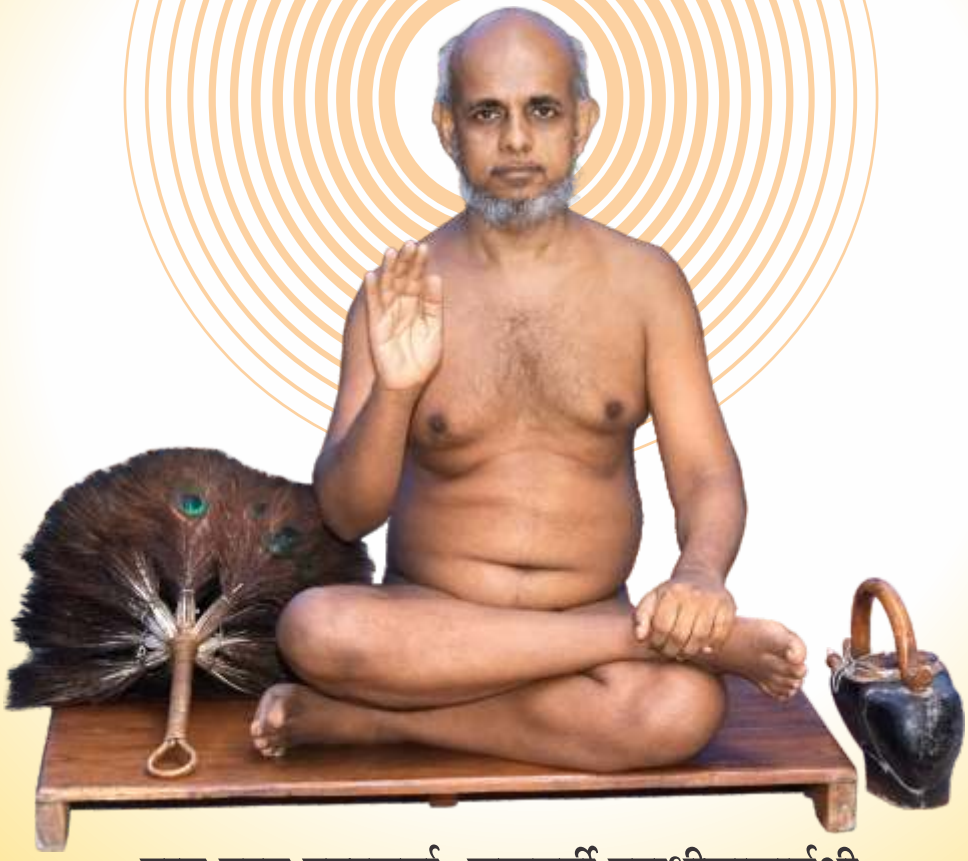

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

तीस चौबीसी विधान

रचयित्री : पूज्या गणिनी-आर्यिकाश्री ज्ञानमती माताजी

प्रकाशक
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
हस्तिनापुर-मेरठ (उत्तरप्रदेश)

(परम्परानायक)

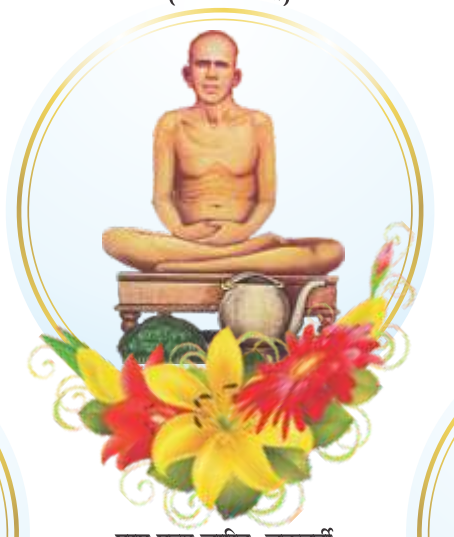

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्रायः होता है। फलतः उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 29

तीस चौबीसी विधान

-रचयित्री-

इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, तीनलोक, विश्वशांति महावीर आदि अनेक विधानों एवं ग्रंथों की रचयित्री चारित्रचन्द्रिका, गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के आर्यिका दीक्षा स्वर्ण जयंती वर्ष (अप्रैल 2006-अप्रैल 2007) के अन्तर्गत प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

फोन नं.- (01233) 280184, 280236

षष्ठ संस्करण	आश्विन शुक्ला 15	मूल्य
1100 प्रतियाँ	वीर.नि.सं. 2532	60/-
	7 अक्टूबर 2006, शरदपूर्णिमा	

दिगम्बर जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी

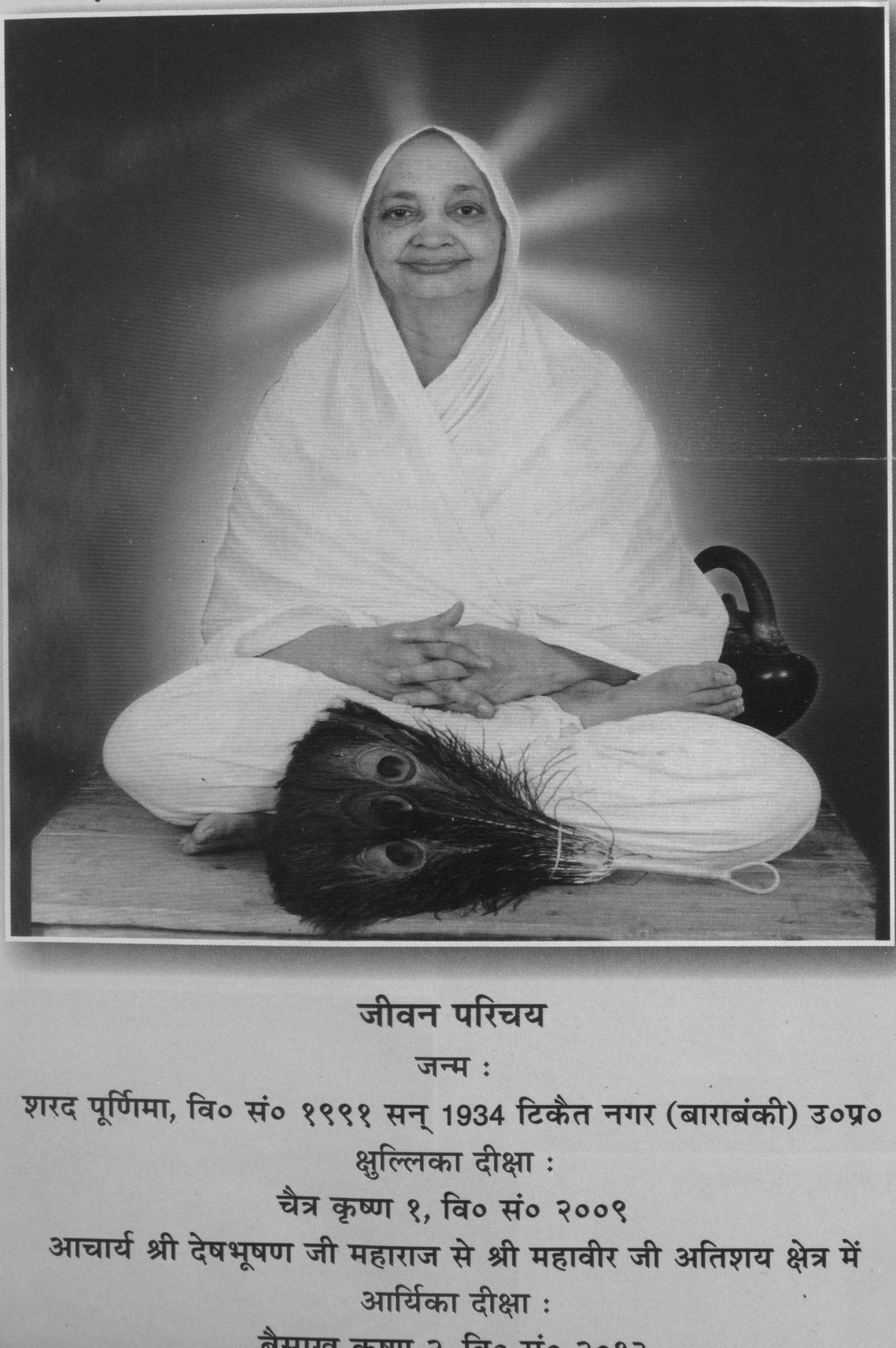

जीवन परिचय

जन्म :

शरद पूर्णिमा, वि० सं० १९९१ सन् 1934 टिकैत नगर (बाराबंकी) उ०प्र०

क्षुल्लिका दीक्षा :

चैत्र कृष्ण १, वि० सं० २००९

आचार्य श्री देषभूषण जी महाराज से श्री महावीर जी अतिशय क्षेत्र में

आर्यिका दीक्षा :

बैसाख कृष्ण २, वि० सं० २०१३

आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज से माधोराजपुरा (राजस्थान) में

प्रस्तावना

अनादिनिधन इस मध्यलोक में असंख्यातों द्वीप-समुद्र हैं। इनमें सर्वप्रथम द्वीप जम्बूद्वीप है। जो कि ठीक थाली के समान आकार वाला है। इसमें पूर्व-पश्चिम लम्बे ऐसे छह पर्वत हैं जिनके नाम हैं– हिमवान्, महा-हिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी। इन पर्वतों से विभाजित सात क्षेत्र हो गये हैं जिनके नाम हैं-भरत, हेमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत। इस द्वीप के ठीक मध्य में अर्थात् विदेह, क्षेत्र के बीचों-बीच में सुदर्शन मेरु पर्वत है। भरत और ऐरावत क्षेत्र के बीचों-बीच में पूर्व-पश्चिम लम्बा ऐसा विजयार्ध पर्वत है तथा हिमवान् पर्वत के पद्म सरोवर से गंगा-सिंधु नदियाँ निकलकर विजयार्ध की गुफा में प्रवेश कर बाहर आती हैं और लवणसमुद्र में प्रवेश कर जाती हैं। इस निमित्त से इन भरत-ऐरावत में छह-छह खण्ड हो जाते हैं। समुद्र की तरफ के मध्य का खण्ड आर्यखण्ड कहलाता है शेष पाँच म्लेच्छखण्ड माने गये हैं। इन आर्यखण्डों में षट्काल परिवर्तन होता रहता है।

इस जंबूद्वीप को वेष्टित कर लवणसमुद्र है। पुनः उसे वेष्टित कर धातकी खण्डद्वीप है। इस द्वीप के दक्षिण-उत्तर में इष्वाकार पर्वत है जिनसे इस द्वीप के पूर्व और पश्चिम ऐसे दो भेद हो जाते हैं। पूर्व धातकी खण्ड के मध्य में विजय नाम का मेरु पर्वत है और पश्चिम धातकी खण्ड के मध्य में अचल नाम का मेरु पर्वत है। यहाँ पर भी दोनों भागों में छह-छह पर्वत एवं सात-सात क्षेत्र हैं जिनके जम्बूद्वीप के समान ही हिमवान आदि और भरत आदि नाम हैं। काल परिवर्तन आदि की व्यवस्था पूर्ववत् ही है इस द्वीप को घेरकर कालोदधि समुद्र है।

इस समुद्र को घेरकर पुष्करद्वीप है। इसके मध्य में चूड़ी के आकार वाला मानुषोत्तर पर्वत है। इसीलिए इस द्वीप के इधर के भाग को अर्ध पुष्कर अर्थात् पुष्करार्ध कहते हैं। यहाँ पर धातकी खण्ड के समान पूर्वपुष्करार्ध और पश्चिम पुष्करार्ध ऐसे दो भाग हो गये हैं। इन दोनों में क्रम से मंदरमेरु और विद्युन्माली मेरु नाम के दो मेरु पर्वत हैं। दोनों तरफ छह-छह पर्वत और सात-सात क्षेत्र हैं। शेष व्यवस्था जंबूद्वीप के समान ही है।

इस प्रकार से जंबूद्वीप का एक भरत, धातकी खण्ड के दो और पुष्करार्ध के दो, ये सब पाँच भरत क्षेत्र हैं। ऐसे ही पांच ऐरावत क्षेत्र हैं। इन प्रत्येक क्षेत्र के आर्यखण्ड में चतुर्थ काल में चौबीस-चौबीस तीर्थंकर होते हैं। इन पाँच भरत, पाँच ऐरावत में भूतकाल में हुये चौबीस और वर्तमान काल में हुए चौबीस और भविष्यत् में हुए चौबीस तीर्थंकर ऐसे तीन काल संबंधी तीर्थंकरों की अपेक्षा से तीस चौबीसी हो जाती है। इस तीस चौबीसी की नामावली छप चुकी है। दक्षिण प्रान्त में छपी हुई एक

पुस्तक के आधार से पूज्य ज्ञानमती माताजी ने अपनी डायरी में यह नामावली लिखी थी जिसके आधार से उन्होंने यह "तीस चौबीसी पूजन विधान" बनाया है। यद्यपि तीस चौबीसी विधान की एक हस्तलिखित पुस्तक झालरापाटन के सरस्वती भवन से प्राप्त हुई थी किन्तु वह अशुद्ध अधिक होने से उसका उपयोग नहीं हो सका है।

इस तीस चौबीसी विधान में सर्वप्रथम समुच्चय पूजा है। पुनः एक-एक चौबीसी की कुल तीस पूजाएँ हैं। बाद में एक बड़ी जयमाला है। अतः इस विधान में 31 पूजाएं हैं, 30×24=720 अर्घ्य हैं, 30 पूर्णार्घ्य हैं और 32 जयमालाएँ हैं।

जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में इस वर्तमान चतुर्थकाल में ऋषभदेव से महावीर पर्यंत चौबीस तीर्थंकर हुए हैं उनकी भी पूजा इसमें आ जाती है।

इसी ग्रंथ के अंत में विद्यमान बीस तीर्थंकर की पूजा दी गई है। बीस तीर्थंकर कहाँ-कहाँ पर हैं उनका विवरण देखिए–

जंबूद्वीप के विदेह क्षेत्र के बीचों-बीच में सुदर्शनमेरु है। इसके दक्षिण-उत्तर में देवकुरु-उत्तरकुरु नाम की उत्तम भोगभूमि है तथा पूर्व और पश्चिम भाग को पूर्वविदेह पश्चिमविदेह कहते हैं। पूर्वविदेह में सीता नदी के बहने से उसके दक्षिण-उत्तर ऐसे दो भाग हो जाते हैं। ऐसे ही पश्चिम विदेह में सीतोदा नदी के बहने से भी दो भाग हो जाते हैं। उनमें से प्रत्येक भाग में 4 वक्षार पर्वत और 3 विभंगा नदियों के निमित्त से 8-8 भाग हो जाते हैं। इस तरह एक मेरु संबंधी 8×4=32 विदेह हो जाते हैं। इन प्रत्येक विदेह क्षेत्र में भरत के समान छह-छह 'खण्ड' होते हैं और वहाँ पर भी आर्यखण्ड में कर्मभूमि रहती है। अन्तर इतना ही है कि वहाँ पर षट्काल परिवर्तन न होने से हमेशा चतुर्थकाल के प्रारंभ जैसी ही व्यवस्था रहती है और हमेशा तीर्थंकरों का जन्म होता रहता है, अतः वहाँ पर चौबीसी का कोई नियम नहीं है। इन पाँच मेरु संबंधी 32×5=160 विदेहों में यदि एक साथ अधिक से अधिक तीर्थंकर जन्म लेवें तो 160 हो सकते हैं तथा 5 भरत और 5 ऐरावत को मिलकर ऐसे 170 तीर्थंकर एक साथ हो सकते हैं।

इसी प्रकार से कम से कम 20 तीर्थंकर ही इन ढ़ाई द्वीपों के अन्तर्गत रह सकते हैं। इसीलिए उन्हें विद्यमान अथवा विहरमाण तीर्थंकर कहते हैं। पूर्व में कहे गये जंबूद्वीप के पूर्व विदेह में सीता नदी के उत्तर की तरफ से आठ क्षेत्रों में से किसी न किसी में आज सीमंधर भगवान् विराजमान हैं। ऐसे ही सीता नदी के दक्षिण की तरफ किसी क्षेत्र में युगमंधर भगवान हैं। सीतोदा के दक्षिण की तरफ में बाहु भगवान एवं उत्तर तरफ सुबाहु भगवान विराजमान हैं ऐसे ही पूर्वधातकी खण्ड के विदेह में संजात आदि चार तीर्थंकर हैं पश्चिम धातकी खण्ड के विदेह में सूरप्रभ आदि चार तीर्थंकर हैं। पुष्करार्ध के विदेह में भद्रबाहु आदि चार तीर्थंकर एवं पश्चिम

पुष्करार्ध के विदेह क्षेत्र में वीरषेण आदि चार तीर्थंकर, ऐसे कुल मिलाकर 20 तीर्थंकर विद्यमान तीर्थंकर कहलाते हैं।

इन विद्यमान बीस तीर्थंकरों की एक पूजा है। 20 अर्घ्य हैं एवं पूर्णार्घ्य और जयमाला है। बीस तीर्थंकरों के माता-पिता के नाम तथा नगरी के नाम कवि जौहरीलाल कृत "बीस विहरमाण जिनपूजा" पुस्तक से लिये गये हैं तथा बीस तीर्थंकरों के चिन्ह आदि का वर्णन पूज्य माताजी ने अपनी डायरी से लिया है। जो किसी छपे हुए चार्ट पर आधारित है।

इन पूजन की जयमालाओं में तिलोयपण्णत्ति आदि ग्रंथों के आधार से समवसरण विभूति आदि का कहीं-कहीं वर्णन किया गया है। किन्हीं-किन्हीं जयमालाओं में भक्ति रस विशेष है। किन्हीं-किन्हीं में वैराग्यरस है, किन्हीं-किन्हीं में स्याद्वाद न्याय वर्णन है, कहीं नयों की अपेक्षा से अध्यात्मिक रस की झलक है तो कहीं सिद्धांत का मर्म प्रगट किया गया है। इन पूजाओं में पृथ्वी छंद, पंचचामर छंद, अशोकमंजरी छंद, नरेन्द्र छंद आदि छंदों के प्रयोग से अतीत लालित्य आ गया है। इसके छपने के पूर्व ही टाइप कापी से दो बार यह विधान किया जा चुका है और देखा गया कि पूजन पढ़ने वाले और सुनने वाले कुछ क्षण के लिए भक्तिरूपी गंगा में निमग्न हो जाते हैं, जिससे उन्हें अपूर्व आनंद का अनुभव आता है और वह आनंद उनके असंख्यात गुणा कर्मों की निर्जरा कर देता है। उस समय असीम पुण्य का संचय हो जाता है और आते हुए अशुभ कर्म रुक जाते हैं। इस प्रकार से इस विधान का माहात्म्य अचिन्त्य है।

अपनी साहित्यिक कृतियों में पूज्य माताजी ने पूजन विधान के क्षेत्र में अद्वितीय प्रतिभा का दिग्दर्शन कराया है। 1976 में रचे गये इन्द्रध्वज विधान ने सम्पूर्ण हिन्दुस्तान में नया अलख जगाया है। उसके पश्चात् तो पूज्य माताजी ने आचार्यों द्वारा वर्णित चारों प्रकार की पूजाओं की रचना का मानों कोई संकल्प ही ले लिया हो, क्योंकि नित्यमह पूजाओं में नवदेवता, सिद्ध आदि पूजाओं के साथ इन्द्रध्वज विधान और उसके बाद कल्पद्रुम मण्डल विधान ने भी आधुनिक चक्रवर्तियों के अस्तित्व को बतलाया है। पश्चात् वर्तमान में सर्वतोभद्र विधान, तीन लोक विधान, त्रैलोक्य विधान, श्री सिद्धचक्र विधान, विश्वशांति महावीर विधान, नंदीश्वर विधान, जिनगुणसंपत्ति विधान आदि पूज्य माताजी द्वारा रचित अनेक छोटे-बड़े विधान भगवान की भक्ति करने के लिए भक्तों को उपलब्ध हैं।

इन्हीं विधानों की शृँखला में इस तीस चौबीसी विधान को करके भक्तजन सदैव मनोवांछित फल की प्राप्ति करें, यही मंगलकामना है।

–आर्यिका चन्दनामती

विषयानुक्रमणिका

पूजा नं.	विषय	पृष्ठ सं.
	मंगलाचरण	1
1.	समुच्चय पूजन	2
2.	जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र भूतकाल तीर्थंकर पूजा	6
3.	जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंक्रर पूजा	14
4.	जम्बूद्वीप भरत क्षेत्र भविष्यकालीन तीर्थंकर पूजा	22
5.	जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	30
6.	जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	38
7.	जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यकालीन तीर्थंकर पूजा	46
8.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	54
9.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	62
10.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	71
11.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	79
12.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	88
13.	पूर्व धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	95
14.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	104
15.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	112
16.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप भरत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	120
17.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	127
18.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	135
19.	पश्चिम धातकीखण्ड द्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	142
20.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	150
21.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	158
22.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	164
23.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	171
24.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	179

पूजा नं.	विषय	पृष्ठ सं.
25.	पूर्व पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	186
26.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	193
27.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	201
28.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप भरत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	209
29.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा	217
30.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा	224
31.	पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा	232
32.	समुच्चय जयमाला	239
33.	प्रशस्ति	244
34.	विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान (लघु)	245
35.	आरती	254
36.	भजन	255
37.	तीस चौबीसी मंडल बनाने का नक्शा	256
38.	गणिनी आर्यिका श्री ज्ञानमती माताजी की पूजन	257

श्री तीस चौबीसी पूजन विधान

मंगलाचरण

नरेन्द्र छन्द

परम परंतीर्थनाथ तीर्थंकर, त्रिभुवन वंदित स्वामी ।
ज्ञान सलिल परिपूरित भविजन, कलिमल हर जगनामी ॥
त्रिभुवन के यात्रिकजन आकर, त्रिविध कर्ममल धोते ।
दुरितंजय हंसनाथ चिदंबर, नित्य निरंजन होते ॥१॥
परमानंद सुधारस पूरित, परम परंज्योति स्वामी ।
अगणित गुणमणि मंडित जिनवर, त्रिभुवन अंतर्यामी ॥
धर्म चक्राधिप धर्मधुरंधर, धर्म तीर्थ के कर्ता ।
मदनविजयि मोहारिजयी, मृत्युंजयि शिवतिय भर्ता ॥२॥
सात शतक अठरा भाषामय, खिरती जिनवर वाणी ।
दिव्य ध्वनी अमृत निर्झरणी, त्रिभुवन जन कल्याणी ॥
भविजन चातक कर्णपुटों से, पी-पीकर हरषाते ।
तृप्त हुये होते हैं होंगे, अगणित जन शिव पाके ॥३॥

दोहा

तीसों चौबीसी सकल, सात शतक जिन बीस ।
तिनकी पूजा के प्रथम, नमूं-नमूं नत शीश ॥४॥
महा महोत्सव यज्ञ यह, करें विश्व कल्याण ।
सकल विघ्नघन चूर्ण कर, धरे धर्म धन प्राण ॥५॥

इति श्रीजिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

पूजा नं० १

अथ समुच्चय पूजन

[तीस चौबीसी पूजन]

गीता छन्द

मंगलमयी सब लोक में, उत्तम शरण दाता तुम्हीं ।
वर तीस चौबीसी जिनेश्वर, सात शत औ बीस ही ॥
नर लोक में ये भूत संप्रति, भावि तीर्थंकर कहे ।
पण भरत पण ऐरावतों में, पंच कल्याणक लहे ॥१॥

दोहा आवो आवो नाथ ! अब, यहां विराजो आन ।
आह्वानन विधि से सदा, मैं पूजूं अघ हान ॥२॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् ।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं स्रग्विणी छंद

सिंधु को नीर भृंगार में लायके ।
धार देऊं प्रभो पाद में आयके ॥
तीस चौबीस तीर्थंकरों को जजूँ ।
जन्म व्याधी हरूं सर्व दुख से बचूं ॥१॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ...।

गंध सौगंध्य कर्पूर केशर मिली ।
पाद चर्चंत सम्यक्त्व कलिका खिली ॥तीस०॥२॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं....।

दुग्ध के फेन सम स्वच्छ अक्षत लिये ।
पुंज को धारते स्वात्म संपत लिये ॥तीस०॥३॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....।

केवड़ा मोगरा पुष्प अरविंद हैं ।
नाथ पद पूजते कामशर भंग है ॥तीस०॥४॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं....।

मुद्ग लाडू इमरती कनक थाल में ।
पूजते भूख व्याधी हरूं हाल में ॥तीस०॥५॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं....।

स्वर्ण के पात्र में ज्योति कर्पूर की ।
नाथ की आरती मोह को चूरती ॥तीस०॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं....।

धूप दशगंध ले अग्नि में खेवते ।
कर्म की भस्म हो नाथ पद सेवते ॥तीस०॥७॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं....।

आम अंगूर केला अनंनास ले ।
नाथ पद अर्चते मुक्तिकांता मिले ॥तीस०॥८॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं....।

नीर गंधादि वसु द्रव्य ले थाल में ।
अर्घ्य अर्पण करूं नाथ के भाल मैं ॥तीस०॥९॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांति हेत, शांती धारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

अनंत दर्शन ज्ञान औ, सुख औ वीर्य अनंत ।
अनंत गुण के तुम धनी, नमूँ नमूँ भगवंत ॥१॥

(चाल—(हे दीनबन्धु ...)

जैवंत तीर्थंकर अनंत सर्वकाल के ।
जैवंत धर्मवंत न हों वश्य काल के ॥

जै पांच भरत पांच ऐरावत में हो रहे ।
जै भूत वर्तमान औ भविष्य के कहे ॥१॥

इस जंबुद्वीप में हैं भरत और ऐरावत ।
इन दो ही क्षेत्र में सदा हो काल परावृत ॥

जो पूर्व धातकी औ अपर धातकी कहे ।
इन दोनों में भी भरत ऐरावत सदा कहे ॥२॥

वर पुष्करार्ध पूर्वअपर में भी दोय दो ।
हैं क्षेत्र भरत और ऐरावत प्रसिद्ध जो ॥

इस ढाई द्वीप में प्रधान क्षेत्र दश कहे ।
षट्काल परावर्तनों से चक्रवत रहें ॥३॥

इनके चतुर्थकाल में तीर्थेश जन्मते ।
जो भूत वर्तमान भावि काल धरंते ॥

इस विधसे तीस बार हों चौबीस जिनेश्वर ।
ये सातसौ हैं बीस कहे धर्म के ईश्वर ॥४॥

इनकी त्रिकाल बारबार वंदना करूं ।
मैं भक्तिभाव से सदैव अर्चना करूं ॥
संपूर्ण कर्मपर्वतों की खंडना करूं ।
निज 'ज्ञानमती' पाय फेर जन्म ना धरूं ॥५॥

घत्ता

जय जय तीर्थंकर, धर्मचक्रधर, भवसंकट हर तुमहिं भजूं ।
जय तीन रतनधर, निजसंपत्तिवर, अनुपमसुख को नित्य चखूं ॥६॥

ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥१॥

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० २

[चौबीसी नं० १]

जंबूद्वीप भरतक्षेत्र भूतकाल

तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीताछन्द

जंबूद्रुमांकित प्रथम जंबूद्वीप में दक्षिण दिशी ।
वर भरत क्षेत्र प्रधान तहं षट्काल वर्ते नितप्रती ॥
जहं भूतकाल चतुर्थ में चौबीस तीर्थंकर भये ।
थापूँ यहां वर भक्ति पूजन हेतु मन हर्षित भये ॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ भूतकालीन चतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ भूतकालीन चतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ भूतकालीन चतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

चाल—नंदीश्वर पूजा

जिनवचसम शीतल नीर, कंचन भृंग भरूं ।
जिनचरणांबुज में धार, दै जग द्वंद्व हरूं ॥
इस भरतक्षेत्र के भूतकालिक तीर्थंकर ।
मैं पूजूं भक्ति समेत, होऊं क्षेमंकर ॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकररेभ्यो जन्म-जरामृत्यु विनाशनाय जलं ।

जिनतनुसम सुरभित गंध, सुवरण पात्र भरूं ।
जिनचरण सरोरुह चर्चं, भव संताप हरूं ॥इस०॥२॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः संसार-ताप विनाशनाय चंदनं....।

जिनगुणसम उज्ज्वल धौत, अक्षत थाल भरे ।
जिन चरण निकट धर पुंज, अक्षय सौख्य भरें ॥इस०॥३॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतं ।

जिनयश सम सुरभित श्वेत, कुंद गुलाब लिये ।
मदनारिजयी जिनपाद, पूजूं हर्ष हिये ॥इस०॥४॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः काम-बाणविध्वंसनाय पुष्पं ...।

जिनवचनामृत सम शुद्ध, व्यंजन थाल भरे ।
परमामृततृप्त जिनेंद्र, पूजत भूख टरे ॥इस०॥५॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं ।

वर भेदज्ञानसम ज्योति, जगमग दीप लिये ।
जिनपद पूजत ही होत, ज्ञानउद्योत हिये ॥इस०॥६॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः मोहांध-कारविनाशनाय दीपं ।

दशगंध सुगंधित धूप, खेवत कर्म जरे ।
निजआतम सौरभ नित्य, दशदिश माहिं भरे ॥इस०॥७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अष्टकर्म-दहनाय धूपं ।

जिनध्वनि सम मधुर रसाल, आम अनार भले ।
जिनपद पूजत तत्काल, फल सर्वोच्च मिले ॥इस०॥७॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफल-प्राप्तये फलं....।

जल चंदन अक्षत पुष्प, नेवज दीप लिया ।
वर धूप फलों से युक्त, अर्घ्य समर्प्य किया ॥इस०॥९॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांती कर सदा ।
चउसंघशांती हेतु, शांतीधारा मैं करूं ॥
शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

पंचकल्याणक के धनी, तीर्थंकर चौबीस ।
अर्चन हित पुष्पांजलि, करूं नवाऊं शीश ॥१॥

इति मंडलोस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अडिल्ल छन्द

कर्मनाश निर्वाण महालक्ष्मी वरी ।
तीर्थंकर 'निर्वाण' सौख्य अमृत झरी ॥
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय चित्तहरषाय के ।
तिरूं भवाम्बुधि भक्ती नौका पाय के ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाणजिनेंद्राय अर्घ्यं ··· ।

भवसागर तिरकर भी 'सागर' सिद्ध हैं ।
मुनिगण वंदे नितप्रति हर्ष समृद्ध हैं ॥पूजूँ०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सागरजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

महासाधु मिल नित्य प्रभू वंदन करें ।
ऐसे 'महासाधु' जिनवर भव दुख हरें ।।पूजूँ०।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महासाधुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

त्रिविधकर्म मल नाश बिमल पद पा लिये ।
तीर्थंकर 'विमलप्रभ' को नित वँदिये ।।पूजूँ०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

लक्ष्मी अन्तर बाह्य उभय से शोभते ।
'श्रीधर' वर जिनराज भविक मन मोहते ।।पूजूँ०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धरजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

मोक्षगतीप्रद श्री 'सुदत्त' जिनराज हैं ।
मुनिगण गणधर बँदित जग सिरताज हैं ।।पूजूँ०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मोक्ष महल है अमल कांतिधर सोहता ।
श्री जिनेश 'अमलप्रभ' से मन मोहता ।।पूजूँ०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमलप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

भव्य जनों का नित करते उद्धार जो ।
'उद्धर' जिनको जजूं भवोदधि पार जो ।।पूजूँ०।।८।।

ॐ अर्हं श्री उद्धरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'अंगिर' जिनवर भव भव दुख से दूर हैं ।
भवि भव अग्नी शमन हेतु जलपूर हैं ।।पूजूँ०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अंगिरजिनेंद्राय अर्घ्यं... ।

'सन्मति' जिनवर जग को सन्मति दे रहे ।
निज भक्तों की नौका भव से खे रहे ।।पूजूँ०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सन्मतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'सिंधु' जिनेश्वर गुणसिंधू जग में कहे।
जो पूजें सो स्वात्मसुधा बिंदू लहें ॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय चित्त हरषाय के।
तिरूं भवाम्बुधि भक्तो नौका पाय के ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिंधुजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'कुसुमांजलि' जिननाथ भविकजन दुःख हरें।
भक्ति कुसुम अँजलि से जन अर्चन करें ॥पूजूँ०॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुसुमांजलिजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

शिवसुखभर्ता 'शिवगण' जिनवर लोक में।
शिवसुख साधन हेतु जजें जन धोक दें ॥पूजूँ०॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री शिवगणजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'उत्साह' जिनेश्वर गुण रत्नों भरे।
निजसुख के उत्साही जन पूजन करें ॥पूजूँ०॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्साहजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

प्रभु 'ज्ञानेश्वर' पूर्ण ज्ञान के नाथ हैं।
जो पूजें धर प्रीति बनें सनाथ हैं ॥पूजूँ०॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

परमपिता 'परमेश्वर' त्रिभुवन ईश हैं।
गणधर भी नित नमें नमावें शीश हैं ॥पूजूँ०॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'विमलेश्वर' तीर्थंकर को जो पूजते।
उन आतम से सकल कर्ममल छूटते ॥पूजूँ०॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनकी यशबल्ली तिहुंजग में विस्तरी।
नाथ 'यशोधर' को मैं वंदूँ शुभघरी ॥पूजूँ०॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री यशोधरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'कृष्ण' जिनेश्वर कृत्स्न कर्म को चूर के ।
पहुंचे शिवपुर धाम सर्वगुण पूर के ।।पूजूँ०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृष्णजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

तीर्थंकर का नाम 'ज्ञानमति' जानिये ।
उनको पूजत ज्ञान अतीन्द्रिय ठानिये ।।पूजूँ०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'शुद्धमति' तीर्थंकर भवमल हरें ।
उनको पूजत शुद्ध स्वात्म संपति वरें ।।पूजूँ०।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुद्धमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जो भव्यों का भद्र करें करुणा लिये ।
परमकारुणिक 'श्रीभद्र' सब के लिये ।।पूजूँ०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

सब दोषों को उलंघ नाम 'अतिक्रांत' है ।
मृत्युमल्लहर मुक्तिवल्लभाक्रांत हैं ।।पूजूँ०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतिक्रांतजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

कर्म शांत कर परम शांति को पा लिये ।
'शांत' जिनेश्वर शांति करो सब के लिये ।।पूजूँ०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शांतजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

गीता छन्द

निर्वाण आदी शांत तीर्थंकर सुअंतिम जानिये ।
पूर्णार्घ्य ले चौबीस जिनकी अर्चना विधि ठानिये ।।
जो भक्ति श्रद्धा भाव से, तीर्थेश का अर्चन करें ।
वे पुनर्भव को दूर कर, निज आत्म का दर्शन करें ।।२५।।

ॐ ह्रीं निर्वाणादिशांतजिनपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांती हेतु, शांती धारा मैं करूं ॥
शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

अनंग शेखर छंद

जयो जिनेंद्र ! आपके महान दिव्य ज्ञान में,
त्रिलोक औ त्रिकाल एक साथ भासते रहें ।
जयो जिनेंद्र ! आपका अपूर्व तेज देख के,
असंख्य सूर्य और चंद्रमा भी लाजते रहें ॥

जयो जिनेंद्र ! आपकी ध्वनी अनच्छरी खिरे,
तथापि संख्य भाषियों को बोध है करा रही ।
जयो जिनेंद्र ! आपका अचिन्त्य ये माहात्म्य देख,
भक्ति से प्रजा समस्त आप आप आ रही ॥१॥

जिनेश ! आपकी सभा असंख्य जीव से भरी,
अनंत वैभवों समेत भव्य चित्त मोहती ।
जिनेश ! आपके समीप साधू वृन्द और गणीन्द्र,
केवली मुनीन्द्र और आर्यिकायें शोभतीं ॥

सुरेंद्र देवियों की टोलियां असंख्य आ रहीं,
खगेश्वरों की पंक्तियां अनेक गीत गा रहीं।
सुभूमि गोचरी मनुष्य नारियां तमाम हैं,
पशू तथैव पक्षियों की टोलियां भी आ रहीं ॥२॥

सुबारहों सभा विषे स्वकीय ही स्वकीय में,
असँख्य भव्य बैठ के जिनेश देशना सुनें।
सुतत्त्व सात नौ पदार्थ पांच अस्तिकाय और,
द्रव्य छह स्वरूप को भले प्रकार से गुनें।
निजात्म तत्त्व को सँभाल तीन रत्न से निहाल,
बार बार भक्ति से मुनीश हाथ जोड़ते।
अनन्त सौख्य में निमित्त आपको विचार के,
अनन्त दुःख हेतु जान कर्मबन्ध तोड़ते ॥३॥

स्वमोह बेल को उखाड़ मृत्यु मल्ल को पछाड़,
मुक्ति अँगना निमित्त लोक शीश जा बसें।
प्रसाद से हि आपके अनँत भव्य जीव राशि,
आपके समान होय आप पास आ लसें।
असँख्य जीव मात्र दृष्टि समीचीन पाय के,
अनन्त काल रूप पँच परावर्त मेटते।
सुभक्ति के प्रभाव से असँख्य कर्म निर्जरा,
करें अनन्त शुद्धि से निजात्म सौख्य सेवते ॥४॥

दोहा

नाथ ! आप गुण सिंधु हैं, को कहि पावे पार।
'ज्ञानमति' दुःख मेट के, करो भवांबुधि पार ॥५॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबन्धि भरतक्षेत्रस्थ भूतकालीन चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व ।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वाद :

卐◆◆卐

पूजा नं० ३

चौबीसी नं० २

जंबूद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीताछंद

वृषभादि चौबिस तीर्थंकर इस भरत के विख्यात हैं।
जो प्रथित जँबूद्वीप के सँप्रति जिनेश्वर ख्यात हैं ॥
इन तीर्थंकर के तीर्थ में सम्यक्त्व निधि को पायके।
थापूँ यहां पूजन निमित अति चित्त में हरषाय के ॥१॥

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर-समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—स्रग्विणी छन्द

देवगंगा सलिल स्वर्ण झारी भरूँ ।
नाथ पादाब्ज में तीन धारा करूँ ।।
श्री वृषभ आदि चौबीस जिनराज को ।
पूजते ही लहूँ स्वात्म साम्राज्य को ।।१।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

गँध केशर घिसा के कटोरी भरूँ ।
आपके पाद पँकज समर्चन करूँ ।।श्री वृषभ०।।२।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

चँद्र की चांदनी सम धवल शालि हैं ।
जो जजें पुंज से वे सुकृत-शालि हैं ।।श्री वृषभ०।।३।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

कुँद मचकुंद बेला चमेली लिये ।
कामहर नाथ पद में समर्पित किये ।।श्री वृषभ०।।४।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं....।

पूरिका लड्डुओं से भरूँ थाल मैं !
पूजहूँ आपको क्षुध् व्यथा नाशने ।।श्री वृषभ०।।५।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ..।

दीप कर्पूर की ज्योति से पूजते ।
ज्ञान उद्योत हो मोह अरि छूटते ।।श्री वृषभ०।।६।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं....।

धूप दशगँध ले अग्नि में खेवते ।
आत्म सौरभ उठे नाथ पद सेवते ।।
श्री वृषभ आदि चौबीस जिनराज को ।
पूजते ही लहूँ स्वात्म साम्राज्य कों ।।७।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं....।

आम अंगूर केला अनंनास ले ।
नाथ पद पूजते मुक्ति सँपति मिले ।।श्री वृषभ०।।८।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं....।

तोय गँधादि वसु द्रव्य ले थाल में ।
अर्घ्य अर्पण करूँ नायके भाल मैं ।।श्री वृषभ०।।९।।

ॐ ह्रीं जंबूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतिकर सदा ।
चउसँघ शांती हेतु, शांतीधारा मैं करूँ ।।
शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ।।
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

शुद्ध बुद्ध परमात्मा, पाया ज्ञान प्रभात ।
परमानँद निजात्म में, मग्न रहें दिन रात ।।१।।

इति मंडलोस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेन्द्र छन्द—(चाल—परं परंज्योति कोटि चंद्रादित्य····)

'वृषभ देव' के चरण कमल को, नित शत इँद्र जजें हैं ।
कर्मकालिमा दूर भगा कर, स्वातम तत्त्व भजे हैं ॥
मैं भी दृढ़ भक्ती से पूजूं, कर्म शृँखला टूटे ।
प्रभु मुक्ती होने तक मेरा, सम्यक् रत्न न छूटे ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभजिनेंद्राय अर्घ्यं ·· ।

कर्म शत्रु को जीत 'अजित' जिन, जग में ख्यात हुये हैं ।
नाथ आपका आश्रय लेकर बहुजन पार हुये हैं ॥मैं०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअजितजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

दृढ़ पुरुषार्थ सफल कर तुमने, भवभय नाश किया है ।
इसीलिये इँद्रों ने सार्थक, 'सँभव' नाम दिया है ॥मैं०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसंभवजिनेंद्राय अर्घ्यं ·· ।

सब जग को आनँदित करने, 'अभिनंदन' भगवंता ।
जो जन ध्यावें हृदय कमल में, भवभय व्याधि हरंता ॥मैं०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअभिनंदनजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

कुमति त्याग कर सुमतिवरण कर, 'सुमति' नाम प्रभु पाया ।
मुझको भी सुमती दीजे अब, मैं जग से अकुलाया ॥मैं०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुमतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

मुक्तीपद्मा से आलिंगित, 'पद्मप्रभु' जग नामी ।
जो जन पादपद्म तुम सेते, होते शिवश्री स्वामी ॥मैं०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपद्मप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'सुपार्श्व' के पास आय के, मिटे सकल जग फिरना ।
प्रभो आप वच नाव पाय के, होय भवोदधि तिरना ॥मैं०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसुपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

'चन्द्रनाथ' तुम आस्य चन्द्र से, वचनामृत झरता है ।
कर्णपुटों से पीते ही तो, हर्षाम्बुधि बढ़ता है ॥मैं०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीचन्द्रप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

गणधर गण भी प्रभु गुण पाकर, पार नहीं पाते हैं।
'पुष्पदंत' तुम नाम मात्र से, निज आनन्द पाते हैं॥
मैं भी दृढ़ भक्ती से पूजूँ, कर्म शृँखला टूटे।
प्रभु मुक्ती होने तक मेरा, सम्यक् रत्न न छूटे॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपुष्पदंतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मोह अग्नि से झुलस रहा जग, 'शीतल' शीतल करिये।
नाथ! शीघ्र ही भाक्तिक जन की, सकल भरम बुधि हरिये॥मैं०।१०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशीतलजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'श्रेयांस' जगत में सबको, श्रेयस्कर हितकारी।
इन्द्र नरेन्द्र सभी मिल पूजें, गुण गावें रुचि धारी॥मैं०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीश्रेयोजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'वासुपूज्य' वासवगण पूजित, वसुगुण मुख्य धरे हैं।
सुर किन्नरियां वीणा लेके, प्रभु गुणगान करे हैं॥मैं०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

भावकर्ममल द्रव्य कर्ममल, धोकर 'विमल' हुये हैं।
विमल धाम हेतु मुनिगण भी, तुम पदलीन हुये हैं॥मैं०॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीविमलजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

भव 'अनंत' को सर्वनाश कर, नाथ अनंत सुखी हैं।
तुम पद पंकज जो भवि पूजे, होते पूर्ण सुखी हैं॥मैं०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअनंतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

धर्म चक्रधर 'धर्म' जिनेश्वर, दशविध धर्म प्रदाता।
मुनिगण सुरगण विद्याधर गण, वंदत पावें साता॥मैं०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीधर्मनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'शांतिनाथ' तुम पद आश्रय ले, भविजन शांती पाते।
इसी हेतु जग से अकुला कर, तुम शरणागत आते॥मैं०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीशांतिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

चिच्चैतन्य सुधारस दाता, 'कुंथुनाथ' भगवंता ।
जो तुम वंदे भवदुख खंडे, चित्सुख आस धरंता ।।मैं०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीकुंथुनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'अरजिनवर' का वंदन करके, सुरनर पुण्य कमाते ।
निज कर में निजगुण सँपति ले, सब दुख दोष गँवाते ।।मैं०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीअरनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

काम मल्ल औ मोह मल्ल को, मृत्यु मल्ल को चूरा ।
'मल्लिनाथ' ने भक्तजनों के, मनवांछित को पूरा ।।मैं०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमल्लिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'मुनिसुव्रत' भगवान् स्वयं में, मुनिव्रत धर भवजीता ।
उनके पद चिह्नों पर चलके, अगणित ने यम जीता ।।मैं०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमुनिसुव्रतजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

रत्नत्रय निधि के स्वामी हैं, 'नमि' तीर्थंकर जग में ।
फिर भी सर्व परिग्रह विरहित, मुद्रा नग्न प्रगट में ।।मैं०।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'नेमिनाथ' ने राजमती तज, मुक्तिवल्लभा चाही ।
सरस्वती माता ने उनकी, अनुपम कीर्ती गाई ।।मैं०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीनेमिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

कमठ दैत्य के उपसर्गों से, परम सहिष्णु कहाये ।
'पारस' नाम मँत्र मन धारें, सहन शक्ति वे पायें ।।मैं०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीपार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'वर्धमान' अतिवीर वीर प्रभु, सन्मति नाम तुम्हारे ।
महावीर प्रभु को जो वंदे, सकल अमँगल टारें ।।मैं०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीमहावीरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य

वृषभदेव को आदि ले, महावीर पर्यंन्त ।
श्री चौबीस जिनेश को, पूजत हो भव अंत ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभादिवर्धमानांतेभ्य: पूर्णार्घ्यं ।
शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलि: ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नम:

जयमाला

दोहा

चिन्मय चिंतामणि रतन, तीन भुवन के ईश ।
गाऊँ तुम जयमालिका, नमूँ नमूँ नत शीश ॥

पृथ्वी छन्द

जिनेंद्र ! तुम शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अविकार हो ।
जिनेंद्र ! तुम वर्णहीन बिनमूर्ति साकार हो ॥
निराभरण हो तथापि जग के अलंकार हो ।
अगँतगुण पुंजभूत फिर भी निराकार हो ॥१॥

अनंत शुचिदर्श से सकल लोक अवलोकते ।
अनंत वर ज्ञान से सकल भव्य संबोधते ॥
अनँत निज शक्ति से श्रम न हो कदाचित् तुम्हें ।
अनँत वर सौख्य से अमित काल तृप्ती तुम्हें ॥२॥

न चक्षु न हि कर्ण घ्राण न हि स्पर्शनेंद्रिय तुम्हें ।
न जीभ अतएव जिन अतीन्द्रिय स्वसुख तुम्हें ॥
न शब्द रस गँध वर्ण विषयादि स्पर्श ना ।
न क्रोध मद छद्म लोभ रति द्वेष सँघर्ष ना ॥३॥

न कर्म नोकर्म नाथ न हि भाव कर्मादि हैं ।
न बँध न हि आस्रवादि नहि शल्य बाधादि हैं ॥
न रोग शोकादि नाथ न हि जन्म मरणादि हैं ।
न क्लेश न हि इष्ट निष्ट वीयोग योगादि हैं ॥४॥
स्वयं परम तृप्त नाथ परमैक परमातमा ।
स्वयं स्वयंभू स्वतः सुख स्वरूप सिद्धातमा ॥
अमूर्तिक विभो तथापि चिनमूर्ति चिंतामणी ।
अपूर्व तुम कल्पवृक्ष त्रैलोक्य चूड़ामणी ॥५॥
अनंत भव सिंधु से तुरत नाथ ! तारो मुझे ।
अनंत दुःख अब्धि से जिनपते ! उबारो मुझे ॥
प्रभो मुझ समस्त दोष अब तो क्षमा कीजिये ।
स्व 'ज्ञानमति' नाथ शीघ्र करके कृपा दीजिये ॥६॥

घत्ता

वृषभादि जिनेश्वर, मुक्तिवधूवर,
सुखसंपतिकर तुमहिं नमूँ ।
निज आतम शुचिकर, सम्यक् निधिधर,
फेर न भव वन बीच भ्रमूँ ॥७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि भरतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ४

[चौबीसी नं० ३]

जम्बूद्वीप भरतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीताछंद

इस भरत क्षेत्र विषे जिनेश्वर भविष्यत में होयंगे ।
उनके निकट में भव्य अगणित कर्मपंकिल धोयंगे ॥
चौबीस तीर्थंकर सतत वे विश्व में मंगल करें ।
मैं पूजहूँ आह्वान कर मुझ सर्वसंकट परिहरें ॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम् ।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—चामरछंद

सिंधुनीर स्वच्छ स्वर्ण भृंग में भराइये ।
श्री जिनेंद्रदेव पाद पद्म में चढ़ाइये ॥
भाविकाल के जिनेन्द्रदेव की समर्चना ।
जो करेंगे वे यहां कभी धरेंगे जन्म ना ॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं—।

अष्टगंध लेय नाथ पाद में चढ़ाइये ।
मोहताप शांति हेतु भक्ति को बढ़ाइये ॥भावि०॥२॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं ।

चंद्ररश्मि के समान धौत शालि थाल में ।
नाथ अग्र पुंज देय सर्व सौख्य हाल में ॥भावि०॥३॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ...।

पारिजात चंपकादि पुष्प लेय पूजिये ।
काममल्ल चूर के निजात्म तृप्त हूजिये ॥भावि०'।४॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरभ्यो पुष्पं ...।

मालपूप मोदकादि व्यंजनादि लाइये ।
नाथ चरण पूज भूख व्याधि को नशाइये ॥भावि०॥५॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ।

स्वर्ण पात्र में कपूर ज्वाल आरती करूं ।
मोहध्वांत नाश भेदज्ञान भारती वरूं ॥भावि०॥६॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो दीपं....।

अग्निपात्र में सुगन्ध धूप खेवते सदा ।
कर्मपुंज को जलाय पाऊं स्वात्म संपदा ॥भावि०॥७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो धपं ...।

द्राक्ष आम औ बदाम श्रीफलादि लाइये ।
स्वात्मसौख्यपानहेतु आपको चढ़ाइये ॥भावि०॥८॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वापसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभ.ष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो फलं ...।

तोयगंध अक्षतादि अष्ट द्रव्य लाइये ।
अर्घ्य को चढ़ायके अखंड सौख्य पाइये ॥भावि०॥९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर्रासिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्यं

दोहा

तीर्थंकर चौबीस ये, सर्वोत्तम गुणवान ।
पुष्पांजलि अर्पण करूं पूजन हेतु प्रधान ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

गीता छन्द

'श्री महापद्म' जिनेंद्र के, पद पद्म को जो पूजते ।
जगद्वंद फंद निमूल कर, वे सर्व दुख से छूटते ॥
भावी जिनेश्वरदेव की मैं, भक्ति से पूजा करूं ।
नवलब्धिसिद्धीहेतु प्रभु की, चित्त में श्रद्धा धरूं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महापद्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'सुरदेव' तीर्थंकर सभी के, पापमल को धोवते ।
जो नित्य ही उनको जपें, वे सर्व व्याधी खोवते ॥भावी०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुरदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

जिनवर 'सुपार्श्व' अपूर्व भास्कर, हृदय का तमनाशते ।
उनके अलौकिक ज्ञान में, तीनों भुवन ही भासते ॥भावी०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्रीमन् 'स्वयंप्रभ' देव अक्षय, अतुल निधि के नाथ हैं ।
जो भक्ति से आराधते वे, सत्यमेव सनाथ हैं ।।भावी०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वयंप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'सर्वात्मभूत' जिनेंद्र के, पदकमल की आराधना ।
गणधर मुनीश्वर नित करें, बस स्वात्महेतू साधना ।।भावी०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वात्मभूतजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'देवपुत्र' जिनेंद्र भावी, को सभी जन पूजते ।
जो ध्यान में धारें उन्हीं, के कर्मशत्रू धूजते ।।भावी०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवपुत्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

तीर्थेश श्री 'कुलपुत्र' त्रिभुवन, के शिखामणि होयंगे ।
जो भव्य नित आराधते, वे सर्वसंकट खोयंगे ।।भावी०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुलपुत्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'उदंक' अनंत गुण मणि, रत्न भूषित होयंगे ।
भवि के अनंतानंत दुःखों, को तुरंत ही धोयंगे ।।भावी०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उदंकजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्रीमान 'प्रौष्ठिल' तीर्थभर्ता, धर्म के कर्ता कहे ।
उनके चरण को पूजते, यमराज दुखहर्ता भये ।।भावी०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रौष्ठिलजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'जयकीर्ति' की जय बोलिये, सब कर्म ढीले होयंगे ।
जो नाम जिनवर का न लें, चिरकाल दुःख में सोयंगे ।।भावी०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयकीर्तिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनदेव 'मुनिसुव्रत' तुम्हारी, भक्ति चिंतामणि कही ।
जो मांगते हैं भक्तजन, तत्काल फल देवो वही ।।भावी०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिसुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'अरनाथ' तीर्थंकर तुम्हें, वंदन करें शतइंद्र भी ।
किन्नर मधुर ध्वनि से सदा, गुणगान उच्चरते सभी ॥
भावी जिनेश्वरदेव की मैं, भक्ति से पूजा करूं ।
नवलब्धिसिद्धीहेतु प्रभु की, चित्त में श्रद्धा धरूं ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'निष्पापजिन' निज भक्त को, निष्पाप कर देते अभी ।
होंगे यदपि ये भविष में, पर दुःख सब हरते अभी ॥भावी०॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निष्पापजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

बस ये कषायें ही जगत में, सर्व को दुःख दे रहीं ।
जो 'निष्कषाय' जिनेन्द्र हैं, वे धन्य हैं जग में सही ॥भावी०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निष्कषायजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

जिनवर 'विपुल' भगवान सबके, पूज्य माने विश्व में ।
जो अर्चते हैं भक्ति से, वे धन्य होते विश्व में ॥भावी०॥ १५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विपुलजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

जिनराज 'निर्मल' आपकी, पूजा करम को चूरती ।
आराधकों के मनोवांछित, को तुरत ही पूरती ॥भावी०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्मलजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'चित्रगुप्त' जिनेंद्र के, पद में सुरेश्वर नित नमें ।
देवांगनायें भक्ति से, नर्तन करें सुर संग में ॥भावी०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चित्रगुप्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

जिनवर 'समाधिगुप्त' के पदकंज की आराधना ।
आराधकों के लिए सचमुच, मुक्ति की ही साधना ॥भावी०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समाधिगुप्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्रीमन् 'स्वयंभू' तीर्थकर, स्वमेव मुक्ती पायेंगे ।
उन साथ में उनके उपासक, भी वहीं पर जायेंगे ॥भावी०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वयंभूजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

जिनराज 'अनिवर्तक' सकलगुण शील के भंडार हैं।
जो भव्य श्रद्धा से जजें, होते भवोदधि पार हैं ॥भावी०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनिवर्तकजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्रीमान् 'जय' तीर्थेश जयशाली महापुण्यात्मा ।
वे शुद्ध बुद्ध अपूर्व अनुपम, औ अमल परमात्मा ॥भावी०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

जिनवर 'विमल' निज आत्म समरसमय सुधारस को पियें ।
वे फिर अनंतानंत अनवधिकाल तक सुख से जियें ॥भावी०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'देवपाल' जिनेश के गुण, गण अमल जो गावते ।
वे तीन जग में कीर्ति बल्ली, व्याप्तकर शिव पावते ॥भावी०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवपालजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

निजनाम से इस लोक में, सु 'अनंतवीर्य' विख्यात हैं ।
उन नाम से हि अनंत शक्ती, प्रगट हो यह ख्यात है ॥
भावी०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतवीर्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य—दोहा

भरतक्षेत्र चौबीस जिन, होंगे धर्मधुरीण ।
पूरण अर्घ्य चढ़ाय के, होऊं धर्म प्रवीण ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महापद्मअनंतवीर्यादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

दोहा

चौबीसों जिनराजवर, कल्पवृक्ष सम आप ।
भुक्ति मुक्ति फल देयकर, हरो सकल संताप ॥५॥

रोला छन्द

अहो भुवन के सूर्य ! लोकालोक प्रकाशी ।
अहो अखिल भुविचंद्र! जन मन कुमुद विकाशी ।।
अहो त्रिजग के ईश ! भविजन दुःख विनाशी ।
अहो जगत्पति देव ! मुनि मन कमल विकाशी ।।१।।
तरु अशोक तुम नाथ ! सब जन शोक हरे हैं ।
मरकत मणिमय पत्र, नाना वर्ण धरे हैं ।।
पद्मराग मणि तुल्य, कोपल पुष्प घनेरे ।
अनुपम वृक्ष महान, प्रातिहार्य प्रभु तेरे ।।२।।
बहुविध वर्ण प्रसून, कल्पतरु से लाते ।
नित प्रति भक्ति समेत, सुमन सुमन वर्षाते ।।
नाना वर्ण विचित्र, रत्न जटित विष्टर[1] है ।
ऐसा वैभव पाय फिर भी आप अधर हैं ।।३।।
निर्झर जल सम श्वेत, चौंसठ चमर ढुरावें ।
यक्षसुरों के युग्म, बहुविध पुण्य उपावें ।।
मुक्ताफल लटकंत, अनुपम मणिमय सोहें ।
तीन छत्र भगवंत, के सब जन मन मोहें ।।४।।
भामंडल की कांति, चहुंदिश दीप्ति करे हैं ।
भविजन के भव सात, उसमें दीख पड़े हैं ।।
दुंदुभि बाजें नित्य, बजते कर्ण सुहावें ।
भव्य जनों को नित्य, जिनवर पास बुलावें ।।५।।
दिव्यध्वनी तुम नाथ, अमृत की निर्झरणी ।
जो जन पीते नित्य, वे तरते वैतरणी ।।
सात सौ अठरा संख्य, भाषा मय वाणी है ।
अथवा संख्यातीत, रूप सुकल्याणी है ।।६।।

१. सिंहासन ।

प्रातिहार्य ये आठ, तीर्थंकर के मानें।
इनका नाम समस्त, जन-जन के दुख हाने ॥
मैं प्रभु एक अबोध, तुम गुण सिंधु अनंता।
कहि न सकूँ लवलेश, तुम गुण हे भगवंता ॥७॥
फिर भी भक्ति जिनेश! मन में उमड़ रही है।
इसी हेतु हे नाथ! तुम गुण कीर्ति कही है ॥
यही एक है चाह, अब ऐसा कर दीजे।
'ज्ञानमती' हो पूर्ण, गर्भवास दुःख छीजे ॥८॥

दोहा

इक इच्छा पूरी करो, यही मात्र जिनराज।
फेर नहीं मांगू कभी, हे जग के शिरताज ॥९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थं-करेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं -।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० ५

[चौबीसी नं० ४]

जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—शंभु छन्द

वर जंबूद्वीप प्रथम इसमें, है क्षेत्र सातवां मन मोहे।
ऐरावत क्षेत्र उसे जानो, सुरगिरि के उत्तर दिश सोहे॥
छहकाल परावर्तन इसमें, चौथे में तीर्थंकर होते।
जिनवर अतीत का आह्वानन, करके पूजन हम मल धोते॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—भुजंगप्रयात छंद

पयोराशि का नीर प्रासुक भराऊँ।
प्रभो पाद पंकेज में मैं चढ़ाऊँ॥
जजूँ नित्य चौबीस तीर्थंकरों को।
भजूँ नित्य आनन्द शुद्धात्मनी को॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ...।

सुगंधीत चंदन घिसा भर कटोरी।
प्रभो पाद चर्चूं कटे कर्मडोरी॥जजूँ०॥२॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... चंदनं ..।

भरे थाल में धोय अक्षत अखंडे ।
चढ़ाऊँ तुम्हें पुंज पापारि खंडे ।।जजूँ०।।३।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अक्षतं ...।

चमेली जुही केतकी पुष्प लाऊँ ।
जितेंद्रिय प्रभू के चरण में चढ़ाऊँ ।।जजूँ०।।४।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं ....।

कलाकंद लाडू इमरती मंगाऊँ ।
क्षुधारोग हर्ता प्रभु को चढ़ाऊँ ।।जजूँ०।।५।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ...।

जले ज्योति कर्पूर की ध्वांत नाशे ।
तुम्हें दीप से पूजते ज्ञान भासे ।।जजूँ०।।६।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ....दीपं ....।

अगुरु श्वेत चंदन मिली धूप खेऊँ ।
उड़ा कर्म की भस्म तुम पाद सेऊँ ।।जजूँ०।।७।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं ...।

अनंनास अंगूर नींबू मंगाऊँ ।
प्रभो मुक्ति हेतू तुम्हें मैं चढ़ाऊँ ।।जजूँ०।।८।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... फलं ...।

भरे थाल में नीर गंधादि सुन्दर ।
चढ़ाऊँ तुम्हें ना मिले फिर भवांतर ॥
जजूँ नित्य चौबीस तीर्थंकरों को ।
भजूँ नित्य आनंद शुद्धात्मनी को ॥९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो.....अर्घ्यं ..।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

सोरठा

परमानंद स्वरूप, परम ज्योति परमात्मा ।
परम दिगंबर रूप, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

चौपाई

'पंचरूप' जिनराज महान्, धर्मतीर्थंकर सुख की खान ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचरूपजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'जिनधर' तीर्थेश अनूप, पाया शुद्ध निरंजन रूप ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'सांप्रतिकं' शुभनाम, मनवचतन से करूँ प्रणाम ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सांप्रतिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ·।

जिनवर 'ऊर्जयंत' गुणखान, करते स्वात्मसुधारस पान ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऊर्जयंतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'आधिक्षायिक' जिनराज, भवदधि तारणतरण जिहाज ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आधिक्षायिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'अभिनंदन' जग के ईश, नित शतइंद्र नमावें शीश ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभिनन्दनजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

जिनवर 'रत्नसेन' अभिराम, पुरुष चिदंवर भुवन ललाम ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रत्नसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'रामेश्वर' गुण आधार, मूर्ति रहित फिर भी साकार ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रामेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अनंगोज्झित' जिननाथ, वंदन करूं नमाकर माथ ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंगोज्झितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··।

तीर्थंकर 'विन्यास' जिनेश, भक्तजनों के हरें कलेश ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विन्यासजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

जिन 'अरोष' को पूजें भव्य, जीत कषाय बनें कृतकृत्य ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरोषजिनेन्द्राय अर्घ्यं—।

श्री 'सुविधान' महासुखतृप्त, पूजत भविजन हों संतृप्त ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुविधानजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर श्री 'प्रदत्त' गुणपूर, किया कर्म गिरि चकनाचूर ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'कुमार' तीर्थंकर नाथ, मुक्तिवल्लभा किया सनाथ ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुमारजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'सर्वशैल' जिनराज महान, गुणरत्नाकर सर्वप्रधान ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वशैलजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'प्रभंजन' कर्म विडार, भविजन हेतू सुख भंडार ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभंजनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सौभाग्यनाथ' तीर्थेश, ब्रह्मा विष्णु बुद्ध परमेश ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सौभाग्यनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'व्रतविंदु' जिनेश्वर आप, व्रत दे सब जन करो अपाप ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्रतविंदुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

देव 'सिद्धिकर' सिद्धस्वरूप, आत्मसुधारस तृप्त अनूप ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'ज्ञान शरीर' जिनेश्वर आप, मुनिगण का हरते भवताप ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्ञानशरीरजिनेन्द्राय अघ्य....।

श्री 'कल्पद्रुम' जिनवरदेव, ईप्सित फल देते स्वयमेव ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कल्पद्रुमजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'तीर्थफलेश' महेश, मुनिगण सुरगण नमें हमेश ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तीर्थफलेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'दिनकर' अद्भुत भास्वान्, हरते भविजन मन अज्ञान ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दिनकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर श्री 'वीरप्रभ' देव, सुरनर करें तुम्हारी सेव ।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ आज, पाऊँ अनुपम सुख साम्राज्य ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीरप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

ऐरावत के तीर्थंकर, भूतकाल के सिद्ध ।
पूर्ण अर्घ्य चढ़ायके, लहूँ रिद्धि नव निद्ध ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचरूपादिवीरप्रभपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

दोहा

तीन लोक त्रयकाल सब, इक नक्षत्र समान ।
झलके प्रभु तुम ज्ञान में, नमूँ नमूँ गुण खान ॥१॥

नरेन्द्र छन्द

ज्ञानावरण करम प्रभु नाशा, केवलज्ञान प्रकाशा ।
लोकालोक प्रकाशी जिनवर, सकल पदारथ भासा ॥
प्रभु सर्वज्ञ अतीन्द्रिय ज्ञानी, जिन अर्हंत हितैषी ।
समवसरण में बारह गण को, नित हित के उपदेशी ॥१॥

मीमांसक इक संप्रदाय है, जो सर्वज्ञ न मानें ।
वेदशास्त्र से ही योगी का, ज्ञान अतीन्द्रिय मानें ॥
जो प्रत्यक्ष प्रमाण और, अनुमान तथा आगम से ।
गम्य नहीं है अर्थापत्ति, औ अभाव पांचों से ॥२॥

इसीलिये इस जग में कोई, नर सर्वज्ञ नहीं है ।
अपौरुषेय वेद से ही सब, वस्तु प्रत्यक्ष कही हैं ॥
नहीं कभी इस जग में कोई, कर्म मैल धो सकता ।
परमपुरुष कोई आत्मा, सर्वज्ञ नहीं हो सकता ॥३॥

जैनाचार्य कथन अब सुनिये, मीमांसक चित लाके ।
तुमने क्या तीनों जग देखा, सभी जगह जा जाके ॥
भूत भविष्यत के अनंत, समयों को भी क्या देखा ।
जो तुमने सर्वज्ञ नास्ति का, निर्णय लिया न पेखा ॥४॥

यदि तुमने त्रैलोक्य कालत्रय, सूक्ष्म विलोक लिया है ।
तो भाई सर्वज्ञ तुम्हीं हो, तुम सब जान लिया है ॥
यदि नहीं देखा त्रिभुवन को औ, तीन काल को तुमने ।
फिर कैसे कह सकते हो तुम, नहिं सर्वज्ञ जगत में ॥५॥

तथा कोई भी इंद्रिय द्वारा, वर्तमान ही जानें ।
भूत भविष्यत की वस्तू को, नहीं कदाचित् जानें ॥
औ इंद्रिय की विषयभूत, सीमित वस्तू ही समझे ।
नहीं अनंत असीमित वस्तू, चक्षु ज्ञान में झलके ॥६॥

इसीलिये कोई इंद्रिय, ज्ञानी सूक्ष्मादि न जाने ।
वेद यदी हैं अपौरुषेय तो, वे स्वछंद मनमाने ॥
सूक्ष्म अंतरित दूरवर्ति सब, वस्तू के जो ज्ञाता ।
भूत भविष्यत् वर्तमान की, सब गुण पर्यय ज्ञाता ॥७॥
तीन लोक के सकल पदारथ, युगपत देखें जानें ।
वे सर्वज्ञ अतीन्द्रिय दृष्टा, त्रिभुवन के गुरु मानें ॥
कर्म कलंक रहित वे आत्मा, नित्य निरंजन सिद्धा ।
केवल 'ज्ञानमती' लक्ष्मी से, मुझको करें समृद्धा ॥८॥

दोहा

परम अतीन्द्रिय ज्ञान सुख, वीर्य दर्श गुणवान् ।
चौबीसों जिनराज को, नमूं नमूं सुखदान ॥९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंच कल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ६

[चौबीसी नं० ५]

जंबूद्वीप ऐरावत क्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

स्थापना—अडिल्ल छंद

ऐरावत के वर्तमान जिनराज हैं।
भव वारिधि से तारण तरण जिहाज हैं॥
भक्तिभाव से करूं यहाँ उन थापना।
पूजूँ भक्ति बढ़ाय करूं हित आपना॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—रोला छन्द

सुरगंगा को नीर, कंचनकलश भराऊं।
जिनवर चरण सरोज, पूजत कर्म नशाऊं॥
चौबीसों जिनराज, तुम पदपद्म जजूँ मैं।
आतम अनुभव पाय, परमानंद भजूँ मैं॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ...।

मलयागिरि घनसार, केशर संग घिसाऊं।
तीर्थंकर पदकंज, पूजत दाह मिटाऊं॥चौबीसों०॥२॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... चंदनं ...।

क्षीरोदधि के फेन, सम उज्ज्वल तंदुल हैं ।

परम पुरुष को पूज, होता सुख मंजुल है ।।चौबीसों०।।३।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो·····अक्षतं····।

कल्पवृक्ष के पुष्प, सुरभित वरण वरण के ।

कामजयी परमेश, चरण जजूँ रुचि धरके ।।चौबीसों०।।४।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीचतुर्विंशति-तीर्थंकरभ्यो····· पुष्पं····।

मधुर सरस पकवान्, भर भर थाल लिया मैं ।

क्षुधा रोग हर नाथ, पूजत सौख्य लिया मैं ।।चौबीसों०।।५।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो····· नैवेद्यं ···।

घृत दीपक की ज्योति, बाहर तिमिर हरे है ।

तुम पद पूजत शीघ्र, मन का मोह टरे है ।।चौबीसों०।।६।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो·····दीपं ·।

कृष्णागरु वर धूप, अग्नी संग जलाऊं ।

कर्म कलंक विदूर, आतम शुद्ध बनाऊं ।।चौबीसों०।।७।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो····· धूपं ····।

पिस्ता पूग बदाम, फल अखरोट चढ़ाऊँ ।

फल से जिनवर पूज, सर्वोत्तम फल पाऊं ।।चौबीसों०।।८।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो···· फलं ·।

जल गंधादिक द्रव्य, लेकर अर्घ्य बनाऊं ।

भवविजयी जिनपाद, पूजत पाप नशाऊं ।।चौबीसों०।।९।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीसम्बन्धि ऐरावतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ·· ····अर्घ्यं····।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥
शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

कर्म मलीमस आत्मा, प्रभु तुम भक्ति प्रसाद ।
शुद्ध बुद्ध होवे तुरत, अतः नमूँ तुम पाद ॥१॥
इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

पद्धड़ी छंद

जिन 'बालचन्द्र' त्रैलोक्यनाथ, गणईस भजें नित नमित माथ ।
शिवपथ के विघ्न विनाश हेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री बालचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

प्रभु 'सुव्रत' तीर्थंकर महेश, तुमको ध्यावें मुनिगण अशेष ।
शिवपथ के विघ्न विनाश हेत, में जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुव्रतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'अग्निसेन' जिनदेव आप, भविजन के हरते सकल ताप ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्निसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'नंदिसेन' के पाद कंज, योगी गण वंदत कर्म भंज ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नन्दिसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'श्रीदत्त' पदारविंद, जजते ही मिटता सकल द्वंद्व ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ... ।

जिनवर 'व्रतधर' हो श्रेष्ठ चंद्र, भविमन आल्हादक श्रेष्ठ मंत्र ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्रतधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'सोमचन्द्र' अद्भुत दिनेश, अज्ञान तिमिर को करें शेष ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्रीमन 'धृतिदीर्घ' अपूर्व तेज, जनमन का तत्क्षण हरें खेद ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धृतिदीर्घजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिन 'शतायुष्य' सब कर्मचूर, भक्तों के संकट करें दूर ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शतायुष्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ... ।

जिनवर 'विवसित' अद्भुत महान्, सुरकिन्नर गावेंकीर्तिगान ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विवसितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'श्रेयान' जिनेश्वर मुक्तिकांत, वंदन से हरते मोहध्वांत ।
शिवपथ में विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रेयोजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिन 'विश्रुतजल' भवजलधिनाव, जो ध्वावें पावें शुद्धभाव ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्रुतजलजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिन 'सिंहसेन' तीर्थेश आप, भाक्तिकजन के सब हरो पाप ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिंहसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'उपशांत' जिनेश्वर सुनो टेर, हरिये भव भव का सकल फेर ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपशांतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

हे नाथ ! 'गुप्तशासन' जिनेश, मेरे हरिये सब राग द्वेष ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गुप्तशासनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'अनंतवीरज' महान्, गुणमणिरत्नों की अतुल खान ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनन्तवीर्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'पार्श्व' जिनेश्वर देवदेव, भवसंकट करिये तुरत छेव ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'अभिधान' सुबोध पुंज, इंद्रादि नमें धर रत्नपुंज ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभिधानजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'मरुदेव' तीर्थंकर सूर्य तुल्य, भविजनमनपंकज करें फुल्ल ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मरुदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'श्रीधर' त्रैलोक्यदेव, शिवलक्ष्मी संयुत परमदेव ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रीधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिन 'शामकंठ' की दिव्यवाणि, भव वल्ली काटन को कृपाणि ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शामकण्ठजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिन 'अग्निप्रभ' भवदाहदूर, भविजन भव अग्नी शमन पूर ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्निप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'अग्निदत्त' जिनदेवदेव, शिवकांता इच्छुक करें सेव ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्निदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'वीरसेन' भगवान् आप, निज स्वात्मसुधा पीकर अपाप ।
शिवपथ के विघ्न विनाशहेत, मैं जजूँ सदा श्रद्धा समेत ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीरसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—सोरठा

श्री चौबीस जिनेश, सकल अमंगल को हरें ।
पूरे सौख्य हमेश, पूजूँ पूरण अर्घ्य ले ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बालचन्द्रादिवीरसेनांत-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पूर्णार्घ्यं ....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

तीन लोक की संपदा, करें हस्तगत भव्य ।
तुम गुण माला गाय के, पूरें सब कर्तव्य ॥१॥

चाल—हे दीनबन्धु

जैवंत मुक्तिकंत देवदेव हमारे ।
जैवंत भक्त जंतु भवोदधि से उबारे ॥

हे नाथ ! आप जन्म के छह मास ही पहले ।
धनराज रत्नवृष्टि करें मातु के महले ॥१॥

माता की सेव करतीं श्री आदि देवियां ।
अद्भुत अपूर्व भाव धरें सर्व देवियां ॥

जब आप मात गर्भ में अवतार धारते ।
तब इंद्र सपरिवार आय भक्ति भार से ॥२॥

प्रभु गर्भ कल्याणक महाउत्सव विधि करें ।
माता पिता की भक्ति से पूजन विधि करें ॥

हे नाथ ! आप जन्मते सुरलोक हिल उठे ।
इंद्रासनों के कंप से आश्चर्य हो उठे ॥३॥

इंद्रों के मुकुट आप से ही आप झुके हैं ।
सुरकल्पवृक्ष हर्ष से ही फूल उठे हैं ॥

वे सुरतरु स्वयमेव सुमन वृष्टि करे हैं ।
तब इंद्र आप जन्म जान हर्ष भरे हैं ॥४॥

तत्काल इंद्र सिंहपीठ से उतर पड़ें ।
प्रभु को प्रणाम करके बार बार पग पड़ें ॥

भेरी करा सब देव का आह्वान करे हैं ।
जन्माभिषेक करने का उत्साह भरे हैं ॥५॥

सुरराज आ जिनराज को सुरशैल ले जाते ।
सुरगण असंख्य मिलके महोत्सव को मनाते ॥

जब आप हो विरक्त देव सर्व आवते ।
दीक्षा विधी उत्सव महामुद से मनावते ॥६॥

जब घातिया को घात ज्ञानसंपदा भरें ।
तब इंद्र आ अद्भुत समवसरण विभव करें ॥

तुम दिव्य वच पियूष को पीते असंख्यजन ।
क्रम से करें वे मुक्ति वल्लभा का आलिंगन ॥७॥

जब आप मृत्यु जीत मुक्ति धाम में बसे ।
सिद्ध यंगना के साथ परमानंद सुख चखें ॥

सब इंद्र आ निर्वाण महोत्सव मनावते ।
प्रभु पंचकल्याणक पती को शीश नावते ॥८॥

हे नाथ ! आप कीर्ति कोटि ग्रंथ गा रहे ।
इस हेतु से ही भव्य आप शरण आ रहे ॥

मैं आप शरण पायके सचमुच कृतार्थ हूँ ।
बस 'ज्ञानमती' पूर्ण होने तक ही दास हूँ ॥९॥

दोहा

पंचमगति के हेतु मैं, नमन करूं पंचांग ।
परमानंद अमृत अतुल, सौख्य भरो सर्वांग ॥१०॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धितऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ७

[चौबीसी नं० ६]

जम्बूद्वीप ऐरावत क्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा

७

स्थापना—नरेन्द्र छन्द

जंबूद्वीप सुबीच सुदर्शन, मेरू के उत्तर में।
ऐरावत है क्षेत्र सातवां, आर्यखंड के मधि में॥
चौथे काल विषे तीर्थंकर, होंगे भावी युग में।
पूजन हेतु करूं आह्वानन, फेर भ्रमूं ना भव में॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—द्रुतविलम्बित छन्द

सलिल शीतल मिष्ट भराइये।
जिनपदाम्बुज धार कराइये॥
नित जजूँ चउबीस जिनेश को।
सहज सर्व हरूं भवक्लेश को॥१॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जल....।

मलय चंदन केसर मिश्र के, मदनराज जयी पद चर्च के।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को॥२॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो.....चंदनं ...।

धवल अक्षत धौत अखंड हैं, रचत पुंज मिले सुख कंद हैं ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥३॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो.....अक्षतं ..।

सुमन कल्पतरू के लाइये, मदनजित पदकंज चढ़ाइये ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥४॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं.....।

मधुर मिष्ट इमरती आदि ले, सतत तृप्त प्रभू पद अर्च लें ।
नित जजूं चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥५॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ...।

कनकदीपक ज्योति सुजगमगे, तुम जजत बुधि अंतर में जगे ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥६॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो.....दीप.....।

अगुरु कृष्णागर वर धूप है, अगनि में खेवत सुख रूप है ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं.....।

सुरभि एला फल केला लिये, जिन समर्चत फल वांछित लिये ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥७॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो .....फलं.....।

जलफलादिक अर्घ्य मिलायके, तुम पदाम्बुज मस्तक नायके ।
नित जजूँ चउबीस जिनेश को, सहज सर्व हरूं भवक्लेश को ॥९॥

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो .....अर्घ्यं.....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

परमशुद्ध परिणाम हित, तुम पद पूजूँ आज ।
पुष्पांजलि अर्पण करूं, भरो आश जिनराज ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

शम्भु छन्द

तीर्थंकर श्री 'सिद्धार्थदेव', भविजन को सिद्धी देते हैं ।
जो हृदय कमल में भक्ती से, उनको विधिवत् धर लेते हैं ॥
हम पूजें अर्घ्य चढ़ाकर के, श्रद्धा से प्रभु गुणगान करें ।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धार्थजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'विमल' जिनेश्वर इंद्रिय क्रम, विरहित वर ज्ञान सहित मानें।
जो सकल विमल केवल वोधामृत, इच्छुक हैं वे सरधानें ॥
हम० ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'जयघोष' जिनेश्वर तीर्थरूप, अगणित जीवों को पार करें ।
सुर नर किन्नर वीणा लेकर, गुण गावें तन का भार हरें ॥
हम० ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयघोषजिनद्राय अर्घ्यं ....।

जिन 'नंदिसेन' निज भक्तों को, आनंदामृत से तृप्त करें।
निज आत्म सुधारस के प्यासे, नित प्रति उनका संस्तव उचरें॥
हम० ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदिसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिनराज 'स्वर्गमंगल' जग में, सर्वत्र स्वर्ग सा सुख देते।
जो उनकी श्रद्धा भक्ति करें, उनके सब संकट हर लेते॥
हम० ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वर्गमंगलजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'वज्राधारी' तीर्थंकर, रत्नत्रय वज्र धरें कर में।
निज कर्म महागिरि को तत्क्षण, शतखंड करें शिव लें पल में॥
हम० ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्राधारीजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर श्री 'निर्वाण' नाथ, इनकी पूजा निर्वाण फले।
इस हेतू से ही गणधर भी, नित ध्यान धरें सब दोष दलें॥
हम० ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाणजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज 'धर्मध्वज' पद चिन्हों के, पथिक धर्म की ध्वज धरते।
फिर धर्मचक्र के स्वामी बन, मुक्ती साम्राज्य तुरत लभते॥
हम० ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मध्वजजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'सिद्धसेन' के भाक्तिकगण, सर्वार्थसिद्धि वर लेते हैं।
फिर गर्भवास के दुःखों से, छुटकर निज सुख रस लेते हैं॥
हम० ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'महासेन' की यश वल्ली, तीनों लोकों तक फैल रही ।
जो उनकी पूजन करते हैं, उनके सब संकट फेल सही ॥
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, श्रद्धा से प्रभु गुणगान करें ।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महासेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'रविमित्र' जिनेश्वर परमेश्वर, भक्तोंके मनका तिमिर हरें ।
वर भेदज्ञान को ज्योती से, अंतर में पूर्ण प्रकाश भरें ॥
हम० ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रविमित्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सत्यसेन' तीर्थंकर की, कल्याणी वाणी अमृत है ।
जो कर्ण कटोरे से पीते, वे समरस तृप्त सुखास्पद हैं ॥
हम० ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्यसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर 'चंद्रनाथ' जग में, मुनिमन कैरव को विकसाते ।
योगीश्वर चित्त कर्णिका पर, स्थापित कर उनको ध्याते ॥
हम० ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चंद्रनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'महीचंद्र' जिनदेवदेव, के गुण सुर नर खग गाते हैं ।
अतिशयकारी पुण्यार्जन कर, चिर संचित कर्म नशाते हैं ॥
हम० ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महीचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिनराज 'श्रुतांजन' भविजन के, नेत्रों को ज्ञान शलाका से ।
अतिशीघ्र खोल देते तब वे, जग देखें ज्ञानमयी दृग से ॥
हम० ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रुतांजनजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिन 'देवसेन' के चरणकमल, सौ इंद्रों से नित वंदित हैं ।
जो वंदन पूजन करते हैं, वे नर नितप्रति आनंदित हैं ॥
हम० ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'सुव्रतनाथ' महाव्रतगुण, उत्तर गुण से भी पूर्ण रहें ।
जो श्रद्धा से पूजें ध्यावें, वे भी व्रत चारित पूर्ण लहें ॥
हम० ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुव्रतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर श्री 'जिनेंद्र' जग में, अतिशय महिमा को विस्तारें ।
सुर ललनायें वीणा लेकर, उनकी गुणगाथा उच्चारें ॥
हम० ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनेंद्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'सुपार्श्व' भव पाश छेद, मुक्तिकांता के वल्लभ हैं ।
सब राग द्वेष मद मोह शून्य, उनका यश गाना दुर्लभ है ॥
हम० ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिननाथ 'सुकौशल' मुक्ति रमा, वश करने में अति कुशल कहे ।
जो उनकी भक्ति करें वे भी, शिव पाने में गुण कुशल गहें ॥
हम० ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकौशलजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'अनंत' के गुण अनंत, गणधर भी पार नहीं पाते ।
जो लेशमात्र भी गुण उचरें, वे भी भव वारिधि तर जाते ॥
हम० ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'विमल' अमल गुण के धारी, जग का अघमल हर लेते हैं ।
खगपति नरपति फणिपति चक्री, प्रभुके चरणाम्बुज सेते हैं ॥
हम० ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'अमृतसेन' स्व वचन अमृत, बरसा भवि चातक तृप्त करें ।
जिन वचन रसायन से सचमुच, सब जनम मरण रुज नष्ट करें ।।
हम पूजें अर्घ्यं चढ़ा करके, श्रद्धा से प्रभु गुणगान करें ।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, भय रोग शोक की हान करें ।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमृतसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिन 'अग्निदत्त' भव अग्नी से, झुलसे प्राणी को इस जग में ।
निज वचन नीर से शीतलकर, आत्यंतिक शांति भरें चित में ।।

हम० ।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्निदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्यं—दोहा

ऐरावत के भावि जिन, चिंतामणी अनूप ।
चिंतित फल देवें सदा, भक्त बने शिवरूप ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसिद्धार्थादिअग्निदत्तपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

सोरठा

नित्य निरंजनदेव, अखिल अमंगल को हरें ।
नित्य करूं मैं सेव, मेरे कर्मांजन हरें ।।

सखी छन्द

जय जय जिनदेव हमारे, जय जय भविजन बहु तारें ।
जय मुक्तिरमापति देवा, शतइंद्र करें तुम सेवा ।।२।।
मुनिवृंद तुम्हें चित धारें, भववृंद सुयश विस्तारें ।
सुरनर किन्नर गुण गावें, किन्नरियां बीन बजावें ।।३।।

भक्तीवश नृत्य करे हैं, गुण गाकर पाप हरे हैं।
विद्याधर गण बहु आवें, दर्शन कर पुण्य कमावें ॥४॥
भव भव के त्रास मिटावें, यम का अस्तित्व हटावें।
जो जिनगुण में मन पागे, तिन देख मोह रिपु भागे ॥५॥
जो प्रभु की पूज रचावें, इस जग में पूजा पावें।
जो प्रभु का ध्यान धरे हैं, उनका सब ध्यान करे हैं ॥६॥
जो करते भक्ति तुम्हारी, वे भव भव में सुखियारी।
इस हेतु प्रभो तुम पासे, मन के उद्गार निकासे ॥७॥
जब तक मुझ मुक्ति न होवे, तब तक सम्यक्त्व न खोवे।
तब तक जिनगुण उच्चारूं, तब तक मैं संयम धारूं ॥८॥
तब तक हो श्रेष्ठ समाधी, नाशे जन्मादिक व्याधी।
तब तक रत्नत्रय पाऊँ, तब तक निज ध्यान लगाऊं ॥९॥
तब तक तुमहीं मुझ स्वामी, भव भव में हो निष्कामी।
ये भाव हमारे पूरो, मुझ मोह शत्रु को चूरो ॥१०॥

घत्ता

जय जय चिन्मूरति, गुणमणिपूरित, जय जिनवर वृषचक्रपती।
जय 'ज्ञानमती' धर, शिवलक्ष्मीवर, भविजन पावें सिद्धगती ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजम्बूद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० ८

[चौबीसी नं० ७]

पूर्व धातकीखंड द्वीप भरतक्षेत्र

भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीता छन्द

श्री विजयमेरू दक्षिणी दिश, भरतक्षेत्र सुहावना ।
चौबीस तीर्थंकर अतीते, काल के गुण गावना ॥
सुर असुर मुकुटों को झुकाकर, अर्चते हैं भाव से ।
मैं भी यहाँ कर थापना, पूजूँ उन्हें अति चाव से ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—सोरठा

सिंधु नदी को नीर, बाहर का मल नाशता ।
अंतर्मल क्षयहेतु, जल से जिन पद पूजिये ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... जलं ....।

अष्टगंध वर गंध, तन की ताप हरे सदा ।
मनस्ताप क्षय हेतु, चंदन से जिन पद जजों ॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो .....चंदनं ....।

मुक्ताफल सम धौत, अक्षत पुंज रचाइये ।
आतम संपति हेतु, तीर्थंकर पद पूजिये ॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ···· अक्षतं ····।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित ले अर्पण करूं ।
भव शर नाशन हेतु, तीर्थंकर पद पूजिये ॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· पुष्पं ····।

लड्डू मोतीचूर, नानाविध पकवान ले ।
भूख व्याधि हर हेतु, चरु से जिन पद पूजिये ॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· नैवेद्यं ····।

घृत भर दीपक ज्योति, बाह्य तिमिर नाशे सही ।
अंतर्ज्योती हेतु, दीपक से पूजा करूं ॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· दीपं ····।

अगरु तगर वरधूप, अग्नि पात्र में खेइये ।
अशुभ कर्म क्षय हेतु, तीर्थंकर पद पूजिये ॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· धूपं ····।

पिस्ता द्राक्ष बदाम, एला केला फल भले ।
सरस मोक्ष फल हेतु, फल से जिनवर पूजिये ॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· फलं ····।

जल चंदन शाल्यादि, अष्टद्रव्य ले थाल में ।
फल सर्वोत्तम हेतु, अर्घ्य चढ़ा जिनपद जजों ॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ····· अर्घ्यं —।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥
शांतये शांतिधारा ।

हर्रासंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्यं

दोहा

रागद्वेष मद मोह को, जीत हुये 'जिन' ख्यात ।
पृथक् पृथक् तुम नाम ले, जजूँ नमाकर माथ ॥१॥
इति मंडलोस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेन्द्र छन्द

'रत्नप्रभ' तीर्थंकर रत्नत्रय, निधि के हैं भागी ।
फिर भी आर्किंचन कहलाते, सर्वपरिग्रह त्यागी ॥
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, पूजूँ पद मन लाके ।
पुनर्जन्म का दुःख मिटाकर, बसूँ स्वपद में जाके ॥१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री रत्नप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

'अमितनाथ' जिनदेव अमितगुण, रत्नाकर जगनामी ।
एक एक गुण को जो पाते, होते शिवपद स्वामी ॥जल०॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमितनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

'संभवनाथ' भविकजन के सब, भव दुख दूर करे हैं ।
जो जन उनको हृदय कमल में, धारें सौख्य भरे हैं ॥जल०॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्भवनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

श्री 'अकलंक' जिनेश्वर भविजन, कर्मकलंक हरे हैं।
जो जन मन वच तन से पूजें, गुण अकलंक भरे हैं ॥जल०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अकलंकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'चंद्रस्वामि' जिनराज जगत में, मुनिमन कुमुद विकासी।
गणधर मुनिपति नरपति वंदित, चिच्चैतन्यप्रकाशी ॥जल०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नाथ 'शुभंकर' सकल विश्व में, शुभ मंगल विस्तारें।
भव्य जनों के सकल दोष हर, उनको भवदधि तारें ॥जल०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुभंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

सप्त तत्त्व के सफल प्रणेता, 'तत्त्वनाथ' तीर्थंकर।
सुर परिवार शचीदेवी युत, नितप्रति भजें पुरंदर ॥जल०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तत्त्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'सुंदरस्वामी' तीर्थंकर, अनुपम छवि मनहारी।
इंद्र हजारों नेत्र बनाकर, निरखे अतिसुखकारी ॥जल०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुन्दरस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'पुरंधर' तीर्थंकर की, सुरपति सेवा करते।
धर्मधुरंधर' कर्मकलुषहर, जिन वंदत दुख हरते ॥जल०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुरन्धरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर श्री 'स्वामिदेव' को, जो जन पूजें ध्यावें।
मृत्युमल्ल को जीत शीघ्र ही, निजसुख संपत्ति पावें ॥जल०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वामिदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'देवदत्त' सब जन के, अशुभ दोष परिहारें।
भक्तजनों को अमल अखंडित, सुख देकर भव टारें ॥जल०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'वासवदत्त' सुरासुर, वंदित गुणमणि भर्ता ।
स्वात्म सुधारस अनुभवकारी, जन जन के हितकर्ता ।।
जलगंधादिक अर्घ्य सजाकर, पूजूँ पद मन लाके ।
पुनर्जन्म का दुःख मिटाकर, बसूँ स्वपद में जाके ।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वासवदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'श्रेयनाथ' तीर्थंकर जग में, मोहबली के जेता ।
लोक अलोक निहारें युगपत्, सकल तत्त्व के वेत्ता ।।जल०।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रेयोनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'विश्वरूप' जिनदेवदेव को, पूजें सुरगण आके ।
अहिपति नरपति सुरपति नितप्रति, वंदे पाप नशाके ।।जल०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्वरूपजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'तपस्तेज' तीर्थंकर निज का, तेज अपूरब धारें ।
नाममंत्र जपने वालों का, मोह तिमिर परिहारें ।।जल०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपस्तेजोजिनेन्द्राय अर्घ्यं —।

श्री 'प्रतिबोधदेव' तीर्थंकर, अखिल जीव प्रतिबोधें ।
श्रीजिन की वाणी सुनसुनकर, भव्य निजातम शोधें ।।जल०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रतिबोधदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'सिद्धार्थदेव' जिनवर के, चरण कमल को ध्यावें ।
सकल मनोरथ सिद्ध करें फिर, सिद्धिप्रिया को पावें ।।जल०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धार्थदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर 'संयमजिन' अठरा दोष रहित गुणशाली ।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर पूजित, पूर्णज्ञान द्युतिशाली ।।जल०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संयमजिनजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'विमलनाथ' जिनवर को पाकर, संयम पूर्ण करें हैं ।
अतीचार मल दोष टालकर, पंचम चरित धरे हैं ।।जल०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'देवेंद्र' जिनेश्वर चिन्मय, ज्योति स्वरूप अनूपा ।
जो भवि पूजें तत्क्षण पावें, निजपरमात्म स्वरूपा ।।जल०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'प्रवरनाथ' जिननाथ अतींद्रय, ज्ञानी अमल अरूपी ।
चिन्मूरति आकार विवर्जित चिच्चैतन्य स्वरूपी ।।जल०।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रवरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'विश्वसेन' जिनदेव त्रिजगपति, गुण अनंत के धारी ।
भक्ति भाव से जो जन वंदे, सुख पावें अविकारी ।।जल०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्वसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'मेघनंदि' आनंदित, करते भव्य जनों को ।
तृप्त करें परमानंदामृत, प्यासे योगिजनों को ।।जल०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मेघनन्दिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री सर्वज्ञ 'त्रिजेतृक' भगवन् ! केवल ज्ञान दिवाकर ।
करते भक्त जनों के मन में, अंतरज्योति उजागर ।।जल०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिजेतृकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पूर्णार्घ्यं

भूतकाल के चौबीसों जिन, मुक्ति मार्ग के नेता ।
कर्मकुलाचल के भेत्ता हैं, सकल तत्त्व के वेत्ता ।।जल०।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रत्नप्रभादित्रिजेतृकनाथपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

तीनलोक में श्रेष्ठतम, जिनवर विभव प्रधान ।
प्रातिहार्य की संपदा, तीर्थंकर पहिचान ॥१॥

पंचचामर छन्द

अशोक वृक्ष रत्नकाय चित्रवर्ण का धरे ।
हरितमणी की पत्तियाँ हवा लगे हि थरहरें ॥
नवीन कोपलों समेत राग को स्वयं धरे ।
तथापि भक्त के समस्त राग भाव को हरे ॥२॥

सुपूर्णचन्द्र के समान तीन छत्र शोभते ।
अनेक मोतियों समेत भव्य चित्त मोहते ॥
जिनेंद्र के त्रिलोक ऐश्वर्य को बतावते ।
भवाग्नितापभव्य जीव का सभी नशावते ॥३॥

अनेक रत्न के समूह युक्त सिंहपीठ है ।
सफेद सुस्फटीकरत्न से बना प्रसिद्ध है ॥
अपूर्व पद्म पे अधर जिनेंद्रदेव राजते ।
नमो नमो पदारविंद सर्व पाप नाशते ॥४॥

प्रगाढ भक्ति से समस्त भव्य मोद से भरे ।
स्वहस्त जोड़ आपके सभी तरफ रहें घिरे ॥
सुधा झरी ध्वनी सुने स्वकर्म कालिमा हरें ।
शनैः शनैः निजात्म ध्याय सिद्धिकन्यका वरें ॥५॥

विषय कषाय शून्य नाथ पाद शर्ण आइये ।
अनंत जन्म के समस्त कर्म को नशाइये ॥

इतीव सूचना करंत देव दुंदुभी बजे ।
सुभव्यजीव कर्ण से सुने प्रमोद को भजें ॥६॥
अनेक देव भक्ति से सुपुष्प वृष्टि को करें ।
समस्त पुष्प वृंत्त को अधो किये धरा गिरे ॥
खिले खिले सुवर्ण पुष्प हर्ष को बढ़ावते ।
सुदेख देख भक्तवृंद पुण्य को बढ़ावते ॥७॥

प्रभासुचक्र नाथ आप ज्योतिपुंज रूप हैं ।
अनेक सूर्य कोटि की प्रभा हरे अनूप हैं ॥
सुभव्य को सदैव सात भव दिखावता रहे ।
जिनेंद्र का अपूर्व तेज नित्य पावता रहे ॥८॥

सुकुंदपुष्प के समान श्वेत चामरों लिये ।
सुयक्षदेव ढोरते अतुल्य भक्ति को लिये ॥
चंवर सदैव ऊर्ध्व जाय भव्य सूचना करें ।
जिनेंद्रभक्त नित्य एक ऊर्ध्व ही गती धरें ॥९॥

सुआठ प्रतिहार्य औ अनंत विभव धारते ।
स्वभक्त को भवाब्धि से तुरन्त आप तारते ॥
सुनी सुकीर्ति आपकी इसीलिये खड़ा यहाँ ।
बस एक आश पूरिये न आवना हो फिर यहाँ ॥१०॥

दोहा

स्वात्मसौख्य पीयूषरस, निर्झरणी वच आप ।
'ज्ञानमती' सुख पूरिये, मिटे सकल संताप ॥११॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबन्धिभरतक्षेत्रभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० ६
[चौबीसी नं० ८]

पूर्वधातकी खंड भरतक्षेत्र

वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छंद

पूर्वधातकी भरतक्षेत्र में, वर्तमान जिनदेवा।
विजयमेरु के दक्षिणदिश में, सुरनरकृत पद सेवा॥
इन चौबीसों तीर्थंकर को, भक्ति भाव से ध्याऊं।
आह्वाननविधि पूजा करके, निजआतम सुख पाऊं॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वोपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वोपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थ-वर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—स्रग्विणी छन्द

सिंधु को नीर ले स्वर्ण झारी भरूं ।
नाथ के पाद में तीन धारा करूं ॥
इंद्रशतवंद्य तीर्थेश को नित जजूँ ।
रत्न सम्यक्त्व पा भव भ्रमण से बचूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थ-वर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ··।

गंध सौगंध्य चंदन घिसाऊं सही ।
नाथपद पूजते पूर्ण साता लही ॥इंद्रशत०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थ वर्तमानकालीनचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो....चंदनं....।

शालि सुंदर शशीकांति सम लायके ।
पुंज धर पूजहूँ नाथ गुण गाय के ॥इंद्रशत०॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो····· अक्षतं ।

कुंद मंदार मल्ली सुमन लाइया ।
कामजेता प्रभू अर्च सुख पाइया ॥इंद्रशत०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· पुष्पं·····।

मुद्ग लड्डू इमरती भरे थाल में ।
भूख व्याधी रहित नाथ पूजूँ तुम्हें ॥इंद्रशत०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· नैवेद्यं·····।

दीप की लौ बहिर्ध्वांत नाशे सदा ।
आपको पूजते भेदविज्ञानदा ॥इंद्रशत०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो·····दीपं·····।

धूप ले अग्नि में नित्य खेऊं सही ।
आत्मशुद्धी करूं पाउं निज की मही ।।
इंद्रशतवंद्य तीर्थेश को नित जजूँ ।
रत्न सम्यक्त्व पा भव भ्रमण से बचूँ ।।७।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धपं ....।

आम्र अंगूर अखरोट काजू लिये ।
नाथ को पूजते सौख्य संपत् लिये ।।इंद्रशत०।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... फलं ....।

नीर गंधादि वसु द्रव्य थाली भरे ।
अर्घ्य से अर्चते सर्वव्याधी टरे ।।इंद्रशत०।।९।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अर्घ्यं ....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँ जग शांतिकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतिधारा मैं करूं ।।१०।।
शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ।।११।।
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

धर्मचक्र के अधिपती, त्रिभुवन पति जिनराज ।
सुमन चढ़ाकर पूजहूँ, नमूं नमूं नतमाथ ।।१।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छन्द

नाथ 'युगादीदेव,' सब देवन के देवा ।
त्रिभुवन के तुम देव, भव्य करें नित सेवा ॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, प्रभुपद शीश नमाऊं ।
सर्व मनोरथ त्याग, रत्नत्रय निधि पाऊं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री युगादिदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'सिद्धांत' जिनेन्द्र, अंतक को चकचूरा ।
जो जन पूजें नित्य, पावें सुख भरपूरा ॥पूजूँ०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धान्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'महाईश' के नाथ, कामजयी बलधारी ।
तुम पद पूजें नित्य, वे निजपद अधिकारी ॥पूजूँ०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महेशनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'परमार्थ' जिनेश, परम पुरुष तुम ध्याते ।
भविजन भक्ति समेत, पूजत कर्म नशाते ॥पूजूँ०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमार्थनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'समुद्धर' देव, जग उद्धार किया है ।
जिनने पूजा आप, सौख्य अपार लिया है ॥पूजूँ०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री समुद्धरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'भूधरनाथ' जिनेश, सब जीवन हितकारी ।
वाणी मधुर पियूष, पीकर हो सुखकारी ॥पूजूँ०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूधरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'उद्योत' जिनेंद्र, केवल सूर्य तुम्हीं हो ।
मुनिमन में प्रद्योत, करते नित्य तुम्हीं हो ॥पूजूँ०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उद्योतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'आर्जव' जिनवर आप, ऊर्ध्वगती को पाई ।
किन्नर गण तुम कीर्ति, गाते हैं सुखदाई ॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, प्रभुपद शीश नमाऊं ।
सर्व मनोरथ त्याग, रत्नत्रय निधि पाऊं ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आर्जवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'अभयनाथ' भगवान्, अभयदान दें सबको ।
सब जीवन प्रतिपाल, नमूँ नमूँ चरणन को ॥पूजूँ०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभयनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'अप्रकंप' तीर्थेश, जब तुम जन्म लिया है ।
इंद्रासन तत्काल कम्पित होय गया है ॥पूजूँ०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्रकंपजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'पद्मनाथ, भगवान्, तुम पद बसती पद्मा ।
जो पूजें धर प्रीत, पावें अनुपम सद्मा ॥पूजूँ०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'पद्मनंदि' जिनदेव, तुम पदपद्म जजें जो ।
मृत्यु मल्ल को मार, निज शिवसद्म भजें सो ॥पूजूँ०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मनन्दिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'प्रियकंर' आप, वाणी प्रियहित करणी ।
कर्ण पुटों से भव्य, पीते भव दुःखहरणी ॥पूजूँ०॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रियंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'सुकृतनाथ' जिनेंद्र, अतुल पुण्य निधि तुम हो ।
जो जन तुम पद भक्त, उनके भ्रम का क्षयहो ॥पूजूँ०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकृतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'भद्रनाथ' जिनदेव, कर्मबली के जेता ।
हित उपदेशी आप, विश्व तत्त्व के वेत्ता ॥पूजूं०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भद्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

मुनीचंद्र' भगवान्, मुनिगण तुम गुण गावें ।
निज आतम का ध्यान, करके शिवपुर जावें ॥पूजूं०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'पंचमुष्टि' जिनराज, मोह मल्ल को जीता ।
पंच परावृत नाश, हुये भविकजन मीता ॥पूजूं०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पंचमुष्टिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'त्रिमुष्टि' जिनेश, जन्मजरा मृति नाशा ।
केवल रवि को पाय, लोकालोक प्रकाशा ॥पूजूं०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिमुष्टिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'गांगिक' जिननाथ, शीतल गंगनदीसम ।
जो करते तुम सेव, पावें सौख्य अनूपम ॥पूजूं०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गांगिकनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'गणनाथ' प्रधान, गणधर वंदन करते ।
कर्म अरी को हान, निजपद मंडन करते ॥पूजूं०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गणनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सर्वांग जिनेश', तुम सम रूप न जग में ।
इंद्र सहस कर नेत्र, फिर भी तृप्त न मन में ॥पूजूं०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वांगदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'ब्रह्मेन्द्र' अधीश, आतम गुण में राचें ।
ब्रह्मानंद पियूष पीकर, भवदुःख नाशे ॥पूजूं०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मेन्द्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'इंद्रदत्त' भगवान, इंद्र करें तुम भक्ती ।
जो तुम आश्रय लेय, पावें अनुपम शक्ती ।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, प्रभुपद शीश नमाऊँ ।
सर्व मनोरथ त्याग, रत्नत्रय निधि पाऊँ ।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री इन्द्रदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'श्री नायक' जिननाथ, करुणासिंधु तम्हीं हो ।
करो कृपा मुझनाथ, भवरुज वैद्य तुम्हीं हो ।।पूजूं०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नायकनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

धर्म तीर्थ के नाथ तुम, धर्मचक्रधर धीर ।
पूरण अर्घ्य चढ़ायके, पाऊं मैं भवतीर ।।२५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री युगादिदेवादिनायकनाथ पर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं.....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

शंभु छन्द

जय जय तुम वाणी कल्याणी, गंगाजल से भी शीतल है ।
जय जय शमगर्भित अमृतमय, हिमकण से भी अतिशीतल है ।।
चंदन औ मोती हार चंद्रकिरणों से भी शीतलदायी ।
स्याद्वादमयी प्रभु दिव्यध्वनी, मुनिगण को अतिशय सुखदायी ।।१।।

वस्तू में धर्म अनंत कहे, उन एक एक धर्मों को जो ।
यह सप्तभंगि अद्भुत कथनी, कहती है सात तरह से जो ॥
प्रत्येक वस्तु में विधि निषेध, दो धर्म प्रधान गौण मुख से ।
वे सात तरह से हों वर्णित, नहिं भेद अधिक अब हो सकते ॥२॥

प्रत्येक वस्तु है अस्ति रूप, औ नास्ति रूप भी है वो ही ।
वो ही है उभय रूप समझो, फिर अवक्तव्य है भी वो ही ॥
वो अस्तिरूप औ अवक्तव्य, फिर नास्ति अवक्तव भंग धरे ।
फिर अस्ति नास्ति औ अवक्तव्य, ये सात भंग हैं खरे खरे ॥३॥

स्वद्रव्य क्षेत्र औ काल भाव, इन चारों से वह अस्तिमयी ।
परद्रव्य क्षेत्र कालादि से, वो ही वस्तू नास्तित्व कही ॥
दोनों को क्रम से कहना हो, तब अस्तिनास्ति यह भंग कहा ।
दोनों को युगपत कहने से, हो अवक्तव्य यह तुर्य कहा ॥४॥

अस्ती औ अवक्तव्य क्रम से, यह पंचम भंग कहा जाता ।
नास्ती औ अवक्तव्य छट्ठा, यह भी है क्रम से बन जाता ॥
क्रम से कहने से अस्ति नास्ति, औ युगपत अवक्तव्य मिलके ।
यह सप्तम भंग कहा जाता, बस कम या अधिक न हो सकते ॥५॥

इस सप्त भंग मय सिन्धू में, जो नित अवगाहन करते हैं ।
वे मोह रागद्वेषादिरूप, सब कर्म कालिमा हरते हैं ॥
वे अनेकांतमय वाक्य सुधा, पीकर आतमरस चखते हैं ।
फिर परमानन्द परमज्ञानी, होकर शाश्वत सुख भजते हैं ॥६॥

मैं निज अस्तित्व लिये हूँ नित, मेरा पर में अस्तित्व नहीं ।
मैं चिच्चैतन्य स्वरूपी हूँ, पुद्गल से मुझ नास्तित्व सही ॥
इस विध निज को निज के द्वारा, निज में ही पाकर रम जाऊँ ।
निश्चय नय से सब भेद मिटा, सब कुछ व्यवहार हटा पाऊँ ॥७॥

भगवन्! कब ऐसी शक्ति मिले, श्रुतदृग से निज को अवलोकूँ।
फिर स्वसंवेद्य निज आतम को, निज अनुभव द्वारा मैं खोजूँ ॥
संकल्प विकल्प सभी तज के, बस निर्विकल्प मैं बन जाऊँ ॥
फिर केवल 'ज्ञानमती' से ही, निज को अवलोकूँ सुख पाऊँ ॥८॥

दोहा

वर्तमान चौबीस जिन, नमूँ आप पदपद्म।
हरो अमंगल विघ्नघन, हो मुझ अपुनर्जन्म ॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० १०

[चौबीसी नं० ९]

पूर्वधातकीखंडद्वीप भरतक्षेत्र भविष्यत तीर्थंकर पजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पूर्वधातकीखंड द्वीप में, सुरगिरि दक्षिण जानो ।
भरतक्षेत्र के भाविकाल में, चौबीस जिनवर मानो ॥
पंचकल्याणकपति भविजन के, सब कल्याण करे हैं ।
आह्वानन कर मैं नित पूजूँ, कल्मष सर्व हरे हैं ॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—रोलाछंद

सुरगंगा को नीर, प्रासुक शुद्ध भराऊं ।
जिन पदधारा देय, कर्मकलंक नशाऊं ॥
तीर्थंकर चौबीस, भावी नित्य जजूँ मैं ।
परमानंद स्वरूप, भावी मुक्ति भजूँ मैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

मलयज चंदन शुद्ध, केशर संग घिसाऊँ ।
जिनपद पंकज पूज, निज शीतलता पाऊं ॥तीर्थंकर०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं ..।

धवल अखंडित शालि, पुंज धरूँ तुम आगे ।
अमल अखंडित सौख्य, मिले सकल दुख भागें ।।
तीर्थंकर चौबीस, भावी नित्य जजूँ मैं ।
परमानंद स्वरूप, भावी मुक्ति भजूँ मैं ।।३।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं ...।

कल्पवृक्ष के पुष्प, सुरभित वरण वरण के ।
काम जयी जिन पूज, छूटूँ जन्म मरण से ।।तीर्थंकर०।।४।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं ...।

मोदक मोतीचूर पूरणपोली लाऊँ ।
आतम अनुभव हेतु, तुम ढिग नित्य चढ़ाऊँ ।।तीर्थंकर०।।५।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं ।

घृत से पूरित दीप, ज्योति उद्योत करे है ।
तुम पदपंकज पूज, मोह अंधेर हरे है ।।तीर्थंकर०।।६।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं ...।

अगुरु तगर से मिश्र, खेऊँ धूप अगनि में ।
निज आतम कर शुद्ध, पाऊँ सौख्य सघन मैं ।।तीर्थंकर०।।७।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं ।

एला केला आम, दाडिम फल बहु लाऊँ ।
सरस मधुर फल हेतु, तुमको नित्य चढ़ाऊँ ।।तीर्थंकर०।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं ...।

जल गंधादिक लेय, वसुविध अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
अतुल अनघ पद हेतु, पूजूँ ध्यान लगाऊँ ॥तीर्थंकर०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसर्वाधिभरतक्षत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांती हेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

घात घातिया कर्म को, किया ज्ञान को पूर्ण ।
नमूँ नमूँ नित आपको, करो हमें सुखपूर्ण ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सोरठा

श्री 'सिद्धार्थ' जिनेश, सब सिद्धो के हेतु तुम ।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, मनवांछित सिद्धो वरूं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धार्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'सम्यग्गुण' देव, मुक्तिरमा के कांत तुम ।
क्षायिक सम्यक हेतु, अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूं ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सम्यग्गुणजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

नाथ 'जिनेंद्रसुदेव', कर्म शत्रु विजयी तुम्हीं ।
मोहमल्ल जय हेतु, पूजूं अर्घ्य चढ़ाय के ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनेन्द्रदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'संपन्न' जिनेश, भावो तीर्थंकर कहे।
संप्रति मेरे क्लेश, हरिये मैं पूजूँ सदा ॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री संपन्ननाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'सर्वस्वामि' भगवान, सर्वकरम क्षय हेतु तुम।
सबके स्वामी आप, मैं नित पूजूँ भक्ति से ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'मुनिनाथ' जिनेन्द्र, गणधर मुनिगण तुम भजें।
पूजूँ भक्ति समेत, मेरे स्वामी आप ही ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'विशिष्ट' जिनदेव, सर्व गुणों से पूर्ण तुम।
मैं पूजूँ मन लाय, मेरी भव बाधा हरो ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विशिष्टदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'अमरनाथ' जिनदेव, तुम सम को इस लोक में।
मैं पूजूँ मन लाय, अद्वितीय फल के लिये ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'ब्रह्मशांति' जिननाथ, परमानंद स्वरूप तुम।
परम ब्रह्मपद हेतु, मैं पूजूँ नित भाव से ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मशाँतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'पर्वनाथ' भगवान, परम अपूरब भाव धर।
पूर्ण करो मम आश, मैं नित श्रद्धा से जजूँ ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री पर्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'अकामुकदेव' कामदेव विजयी तुम्हीं।
भवदुखनाशन हेतु, पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय के ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अकामुकदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'ध्याननाथ' भगवान, तुमको जो नित ध्यावते ।
पावें मोक्ष महान, मैं भी नित प्रति पूजहूँ ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ध्याननाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

'कल्प' जिनेश्वर देव, कल्पवृक्ष सम आप हैं ।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय, ईप्सित फल के हेतु मैं ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कल्पजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

'संवरनाथ' महान, मोक्ष तत्त्व ज्ञाता तुम्हीं ।
मैं पूजूँ धर ध्यान, विघ्नकरम मम चूरिये ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संवरनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

'स्वास्थ्यनाथ' भगवान, मोहपक्ष खंडन किया ।
मोक्ष महासुख हेतु, मैं पूजूँ रुचि लायके ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वास्थ्यनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'आनंद' जिनेश, सहजानंद स्वरूप तुम ।
परमानंद पद हेतु, मैं तुम पद पूजा करूँ ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आनंदनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'रविप्रभ' तीर्थेश, त्रिभुवन परकाशे सदा ।
पूजूँ भक्ति समेत, मृत्यु मल्ल मर्दन करें ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रविप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

श्री 'चंद्रप्रभ' देव, मुनिमन आल्हादन करें ।
पूजूँ मनवचकाय, विकसित हो मम मनकुमुद ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चंद्रप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ·।

सब जन आनंद हेतु, नाथ 'सुनंद' सदा भले ।
हर्षित मन से पूज, मैं न रुलूँ भवकीच में ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुनन्दजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'सुकर्ण' जिनदेव, अनुपम निधि दातार हैं ।
नित्य जजूँ सुखदाय, जन्मजरामृति नाश हित ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकर्णदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'सुकर्म' जिनदेव, कर्मशुभाशुभ नाशकृत ।
पूजूँ भक्ति समेत, रत्नत्रय निधि हेतु नित ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकर्मदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'अममदेव' तीर्थेश, निर्मम हैं यमराज प्रति ।
अर्घ्य चढ़ाऊँ नित्य, मोहकर्म अरि चूरने ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अममदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'पार्श्वनाथ' जिनराज, भवदधितारक हो तुम्हीं ।
मैं पूजूँ नत शीश, रागद्वेष मुझ क्षय करो ॥२३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'शाश्वतनाथ', आदि अंत से शून्य हैं ।
परमभाव के हेतु, मैं तुम पद पूजूँ सदा ॥२४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री शाश्वतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पूर्णार्घ्य—गीता छद

भावी जिनेश्वर आप मुक्ती, जायेंगे जब जायेंगे ।
पर भक्त उनके भी प्रथम, शिव संपदा को पायेंगे ॥
जल गंध आदिक अर्घ्य ले, इस हेतु मैं अर्चन करूँ ।
अतिशीघ्र ही सब कर्म हन कर, मुक्ति कन्या वश करूँ ॥२५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धार्थादिशाश्वतनाथपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ..।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

सोरठा

जो पीते धर प्रीति, तुम पद भक्ति पियूष को ।
पुनर्जन्म को नाश, अजर अमर पद को लहें ॥१॥

चाल शेर

जैवंत तीर्थवंत मुक्तिकान्त जिनेश्वर ।
जैवंत मूर्तिमंत धर्मकांत जिनेश्वर ॥
जैवंत लोक अंत के पर्यन्त विराजें ।
जैवंत हृदय ध्वांत हरण चन्द्र विभासें ॥२॥

हे नाथ ! आज आपसे मैं प्रार्थना करूं ।
मुझ जन्म मरण नाशिये यह भावना करूं ॥
मैंने अनंत काल क्षुद्रभव में बिताया ।
अब क्या कहूँ हे नाथ ! मोहबलि ने सताया ॥३॥

भू नीर अग्नि वायु साधारण वनस्पति ।
ये सूक्ष्म औ बादर तथा प्रत्येक तरू भी ॥
इन ग्यारहों में छै सहस बारह हैं भव सही ।
ये क्षुद्रभव एकेन्द्रियों के मैं धरे यहीं ॥४॥

दो इंद्रि जीव के कहे अस्सी प्रमाण हैं ।
ते इंद्रि जीव के कहे भव साठ मान हैं ॥
चौइंद्रियों के हैं कहे चालीस प्रमाण ।
पंचेन्द्रियों के क्षुद्रभव चौबीस बखाने ॥५॥

छ्यासठ हजार तीन सौ छत्तीस भव कहे ।
अंतर्मुहूर्त मात्र में ये, जन्म सब लहे ॥
इन लब्धि अपर्याप्तकों की योनी जब धरा ।
इक श्वांस के अट्ठारवें बस भाग में मरा ॥६॥

हे नाथ ! मैं सब योनियों में घूम चुका हूँ ।
बस बार-बार जन्म से मैं ऊब चुका हूँ ॥
त्रैलोक्य में बस एक आप जन्म शून्य हैं ।
इस हेतु से मैं आप शरण ली प्रपूर्ण है ॥७॥

हे नाथ ! रतनत्रय का मुझे दान दीजिये ।
बस भेद औ अभेद से परिपूर्ण कीजिये ॥
प्रभु अंत में समाधि हो यह भाव पूरिये ।
करके कृपा इस जन्म संतती को चूरिये ॥८॥

घत्ता

जय जय तीर्थंकर, त्रिभुवन शंकर, भविक्षेमंकर, नित्य नमूँ ।
जय ज्ञानमती धर, शिवलक्ष्मी वर, परमसुखास्पद, शीघ्र गमूँ ॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ११

[चौबीसी नं० १०]

पूर्व धातकीखंडद्वीप ऐरावतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीता छन्द

श्री विजयमेरु उत्तरी दिश, क्षेत्र ऐरावत कहा ।
जो पूर्वधातकि द्वीप में है, कालषट् को धर रहा ॥
उसके चतुर्थेकाल में जो, भूतकालिक जिनवरा ।
थापूँ उन्हें वर भक्ति से वे हों हमें क्षेमंकरा ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं – अडिल्ल छन्द

पद्माकर को नीर कमल वासित सुरभि ।
जिनपद धारा देय लहूँ आतम सुरभि ॥
श्री चौबीस जिनेश जजूँ मन लायके ।
समकितनिधि ले हर्षूं निजगुण पायके ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं.....।

अष्टगंध ले जिनपद चर्चूं भाव से ।
रोग शोक भय ताप हरूं शुभ भाव से ॥श्री०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदन....।

वासमती तंदुल सौगंधित ले लिये ।
पुंज चढ़ा तुम आगे नित ध्याऊँ हिये ॥
श्री चौबीस जिनेश जजूँ मन लायके ।
समकितनिधि ले हर्षूं निजगुण पायके ॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं....।

सुरतरु के सुरभित सुमनों को लायके ।
कामजयी जिनपद को पूजूँ आयके ॥श्री०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो कामवाणविनाशनाय पुष्पं....।

पायस फेनी बरफी मोदक ले लिया ।
परमामत से तप्त जिनेश्वर अर्चिया ॥श्री०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं....।

घृतदीपक की ज्योति सर्वदिश तम हरे ।
जिनपद पूजत भेद ज्ञान ज्योती करे ॥श्री०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं।

कृष्णागरु वरधूप अग्नि में खेवते ।
कर्म जलें सब अशुभ नाथ पद सेवते ॥श्री०॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं.....।

पिस्ता द्राक्ष बदाम चिरोंजी लायके ।
मोक्ष महाफल हेतु जजूँ गुण गायके ॥श्री०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलपप्राप्तये फलं.....।

नीर गंध आदिक ले अर्घ्य बनायके ।
पूजूँ भक्ति समेत हर्ष उर लायके ॥श्री०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

त्रिभुवनपति त्रिभुवनधनी, त्रिभुवन के गुरु आप ।
त्रिभुवन के चूड़ामणी, नमूँ नमूँ नत माथ ॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेन्द्र छन्द

नाथ 'वज्रस्वामिन्' ! तुम गुणमणि, गणना शक्य नहीं है ।
गणधर मुनिगण नित्य गुणों को, गाते पार नहीं हैं ॥
जल गंधादिक अर्घ्य चढ़ाकर, पूजूँ हर्ष बढ़ाके ।
चिन्मय चिंतामणि निजआतम, पाऊँ पुण्य बढ़ाके ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'उदत्त' तीर्थंकर जग में, ज्ञान उद्योत करें हैं ।
मुक्ति गये हैं फिर भी अब तक, भविमन मोद भरे हैं ॥

जल०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

'सूर्यस्वामी' तीर्थंकर जिन हैं, जन जन के हितकारी ।
जो जन वंदन पूजन करते, वे लभते शिवनारी ॥
जल गंधादिक अर्घ्य चढ़ाकर, पूजूँ हर्ष बढ़ाके ।
चिन्मय चिंतामणि निजआतम, पाऊँ पुण्य बढ़ाके ॥३॥

ॐ अर्हं श्री सूर्यस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'पुरुषोत्तम' तीर्थंकर हैं, उत्तम तीन जगत में ।
इसीलिये मुनिगण नित ध्याते, अपने हृदयकमल में ॥
जल०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुरुषोत्तमजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'शरणस्वामिन्' ! तुम शरणे जीव अनंते आते ।
कर्मकालिमा दूर भगाकर, तुम सम ही बन जाते ॥
जल०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शरणस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'अवबोध' सुतीर्थंकर हैं, मृत्यूमल्ल विजेता ।
इसीलिये यमराज भीति से, नमें तत्त्व के वेत्ता ॥
जल०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवबोधजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

जिनवर 'विक्रम' कामशत्रु हन, शिवरमणी को परणा ।
इसी हेतु से परमयोगिजन, लिया आपकी शरणा ॥
जल०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विक्रमजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री निर्घंटिक तीर्थंकर भवि, सघन विघन घन नाशें ।
श्री जिनपद वंदन करते वे, अंतर ज्योति प्रकाशें ॥
जल०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्घंटिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'हरीन्द्र' जिनदेवपाद को, हरि हर ब्रह्मा भजते ।
त्रैलोक्येश्वर शतइंद्रों से, वंद्य तुम्हें सब नमते ॥
जल०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरीन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नाथ 'परित्रेरित' पदपंकज, सुर किन्नर गण ध्यावें ।
नाना विध गुणगान करें औ, नाचें वीण बजावें ॥
जल०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परित्रेरितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर 'निर्वाणसूरि' पद, सुरपति नरपति पूजें ।
सकल अमंगल दोष दूर हों, मोह कर्म अरि धूजें ॥
जल०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाणसूरिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'धर्महेतु' जिन धर्मचक्रेश्वर, दश धर्मों के स्वामी ।
नाममंत्र भी परमधाम में, पहुँचावे जगनामी ॥
जल०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्महेतुजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

देव 'चतुर्मुख' चतुर्गती दुख, शून्य सकल सुख देवें ।
तिनके चरण कमल जो पूजें, परमामृत सुख लेवें ॥
जल० ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्मुखजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'सुकृतेंद्र' तीर्थंकर जग में, जब कृतकृत्य हुये हैं ।
तभी उन्हीं का आश्रय लेकर, भव्य प्रमुक्त हुये हैं ॥
जल०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकृतेंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'श्रुताम्बू' हिमपर्वत से, सकल भावश्रुत गंगा ।
निकली है इसमें अवगाहन, करके बनो निसंगा ॥
जल०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रुताम्बुजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'विमलार्क' विमल केवल रवि, विश्व प्रकाश करे हैं।
अमल विमल तुम चरणकमल रज, निर्मल चित्त करे है॥
जल गंधादिक अर्घ्य चढ़ाकर, पूजूं हर्ष बढ़ाके।
चिन्मय चिंतामणि निजआतम, पाऊँ पुण्य बढ़ाके ॥१॥६

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलार्कजिनेन्द्राय अर्घ्यं -।

नाथ 'देवप्रभ' देवदेव तुम, महादेव सुखदेवा।
इंद्र सकल परिवार शची मिल, करें निरंतर सेवा॥
जल०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं -।

श्री 'धरणेंद्र' जिनेंद्र धरा पर, धर्म सुधा बरसाते।
भविजन खेती सिंचन करके, भव्य कुमुद विकसाते॥
जल०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धरणेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'सुतीर्थ' जिन भावतीर्थ के, कर्ता तीर्थंकर हैं।
भव्य जीव निज भावद्रव्यमल धोते नैरंतर हैं॥
जल०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुतीर्थनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

'उदयानंद' जिनेश्वर निज में, ज्ञान उदय को करके।
परमधाम में नित्य विराजें, त्रिजग ज्ञान में झलकें॥
जल०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उदयानंदजिनेंद्राय अर्घ्यं --।

श्री 'सर्वार्थदेव' तीर्थंकर, सर्वमनोरथ पूरें।
भक्तजनों के अनायास ही, सर्वकर्म रिपु चूरें॥
जल०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वार्थदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

श्री 'धार्मिक' तीर्थंकर का नित, धर्म परायण जन्ता ।
आश्रय लेकर भववारिधि तर, वर लेती शिववनिता ॥

जल०॥२२॥

ॐ ह्री अर्हं श्री धार्मिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर श्री 'क्षेत्रस्वामि' हैं, तीन लोक के स्वामी ।
गुण अनंत के सागर अनुपम, सबके अंतर्यामी ॥

जल०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षेत्रस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

तीर्थेश्वर 'हरिचंद्र' जिनेश्वर, भवि लेते तुम शरणा ।
अप्सरियाँ नित तुम गुण गावें, भक्ति करें सुर ललना ॥

जल०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरिचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य—दोहा

कर्ममर्महर तीर्थंकर, प्रीतिंकर सुखकार ।
चौबीसों जिनराज को, मैं प्रणमूँ त्रयबार ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवज्रस्वाम्यादिहरिचंद्रपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं: ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

दोहा

पूरब भव में आपने, सोलह कारण भाय ।
तीर्थंकर पद पाय के, तीर्थ चलाया आय ॥१॥

रोला छन्द

दर्शविशुद्धि प्रधान, नित्यप्रती प्रभु पाके ।
अष्ट अंग से शुद्ध, दोष पच्चीस हटाके ॥
मनवचकाय समेत, विनय भावना भायी ।
मुक्ति महल का द्वार, भविजन को सुखदायी ॥२॥
व्रतशीलों में आप, नहिं अतिचार लगाया ।
संतत ज्ञानाभ्यास, करके कर्म खपाया ॥
भव तन भोग विरक्त, मन संवेग बढ़ाया ।
शक्ती के अनुसार, चउविधदान रचाया ॥३॥
बारह विध तपधार, आतम शक्ति बढ़ाई ।
धर्मशुक्ल से सिद्ध, साधु समाधि कराई ॥
दशविध मुनि की नित्य, वैयावृत्य किया था ।
सर्वशक्ति से पूर्ण, बहु उपकार किया था ॥४॥
श्री अर्हंत जिनेश, भक्ति हृदय में धर के ।
सूरि परम परमेश, गुण स्तवन उचरते ॥
उपाध्याय गुरुदेव, शिवपथ के उपदेष्टा ।
प्रवचन भक्ति समेत, गुण गण भजा हमेशा ॥५॥
षट् आवश्यक नित्य, करके दोष नशाया ।
हानि रहित परिपूर्ण, निज कर्तव्य निभाया ॥
मार्ग प्रभावन पाय, धर्म महत्त्व बढ़ाया ।
प्रवचन में वात्सल्य, कर निज गुण प्रगटाया ॥६॥
सोलह कारण सिद्ध, पंचकल्याणक पाया ।
दिव्य ध्वनी से नित्य, धर्म सुतीर्थ चलाया ॥
भव्य अनंतानंत, जग से पार किया है ।
मुक्ति रमा को पाय, शिवपुर धाम लिया है ॥७॥

मैं पूजूँ नित आप, प्रणमूँ भक्ति बढ़ाऊँ ।
जिस विध हो उस रीति, निज गुण संपति पाऊं ।।
चिच्चैतन्य स्वरूप चिन्मय ज्योति जलाऊं ।
पूर्ण 'ज्ञानमति' रूप, परं ज्योति प्रगटाऊं ।।८।।

दोहा

तुम प्रसाद से नाथ ! अब, पूरी हो मम आश ।
इसीलिये तुम पद कमल, नमूँ नमूँ धर आश ।।९।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ... ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ।।
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ।।

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० १२

[चौबीसी नं० ११]

पूर्व धातकीखंड द्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमानकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीताछंद

वर पूर्वधातकि द्वीप में, शुभ क्षेत्र ऐरावत कहा ।
तीर्थेश संप्रति काल के, मैं पूजहूँ नितप्रति यहाँ ॥
समता रसिक योगीश गण, नित वंदना उनको करें ।
आह्वानना विधि से सतत, हम अर्चना उनको करें ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर सवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—नाराचछंद

सिंधु नीर से जिनेंद्र पाद पद्म पूजिये ।
स्वात्म कर्मपंक धोय पूर्ण शुद्ध हूजिये ॥
वर्तमान तीर्थनाथ वंदना सदा करूं ।
धर्मशुक्ल ध्यान हेतु अर्चना मुदा करूं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ... ।

चंदनादि गंध से जिनेश चर्ण चर्चिये ।
मोहताप ध्वंस के अपूर्व शांति अर्जिये ॥वर्तमान०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो.....चंदनं... ।

धौत स्वच्छ श्वेत शालि पुंज को रचाइये ।
स्वात्म सौख्य ले अखंड पाप को नशाइये ।।वर्तमान०।।३।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ··· अक्षतं ···।

मोगरा जुही गुलाब वर्ण वर्ण के लिये ।
कामदेव के जयी जिनेश चर्ण में दिये ।।वर्तमान०।।४।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· पुष्पं ।

गूझिया इमरतियां बनाय थाल में भरें ।
पूर्ण तृप्त आपको चढ़ाय व्याधियां हरें ।।वर्तमान०।।५।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· नैवेद्यं ····।

दीपवर्तिका जले समस्त ध्वांत को हरे ।
पूजते तुम्हें प्रभो अपूर्व ज्योति को करे ।।वर्तमान०।।६।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ·····दीपं ···।

धूप गंध युक्त अग्निपात्र में जलाय हूँ ।
पाप कर्म को जलाय पुण्यराशि पाय हूँ ।।वर्तमान०।।७।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· धूपं ···।

संतरा अनार सेव औ बदाम भी लिये ।
मोक्ष सौख्य हेतु नाथ ! आपको चढ़ा दिये ।।वर्तमान०।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ··· फलं ···।

तोय गंध शालि पुष्प आदि अष्ट द्रव्य ले ।
तीन रत्न हेतु आप अर्घ्य से जजूँ भले ।।वर्तमान०।।९।।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ·····अर्घ्यं ····।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर शृंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

दोहा

ज्ञान दरश सुखवीर्यमय, गुण अनंत विलसंत ।
सुमन चढ़ाकर पूजहूँ, हरूं सकल जगफंद ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

दोहा

नाथ! 'अपश्चिम' आपको, जो पूजें धर प्रीत ।
परमानंद स्वरूप को, लहें बने शिवमीत ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपश्चिमजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'पुष्पदंत' जिनराज का, अद्भुत रूप प्रसिद्ध ।
इंद्र सहस दृग कर निरख, तृप्ति न पावे नित्त ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पदंतजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'अर्ह' जिनेश्वर आपने, मोह अरी कर अंत ।
पहुँचे झट शिवधाम में, मैं पूजूँ भगवंत ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्हंदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

रत्नत्रय को पूर्ण कर, 'श्रीचरित्र' जिनराज ।
मुक्तिरमा के पति हुये, पूज लहूँ शिवराज ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चरित्रनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'सिद्धानंद' जिनेंद्र को, वंदे त्रिभुवन भव्य ।
जजूँ सिद्धि के हेतु मैं, पूरें मुझ कर्त्तव्य ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धानंदजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

सप्त परमस्थान को, पाया 'नंदगदेव' ।
परमानंद प्रकाश हित, करूं आप पद सेव ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदगजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'पद्मकूप' जिनदेव हैं, पद्मालिंगित देह ।
जो जन पूजें भक्ति से, होते शीघ्र विदेह ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मकूपजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'उदयनाभि' जिनराज ने, जीव समास समस्त ।
बतलाकर रक्षा करी, पूजूँ उन्हें प्रशस्त ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री उदयनाभिजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'रुक्मेंदु' जिनराज हैं, षट् पर्याप्ति विहीन ।
चिन्मूरति विनमूर्ति को, नमूँ करें दुख क्षीण ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री रुक्मेंदुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'कृपालु' तीर्थेश का, तीर्थ तीर्थ उनहार ।
जो नितप्रति अर्चा करें, उतरें भवदधि पार ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृपालुजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'प्रौष्ठिल' जिनदेव ने, प्रबल कर्म अरिघात ।
भविजन को संबोधिया, पूज भरूं सुख सात ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रौष्ठिलजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सिद्धेश्वर' भव्यजन, सिद्धी में सुनिमित्त ।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, लहूँ स्वात्मसुख नित्त ॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सिद्धेश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'अमृतेंदु' जिन आपके, वचनामृत सुखकार ।
परमौषधि हैं जन्मरुज, हरें जजूँ पद सार ॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमृतेन्दुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'स्वामिनाथ' तीर्थेश की, भक्ति कल्पतरु सिद्ध ।
मैं पूजूँ नित भाव से, पाऊँ सौख्य समृद्ध ॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वामिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'भुवनलिंग' जिनवर तुम्हें, पूजें त्रिभुवन भव्य ।
त्रिभुवनमस्तक पर पहुँच, हो जाते कृतकृत्य ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री भुवनलिंगजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थंकर श्री 'सर्वरथ', परमारथ सुखदेत ।
श्रद्धा से मैं नित जजूँ, सर्वसिद्धि सुखहेत ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वरथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'मेघनंद' जिनराज हैं, परमामृत के मेघ ।
मैं पूजूँ नित चाव से, अजर अमर पद हेत ॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मेघनंदजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'नंदिकेश' आनंदघन, गणधर गण सुख हेत ।
मैं पूजूँ आनंद से, अनुपम आनंद हेत ॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदिकेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

तीर्थंकर 'हरिनाथ' के, गुण अनंत श्रुतमान्य ।
पूजूँ मैं निज सौख्य हित, सकल विश्व सन्मान्य ॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अधिष्ठ' जिनराज का, केवलज्ञान महान ।
दर्पणवत् उसमें सतत, झलके सकल जहान ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अधिष्ठजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'शांतिकदेव' जिनेंद्र ने, किये स्वदोष प्रशांत ।
पूर्णशांति के हेतु मैं, जजूँ मुक्ति के कांत ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री शांतिकदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'नंदीस्वामिन'! जो तुम्हें, नित पूजें धर प्रीत ।
अनुपम निज आनंदमय, पावें धाम पुनीत ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदीस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'कुंदपार्श्व' जिनदेव ने, पूर्ण सुयश विस्तार ।
भविजन को शिवपथ कहा, जजूँ सार में सार ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुंदपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'विरोचन' विश्व में, पूजित परम जिनेश ।
मैं पूजूँ शुद्धात्म हित, त्रिकरणशुद्धि समेत ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विरोचनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य

सप्तपरमस्थान गत, चौबीसों जिनराज ।
पूजूँ पूरण अर्घ्य ले, लहूँ पूर्ण साम्राज ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपश्चिमादिविरोचनपर्यन्तचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

ध्यानामृत पीकर भये, मृत्युंजय प्रभु आप ।
गाऊं तुम जयमालिका हरो सकल संताप ॥१॥

शंभु छंद

जय जय तीर्थंकर शिवसुख कर, जय जय अनवधि गुणसागर हो ।
जय जय सुखज्ञान अतींद्रियधर, जय जय अनुपम रत्नाकर हो ॥
तुमने मृत्युंजय बनने का, सबको सुखकर उपदेश कहा ।
जिसने तुम आज्ञा को पाला, उसने मृत्यु का क्लेश दहा ॥२॥
संन्यास विधी के तीन भेद, जो पंडित मरण कहे जाते ।
प्रायोपगमन इंगिनीमरण औ भक्तप्रतिज्ञा कहलाते ॥
जिसमें निज से पर से किंचित्, उपकार नहीं वह पहला है ।
जिसमें निज से वैयावृत्ती, पर से नहिं हो वह मंझला है ॥३॥

जो श्रेष्ठ संहनन के धारी, वे ही इनको कर सकते हैं ।
हैं आज हीन संहनन तीन, इसलिये नहीं बन सकते हैं ॥
बस भक्तप्रतिज्ञा का आश्रय, इस युग के मुनिगण लेते हैं ।
बारह वर्षों की उच्च अवधि, लेकर ही विधिवत् सेते हैं ॥४॥
अड़तालिस मुनि परिचर्या रत, निर्यापक बन सेवा करते ।
वह क्षपक मुनि संन्यास निरत, होकर जिनवचनों से वरतें ॥
क्रम क्रम से भोजन त्याग करे, वह अंत समय जल भी छोड़े ।
तन से बिल्कुल निर्मम होकर, आतम से ही नाता जोड़े ॥५॥
सबसे ही क्षमा कराकर पुन, स्वयमेव क्षमा परिणाम धरे ।
संपूर्ण कषायों को तजकर, उत्तम संन्यास अपूर्व करे ॥
इस विध कषाय औ काय उभय, को कृश करते तन को छोड़े ।
वह सात आठ भव से ज्यादा, नहिं ले यम की फांसी तोड़े ॥६॥
भगवन् ! तुम भक्ती से ऐसी, शक्ती मुझ में भी आ जावे ।
संन्यासविधी से मरण करूं, बस पुनर्जनम सब नश जावे ॥
मैं मृत्यु को उत्सव समझूँ, समतारस अमृत को पीऊं ।
क्षुध आदि व्याधि से खेद न हो, अपने में अनुभव रस पीऊं ॥७॥
बचपन से लेकर अब तक जो, मैंने पुण्यार्जित किया सही ।
उन सबका फल एकत्रित हो, प्रभु मुझे मिले बस एक यही ॥
जब प्राण प्रयाण करें मेरे, मम कंठ अंकुठित बना रहे ।
तुम नाम मंत्र अंतिम क्षण तक, मेरी जिह्वा पर चढ़ा रहे ॥८॥

सोरठा

प्रभु मैं याचूँ आज, जब तक मुक्ति नहीं मिले ।
भव-भव में संन्यास, सम्यग्ज्ञानमती सहित ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ..।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० १३

[चौबीसी नं० १२]

पूर्व धातकीखंडद्वीप ऐरावतक्षेत्र भविष्यत् तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीताछंद

वर पूर्वधातकि द्वीप में, है क्षेत्र ऐरावत कहा।
उसमें भविष्यत् तीर्थंकर, चौबीस होंगे दुखदहा॥
मैं नित्य उनको भक्ति से, थापूं यहां अर्चन करूं।
सम्यक्त्व क्षायिक प्राप्ति हेतू, नाथ पद वंदन करूं॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति तीर्थंकर समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितोर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—तोटकछंद

चिन्मूरति कल्पतरू जिन जी । जल लाय जजूं तुम पद जिन जी ॥
चउबीस जिनेश्वर नित्य नमूं । सब कर्म कषाय कलंक वमूं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं...।

मलयागिरि चंदन गंध मयी ।
जिन पूजत ताप नशें सबही ॥चउबीस०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ....चंदनं ...।

सित अक्षत धौत लिये कर में ।
जिन आगे पुंज धरूं शुचि मैं ॥चउबीस०॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .. अक्षतं ...।

मचकुंद गुलाब जुही सुमना ।
जिनपाद सरोज जजूँ सुमना ॥चउबीस०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ....।

घृतयुक्त मधुर पकवान भरे ।
जिन पूजत भूख पिशाचि हरें ॥चउबीस०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ....नैवेद्यं ...।

कर्पूर प्रदीप प्रद्योत करे ।
जिनपाद जजत अज्ञान हरे ॥चउबीस०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .. दीपं ।

दशगंध सुधूप जले रुचि से ।
सब कर्म कलंक भगे उत से ॥चउबीस०॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ।

फल सेव बदाम लिये कर में ।
जिन अर्चत श्रेष्ठ लहूँ वर मैं ॥चउवीस०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो····फलं····।

जल गंध प्रभृति वसु द्रव्य लिया ।
शिवहेतू अर्घ्य समर्प्य किया ॥चउवीस०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं····।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर शृंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

धर्मामृत मय वचन की, वर्षा से भरपूर ।
भविजन कलिमल धोवते, करो हमें सुखपूर ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सखीछंद

श्री 'प्रवरवीर' जिनदेवा, शत इंद्र करें तुम सेवा ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रवरवीरजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

जिनराज 'विजयप्रभ' सुनिये । त्रय शल्य दोष को हनिये ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विजयप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तीर्थंकर 'सत्पद' नामी । बारह गण के प्रभु स्वामी ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सत्पदजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

जिन 'महामृगेन्द्र' अनघ हैं । पीयूष सदृश तुम वच हैं ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महामृगेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं —।

'चिंतामणि' चिन्मय रूपा । चिंतित फल देय अनूपा ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चिंतामणिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनराज 'अशोकि' जगत में । सब शोक हरें इक क्षण में ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अशोकिजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'द्विमृगेंद्र' यम नाशा । निज में परमात्म प्रकाशा ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्विमृगेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'उपवासिक' देव तुम्हीं हो । भविजन भववैद्य तुम्हीं हो ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपवासिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'पद्मचंद्र' को ध्यावें । जन चित्तकमल विकसावें ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'बोधकेन्दु' जिनस्वामी । त्रिभुवन के अंतर्यामी ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बोधकेंदुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'चिंताहिम' जिनपद ध्याते । मुनिगण मनकमल खिलाते ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चिंताहिमजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'उत्साहिक' नाथ भुवन में । अतिशय गुण पूर्ण सबन में ।
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उत्साहिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

जिनदेव 'अपाशिव' ध्याऊँ । मन वांछित फल को पाऊँ ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपाशिवजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'देवजलाख्य' सुज्ञानी । सब भूत भविष्यत् जानी ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवजलजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिन 'नारिक' देव अतुल हैं । कर्मारि जयी निजतुल हैं ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नारिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिनराज महान् 'अनघ' हैं । पूजत ही हरते अघ हैं ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनघजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'नागेंद्र' जिनेश्वर जग में । अद्भुत गुणसिंधु प्रगट में ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नागेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'नीलोत्पल' जिनपद पद्मा । पूजत ही हो सुख सद्मा ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नीलोत्पलजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'अप्रकंप' भवविजयी । सुरनर वंदे नित नत ही ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्रकंपजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनदेव 'पुरोहित' नामा । तुम भक्ति करें शिवकामा ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुरोहितजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'भिंदकनाथ' नमें जो । भववारिधि शीघ्र तरे वो ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भिंदकनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'पार्श्वनाथ' दुखहर्ता । जो नाम जपे सुख भर्ता ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'निर्वाच' प्रभू गुण गाऊँ । नहिं फेर जगत में आऊँ ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाचजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिनदेव 'विरोषिक' नाथा । योगींद्र नमें नत माथा ॥
मैं पूजूँ मन वच तन से, प्रभु छूटूँ घन भव वन से ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विरोषिकनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्यं—शंभु छन्द

भावी तीर्थंकर जो मानें, वे आगे शिव लक्ष्मी लभते ।
पर निज भक्तों को पहले भी, सचमुच शिव राज्य दिला सकते ॥
मैं निज समता रस का इच्छुक, अतएव शरण में आया हूँ ।
बस पूरण अर्घ्य चढ़ा करके, गुण पूरण करने आया हूँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीरनाथादिविरोषिकनाथपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

परम चिदंबर चित्पुरुष, चिंच्चितामणि देव ।
गाऊँ तुम गुणमालिका, करूँ सतत तुम सेव ॥१॥

रोला छन्द

जय जय श्री जिनदेव, विषय कषाय विजेता ।
जय जय तुम पद सेव, करते श्रुत के वेत्ता ॥
प्रभु तुमने छह द्रव्य, गुणपर्याय समेता ।
दिव्यज्ञान से देख, बतलाते शिवनेता ॥२॥

जीव तत्त्व हैं तीन, भेद कहे शुभ कामा ।
बहिरातम अंतर आतम औ परमात्मामा ॥
प्रभु मैं दीन अनाथ, मैं दुखिया संसारी ।
जन्म मरण के दुःख, मैं भरता अतिभारी ॥३॥

मेरा होवे जन्म, मेरा ही मरणा हो ।
मुझ में इष्ट वियोग, आदिक दुख भरना हो ॥
मेरे धन जन मित्र, ये परिवार घनेरे ।
मैं इनका प्रतिपाल, ये सब हैं नित मेरे ॥४॥

यह बहिरात्म स्वरूप, दर्शन मोह जनित है ।
इसके वश हे नाथ ! मैं दुख सहा अधिक है ॥
निश्चय से मैं एक, चिच्चैतन्य स्वरूपी ।
परमानंद स्वरूप, अविचल अमल अरूपी ॥५॥

शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध, सिद्धस्वरूप हमारा ।
कर्मकलंक विहीन, सकल जगत् से न्यारा ॥
ये वर्णादिक रूप, पुद्गल के गुण मानें ।
रागादिक भी भाव, औपाधिक ही मानें ॥६॥

क्षायोपशमिक सुज्ञान, वे भी कर्म जनित हैं।
परम शुद्ध चिद्भाव, मेरा ज्ञान अमित है॥
मैं भगवान स्वरूप, जनम मरण विरहित हूँ।
चिन्मय ज्योति स्वरूप, केवलज्ञान सहित हूँ॥७॥

टंकोत्कीर्ण सुएक, ज्ञायक भाव हमारा।
सब प्रदेश में व्याप्त, सब कुछ जानन हारा॥
यद्यपि मैं व्यवहार, नय से कर्म सहित हूँ।
जनम मरण दुख पूर्ण, नाना व्याधि सहित हूँ॥८॥

फिर भी निश्चय नीति, तत्त्वस्वरूप प्रकाशे।
नय व्यवहार सदैव, धर्म तीर्थ को भाषे॥
दोनों नय सापेक्ष, वस्तु स्वरूप बतावें।
सम्यग्दृष्टि जीव, द्वय नय आश्रय पावें॥९॥

अविरत सम्यग्दृष्टि, जघन्य अंतर आत्मा।
पंचम से ग्यारंत, मध्यम अंतर आत्मा॥
बारहवें गुणस्थान, मुनिवर क्षीणकषायी।
उत्तम अंतर आत्म, जड़ से मोह नशायी॥१०॥

श्री अर्हंत जिनेंद्र, कहें सकल परमात्मा।
नित्य निरंजन सिद्ध, रहें निकल परमात्मा॥
इस विध जीव सुतत्त्व, बाकी पाँच अजीवा।
पुद्गल धर्म अधर्म, नभ औ काल सदीवा॥११॥

करिये कृपा जिनेंद्र ! बहिरात्मत्व तजूँ मैं।
अंतर आतम होय, पद परमात्म भजूँ मैं॥
जब तक निजपद नाहिं, तब तक भक्ति तुम्हारी।
अचल रहे हे नाथ ! कभी न होऊं दुखारी॥१२॥

घत्ता

श्री जिनपद प्रीती, अविचलरीती, जो जन मन वच तन करहीं ।
सो 'ज्ञानमती' से, स्वगुणरती से, जिनगुणसंपत्ती वरहीं ॥१३॥

ॐ ह्रीं पूर्वधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं ॰ ।

शांतये शांतिधारा । दिव्यपुष्पांजलिः ।

गीता छंद

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० १४

[चौबीसी नं० १३]

पश्चिम धातकीखण्ड भरतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

अपर धातकी में दक्षिण दिश, भरतक्षेत्र शुभ सोहे ।
उसके आर्यखंड में नित छह, काल परावृत हो हैं ॥
चौथे युग में भूतकाल के, तीर्थंकर चौबीसों ।
आह्वानन कर मैं नित पूजूँ, छूटूँ दुःख वनी सों ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—भुजंगप्रयात छन्द

महापुण्य भंडार हो तीर्थनामी ।
जजूँ नीर से मैं तुम्हें मोक्षगामी ॥
चतुर्विंशती तीर्थ चक्रेश वंदूँ ।
महापंच परिवर्तनों को विखंडूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ...।

महाशांति सिंधू सभी शील पूरे ।
जजूँ आपको गंध से ताप चूरें ॥चतुर्विंशती०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो....चंदनं....।

सुचित्पिंड आनंदकंदा तुम्हीं हो ।
जजूँ शालि के पुंज से आप ही को ।।चतुर्विंशती०।।३।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... अक्षतं ...।

रतीनाथ के आप ही तो विजेता ।
जजूँ पुष्प से आपको मुक्तिनेता ।।चतुर्विंशती०।।४।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो.....पुष्पं ।

सभी दोष से शून्य हो आप ही तो ।
परं तृप्ति हेतू जजूँ मैं तुम्हीं को ।।चतुर्विंशती०।।५।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ..।

परं ज्योतिधारी तुम्हें दीप से मैं ।
जजूं ज्योति अंतर जगे ज्ञान की मे[1] ।।चतुर्विंशती०।।६।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो.....दीपं ।

अगनिपात्र में धूप खेऊं रुची से ।
सदा सौख्य हेतू भजूँ मन शुची से ।।चतुर्विंशती०।।७।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं ....।

अनंनास नींबू फलों से जजूँ मैं ।
सुसर्वार्थसिद्धी फलों को भजूँ मैं ।।चतुर्विंशती०।।८।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....फलं ..।

वसूद्रव्य ले अर्घ्य को नित चढ़ाऊं ।
करो पूर्ण संयम कि मैं मोक्ष पाऊं ।।चतुर्विंशती०।।९।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबधिभरतक्षत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .. अर्घ्यं ।

---

१. मेरे ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर्रासंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

सब कर्मों में एक ही, मोह कर्म बलवान ।
उसके नाशन हेतु मैं, पूजूँ भक्ति प्रधान ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छंद

'वृषभनाथ' जिनदेव, तुम पदपद्म जजें जो ।
सर्वमनोरथ पूर, शिवपद सद्म भजें सो ॥
पूजूँ मन हरषाय, तुम गुण अनुपम गाके ।
सप्त परम स्थान, पाऊँ पुण्य बढ़ाके ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'प्रियमित्र' जिनेश, मुनिगण नित तुम वंदें ।
परमसुखास्पद पाय, शाश्वत सुख अभिनंदें ॥पूजूँ०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रियमित्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

'शांतिनाथ' भगवान, त्रिभुवन शांति विधाता ।
जो जन आश्रय लेय, पावें निज सुखसाता ॥पूजूँ०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शांतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··।

'सुमतिनाथ' जिनराज, भक्तन कुमति निवारें ।
जो पूजें धर ध्यान, आतम काज संभारें ।।पूजूँ०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमितनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··· ।

नाथ 'आदिजिन' आप, करते अमृत वर्षा ।
सुर किन्नर गुण गान, करते हर्षा हर्षा ।।पूजूँ०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ·· ।

श्री 'अतिव्यक्त' जिनेश, तुम गुण व्यक्त हुये हैं ।
सुरगण भक्ति समेत, गुण अनुरक्त हुए हैं ।।पूजूँ०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतिव्यक्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···· ।

'कलासेन' जिनदेव, सर्व कला गुण पूरे ।
भक्तों के स्वयमेव, मोहअरी को चूरें ।।पूजूँ०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कलासेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···· ।

नाम 'कर्मजित' नाथ, सार्थक आप किया है ।
कर्म जीतने हेतु, मैंने शरण लिया है ।।पूजूँ०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कर्मजित्जिनेन्द्राय अर्घ्यं ·· ।

समवशरण में आप, मध्य विराज रहे हैं ।
श्री 'प्रबुद्ध' जिनराज, भव्य प्रबोध रहे हैं ।।पूजूँ०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रबुद्धजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··· ।

कमलासन पर आप, अधर विराज रहे हैं ।
श्रीमन् 'प्रव्रजित' देव, अनुपम विभव लहे हैं ।।पूजूँ०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रव्रजितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··· ।

श्री 'सुधर्म' जिनराज, सत्य धर्म उपदेशें ।
दश धर्मों से नित्य, भवि को शिवपथ देशें ।।पूजूँ०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुधर्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं · ।

'तमोदीप' जिननाथ, त्रिभुवनध्वांत विनाशें ।
मुनिगण मन में धार, निज आतम प्रतिभासें ।।पूजूँ०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तमोदीपजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···· ।

'वज्रनाथ' जिनदेव, निज को शुद्ध किया है।
मुनिगण भी तुम सेव, कर आनन्द लिया है॥
पूजूँ मन हरषाय, तुम गुण अनुपम गा के।
सप्त परम स्थान, पाऊँ पुण्य बढ़ा के॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'बुद्धनाथ' तीर्थेश, तुम चरणांबुज ध्याके।
भव्य धरें सद्बुद्धि, आतम अनुभव पाके॥पूजूँ०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बुद्धनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'देव प्रबन्ध' जिनेन्द्र, प्रभु तुम सौम्य छवी है।
फिर भी मुनिगण चित्त, पंकज हेतु रवी है॥पूजूँ०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रबंधदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'अतीत' जिननाथ, भूत भविष्यत् संप्रति।
तीन काल की सर्व, वस्तू जानो नितप्रति॥पूजूँ०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतीतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'प्रमुख' देव तीर्थेश, तुम वचनामृत पीके।
जन हरते भव व्याधि, सुख पाते शिव श्री के॥पूजूँ०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रमुखजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'पल्योपम' जिन नाम, अनुपम चिंतामणि हैं।
कंठधरें सुरभक्त, तुम अनुपम गुण मणि हैं॥पूजूँ०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पल्योपमजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'अकोप' जिनदेव, तुम पद आश्रय पाके।
सर्व कषाय विनाश, भव्य बसे शिव जाके॥पूजूँ०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अकोपजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'निष्ठित' आप, पूर्ण कृतार्थ भये हैं।
इसीलिये जन आय, तुम पद भक्त भये हैं॥पूजूँ०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निष्ठितजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

आशा पाश विनाश, परमानन्द लिया है ।
'मृगनाभी' जिनराज, परणी मुक्ति तिया है ।।पूजूँ८।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मृगनाभिजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'देवेन्द्र' महान्, तीर्थंकर पद पाके ।
कर्म कलंक निवार, सुख भोगें निज पाके ।।पूजूँ०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवेन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

जो अध्यातम निष्ठ, जिन सम आप विलोकें ।
वे 'पदस्थ' तीर्थेश, भक्त बसें शिव लोके ।।पूजूँ०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पदस्थजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

श्री 'शिवनाथ' प्रधान, शिवमय मंगलकर्त्ता ।
जो पूजें धर ध्यान, शीघ्र बने शिवभर्ता ।।पूजूँ०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शिवनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

पूर्णार्घ्यं—दोहा

मैं अतीत जिनदेव को, पूजूं भक्ति समेत ।
पूरण अर्घ्यं चढ़ाय हूँ, पूर्ण सौख्य के हेत ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभदेवादिशिवनाथपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ··।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

अतिअद्भुत लक्ष्मी धरें, समवसरण प्रभु आय ।
तुम धुनि सुन भविवृन्द नित, हरें सकल संताप ।।१।।

शंभु छन्द

जय जय त्रिभुवन पति का वैभव, अन्तर का अनुपम गुणमय है ।
जो दर्श ज्ञान सुख वीर्य रूप, आनन्त्य चतुष्टय निधिमय है ॥
बाहर का वैभव समवसरण, जिसमें असंख्य रचना मानी ।
जब गणधर भी वर्णन करते, थक जाते मनपर्यय ज्ञानी ॥२॥

यह समवसरण की दिव्य भूमि, इक हाथ उपरि पृथ्वी तल से ।
द्वादश योजन उत्कृष्ट कही, इक योजन हो घटते क्रम से ॥
यह भूमि कमल आकार कही, जो इंद्रनीलमणि निर्मित है ।
है गंधकुटी इस मध्य सही, जो कमल कर्णिका सदृश है ॥३॥

पंकज के दल सम बाह्य भूमि, जो अनुपम शोभा धारे है ।
इस समवसरण का बाह्य भाग, दर्पण तल सम रुचि धारे है ॥
सब बीस हजार हाथ ऊँचा, यह समवसरण अति शोभा है ।
एकेक हाथ ऊँची सीढ़ी, सब बीस हजार प्रमित शोभे ॥४॥

पंगू अंधे रोगी बालक, औ वृद्ध सभी जन चढ़ जाते ।
अंतर्मुहूर्त के भीतर ही, यह अतिशय जिन आगम गाते ॥
इसमें शुभ चार दिशाओं में, अति विस्तृत महावीथियाँ हैं ।
वीथी में मानस्तम्भ कहे, जिनकी कलधौत पीठिका हैं ॥५॥

इक योजन से कुछ अधिक तुँग, बारह योजन से दिखते हैं ।
इनमें हैं दो हजार पहलू, स्फटिक मणी के चमके हैं ॥
उनमें चारों दिश में ऊपर, सिद्धों की प्रतिमायें राजें ।
मानस्तंभों की सीढ़ी पर, लक्ष्मी की मूर्ति अतुल राजें ॥६॥

ये अस्सी कोशों तक सचमुच, अपना प्रकाश फैलाते हैं ।
जो इनका दर्शन करते हैं, वे निज अभिमान गलाते हैं ॥
मानस्तंभों के चारों दिश, जल पूरित स्वच्छ सरोवर हैं ।
जिनमें अति सुन्दर कमल खिले, हंसादि रवों से मनहर हैं ॥७॥

ये प्रभु का सन्निध पा करके, ही मान गलित कर पाते हैं ।
अतएव सभी अतिशय भगवन् ! तेरा ही गुरुजन गाते हैं ॥
मैं भी प्रभु तुम सन्निध पाकर, संपूर्ण कषायों को नाशूँ ।
प्रभु ऐसा वह दिन कब आवे, जब निज में निज को परकाशूँ ॥८॥
जिननाथ ! कामना पूर्ण करो, जिन चरणों में आश्रय देवो ।
जब तक नहिं मुक्ति मिले मुझको, तब तक ही शरण मुझे लेवो ॥
तब तक तुम चरण कमल मेरे, मन में नित स्थिर हो जावें ।
जब तक नहिं केवल 'ज्ञानमती', तब तक मम मन तुम पद ध्यावे ॥९॥

दोहा

तीर्थंकर गुणरत्न को, गिनत न पावें पार ।
तीन रत्न के हेतु मैं, नमूँ अनंतों बार ॥१०॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० १५

[चौबीसी नं० १४]

पश्चिम धातकीखंड भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पश्चिम द्वीपधातकी में वर, अचलमेरु नित सोहे ।
उसके दक्षिण दिश में, सुन्दर भरत क्षेत्र मन मोहे ॥
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर, चौथे युग में जानो ।
आह्वानन कर पूजन करके, भव भव का दुःख हानो ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—स्रग्विणी छन्द

कर्ममल धोयके आप निर्मल भये ।
नीर ले आप पद कंज पूजत भये ॥
तीर्थ करतार चौबीस को मैं जजूँ ।
कर्मनिर्मूल कर स्वात्म अमृत चखूं ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं····।

मोह संतापहर आप शीतल भये ।
गंध से पूजते सर्वसंकट गये ॥तीर्थ०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो·····चंदनं ···।

नाथ अक्षय सुखों की निधी आप हो ।
शालि के पुंज धर पूर्ण सुख प्राप्त हो ।।तीर्थ०।।३।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... अक्षतं ...।

काम को जीत कर आप शंकर बने ।
पुष्प से पूज कर हम शिवंकर बनें ।।तीर्थ०।।४।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... पुष्पं ।

भूख तृष्णादि बाधा विजेता तुम्हीं ।
सर्व पकवान से पूज व्याधी हनी ।।तीर्थ०।।५।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... नैवेद्यं ....।

दोष अज्ञान हर पूर्ण ज्योती धरें ।
दीप से पूजते ज्ञान ज्योती भरें ।।तीर्थ०।।६।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... दीपं ।

शुक्लध्यानाग्नि से कर्म भस्मी किये ।
धूप से पूजते स्वात्म शुद्धी किये ।।तीर्थ०।।७।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... धूपं ।

पूर्ण कृतकृत्य हो नाथ ! इस लोक में ।
मैं सदा पूजहूं श्रेष्ठ फल से तुम्हें ।।तीर्थ० ।।८।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... फलं ...।

सर्वसंपत्ति धर नाथ अनमोल हो ।
अर्घ्य से पूजते स्वात्म कल्लोल हो ।।तीर्थ० ।।९।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... अर्घ्यं ..।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँ जग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

कोटि सूर्य से प्रभ अधिक, अनुपम आतम तेज ।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, कर्माञ्जन हर हेत ॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

दोहा

'विश्वचंद्र' तीर्थेश नित, करते भवि मन बोध ।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, पाऊँ निज पर बोध ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्वचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'कपिल' अतुल्य सुख, लक्ष्मी के भंडार ।
सुर इंद्रों से वंद्य पद, जजूँ हनूँ संसार ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कपिलजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

पंचपरावर्तन स्वयं, नाश भये शिव ईश ।
'वृषभदेव' के पद कमल, नमूँ नमा निज शीश ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'प्रियतेज' जिनेंद्र का, मानस्तंभ अनूप ।
अस्सी कोशों तक करे, प्रभा जजूँ जिनरूप ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रियतेजोजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'प्रशमजिन' क्रोध से, रहित तथापी आप ।
कर्मशत्रु संहारिया, जजूँ हरूँ भव ताप ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रशमजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'विषमांग' जिनेंद्र तुम, साम्य सुधारस लीन ।
समरस अनुभव के लिये, मैं पूजूँ भवहीन ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विषमांगजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'चारितनाथ' जिनेश का, यथाख्यात चारित्र ।
पंचमचारित हेतु मैं, जजूँ हरूँ दारिद्र ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री चारित्रनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'प्रभादित्य' जिननाथ की, प्रभा अलौकिक ख्यात ।
कोटि सूर्य लज्जित हुये, पूजूँ मैं सुखदात ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभादित्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'मुंजकेश' जिन आपने, दशमुंडन का रूप ।
बतलाया मुनिराज को, पूजूँ तिहुंजग भूप ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुंजकेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नग्न दिगंबर रूप तुम, 'वीतवास' अभिराम ।
दुःखमूल परिग्रह कहा, नमूँ नमूँ शिवधाम ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीतवासजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नाथ 'सुराधिप' आप हैं, देवदेव के देव ।
पूजूँ भक्ति समेत मैं, लहूँ सौख्य स्वयमेव ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुराधिपजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'दयानाथ' मुझ दीन पर, दया करो निज जान ।
मोह दुष्ट से रक्ष कर, भरो भेद विज्ञान ॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री दयानाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सहस्रभुज' आपको, सहस नेत्र से देख ।
इंद्र तृप्त नहिं होत हैं, मैं पूजूँ पद पेख ॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सहस्रभुजजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'जिनसिंह' महान तुम, कामहस्ति मद चूर ।
पाई आतम शक्ति को, जजूँ सौख्य भर पूर ॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनसिंहजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'रैवतनाथ' ने, घात घातिया कर्म ।
भविजन को उपदेशिया, पूज लहूँ निज मर्म ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री रैवतनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'बाहु स्वामि' गुण के धनी, कीर्ति ध्वजा फहरंत ।
जो पूजें तुम पद कमल, स्वातम सुख विलसंत ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री बाहुस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

तीर्थंकर 'श्रीमालि' का, समवसरण अतिभव्य ।
मैं पूजूँ अतिभाव से, बनूं पूर्ण कृतकृत्य ॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रीमालिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

पूज्य 'अयोग' जिनेश तुम, मन वच काय निरोध ।
शेष कर्म चकचूर कर, किया मृत्यु प्रतिरोध ॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अयोगदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

प्रभू 'अयोगीनाथ' ने, शुक्ल ध्यान को ध्याय ।
निज आतम को शुद्धकर, अविचल शिवपद पाय ॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अयोगिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'कामरिपु' तीर्थंकर, कामदेव मद नाश ।
धर्मतीर्थ के चक्र को, धारा मुक्ति सनाथ ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री कामरिपुजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री जिनवर 'आरंभ' तुम, सब आरंभ सुत्याग ।
निरारंभ परिग्रह रहित, कीना स्वपर विभाग ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री आरम्भजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'नेमिनाथ' भगवान तुम, नियम सार उपदेश ।
रत्नत्रय द्वयविध प्रगट, बने पूर्ण परमेश ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'गर्भज्ञाति' जिनराज तुम, पुनर्जन्म से मुक्त ।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय मैं, होऊँ कर्म विमुक्त ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गर्भज्ञातिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'एकार्जित' स्वामि को, जो पूजें धर भाव ।
अतिशय पुण्य उपार्ज्य के, पावें चारित नाव ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री एकार्जितजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—रोला छन्द

पंचमहाकल्याण, स्वामी शिवपथ नेता ।
सकल तत्त्वविद् नाथ, कर्माचल के भेत्ता ॥
अष्ट द्रव्य से नित्य, प्रभुपद पूज रचाऊँ ।
चिच्चैतन्य स्वरूप, निज अनुभव सुख पाऊँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्वचंद्राद्येकार्जितस्वामिपर्यन्तचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।
शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

दोहा

घाति चतुष्टय घात कर, प्रभु तुम हुए कृतार्थ ।
नव केवल लब्धी रमा, रमणी किया सनाथ ॥१॥

चाल—हे दीनबन्धु श्रीपति

प्रभु दर्श मोहनीय को निर्मूल किया है ।
सम्यक्त्व क्षायिकाख्य को परिपूर्ण किया है ॥
चारित्रमोह का विनाश आपने किया ।
क्षायिक चारित्र नाम यथाख्यात को लिया ॥२॥

संपूर्ण ज्ञानावर्ण का जब आप क्षय किया ।
कैवल्य ज्ञान से त्रिलोक जान सब लिया ॥
प्रभु दर्शनावरण के क्षय से दर्श अनंता ।
सब लोक औ अलोक को लखते हो तुरंता ॥३॥
दानांतराय नाश के अनंत प्राणि को ।
देते अभय उपदेश तुम कैवल्य दान जो ॥
लाभांतराय का समस्त नाश जब किया ।
क्षायिक अनंत लाभ का तब लाभ प्रभु लिया ॥४॥
जिससे परमशुभ सूक्ष्म दिव्य नंत वर्गणा ।
पुद्गलमयी प्रत्येक समय पावते घना ॥
जिससे न कवलाहार हो फिर भी तनू रहे ।
कुछ हीन पूर्वकोटि वर्ष तक टिका रहे ॥५॥
भोगांतराय नाश के अतिशय सुभोग हैं ।
सुरपुष्पवृष्टि गंध उदकवृष्टि शोभ हैं ॥
पद के तले वर पद्म रचें देवगण सदा ।
सौगंध्यशीत पवन आदि सौख्य शर्मदा ॥६॥
उपभोग अंतराय का क्षय हो गया जभी ।
प्रभु सातिशय उपभोग को भी पा लिया तभी ॥
सिंहासनादि छत्र चमर तरु अशोक हैं ।
सुरदुंदुभी भाचक्र दिव्य ध्वनि मनोज्ञ हैं ॥७॥
वीर्यान्तराय नाश से आनन्त्य वीर्य है ।
होते न कभी श्रांत आप महावीर हैं ॥
प्रभु चार घाति नाश के नव लब्धि पा लिया ।
आनन्त्यज्ञान आदि चतुष्टय प्रमुख किया ॥८॥
प्रभु आप सर्वशक्तिमान कीर्ति को सुना ।
इस हेतु से ही आज यहाँ मैं दिया धरना ॥

अब तारिये न तारिये यह आपकी मरजी ।
बस 'ज्ञानमती' पूरिये यदि मानिये अरजी ॥९॥

दोहा

गुण समुद्र के गुण रतन, को गिन पावे पार ।
मात्र अल्पमती मैं पुनः, क्या कह सकूँ अबार ॥१०॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० १६

[चौबीसी नं० १५]

पश्चिम धातकीखंडद्वीप भरतक्षेत्र भावीतीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—अडिल्ल छन्द

अचलमेरु के दक्षिण में शुभ भरत है।
उसके चौथे युग में जिन वृष करत हैं॥
भाविकाल के चौबिस जिनवर जानिये।
आज यहीं थापन कर पूजन ठानिये॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वोपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—तोटक छंद

परिपूर्ण विशुद्ध गुणांबुधि हो, जलसे तुम पाद जजूँ खुश हो।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा, शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

तुम जीत स्वदोष भये जिनजी। हम गंध लिये तुम पूजत जी।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा। शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो..... चंदनं....।

सित तंदुल के इत पुंज धरूं । निज अक्षय सौख्य तुरंत भरूं ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।३।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

सुरद्रुम के पुष्प लिये कर में । पदपद्म जजूँ भक्ती भर मैं ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।४।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं ....।

बरफी गुझिया पकवान भरें । तुम पूजत ही भव रोग हरें ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।५।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ....।

घृतदीपक ज्योति अंधेर हरे । तुम पाद जजूँ भ्रम दूर करे ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।६।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... दीपं ।

प्रभुध्यान अगनि में शुद्ध हुये । हम खेवत धूप विशुद्ध हुये ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।७।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं ।

अखरोट बदाम अनार भले । तुम पूजत ही फल मोक्ष फले ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।८।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....फलं....।

वसुद्रव्य मिलाकर अर्घ्य किया । तुम अर्पत सौख्य अनर्घ्य लिया ।
चउवीस जिनेश्वर सौख्य प्रदा । शतइंद्र जजें तुम पाद मुदा ।।९।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....अर्घ्यं ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर शृंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ

सोरठा

स्थिति औ अनुभाग, बंध कषायों से कहा ।
इनके नाशन हेतु, पुष्पांजलि कर पूजहूँ ॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छन्द

'रक्तकेश' जिननाथ, भव भय व्याधी विनाशी ।
मैं पूजूँ नित आप, चिन्मय ज्योति विकाशी ॥
सात भयों से दूर, पूर्ण अभय पद दाता ।
जो पूजें तुम नित्य, पावें अनुपम साता ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रक्तकेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'चक्रहस्त' जिनदेव, धर्म चक्र के धारी ।
समरस अमृत हेतु, मैं पूजूँ भवतारी ॥सात०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चक्रहस्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'कृतनाथ' जिनेंद्र, जो निज मन तुम धारें ।
आप तरें भवसिंधु, औरन को भी तारें ॥सात०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'परमेश्वर' आप, ब्रह्मा विष्णु महेशा ।
शुद्ध बुद्ध जिननाथ, परमानन्द हमेशा ।।सात०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाम सुमूर्ति' स्वरूप, चिन्मय मूर्ति तुम्हीं हो ।
ज्ञानमूर्ति अनमूर्ति, अनुपम ज्योति तुम्हीं हो ।।सात०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमूर्तिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'मुक्तिकांत' भगवान्, त्रिभुवन के गुरु माने ।
अगुरुलघू गुण पूर्ण, लोक शिखर स्थाने ।।सात०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुक्तिकांतजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

देव 'निकेशि' महान्, तुम पद हृदय कमल में ।
जो धारें धर प्रीति, होते पूर्ण विमल वे ।।सात०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निकेशिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'प्रशस्त' जिनराज, कर्म कुलाचल चूरे ।
जो तुम भक्ति करंत, समरसमय सुख पूरें ।।सात०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रशस्तजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'निराहार' जिन तृप्त, कवलाहार न करते ।
केवलज्ञानी आप, अनंत चतुष्टय धरते ।।सात०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निराहारजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

देव 'अमूर्त' स्वरूप, चिन्मूरति गुणराशी ।
वर्णादिक से शून्य, चिन्मय ज्योति प्रकाशी ।।सात०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमूर्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

नाममंत्र 'द्विजनाथ', जो सुमिरे नित मन में ।
मोहसर्प विष दूर, करता वह इक क्षण में ।।सात०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री द्विजनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'श्रेयोगत' तीर्थेश, भविजन को सुखदाता ।
जो तुम नमत हमेश, पावें निज सुख साता ।।सात०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री श्रेयोगतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'अरुजनाथ' भगवान्, भवरुज वैद्य तुम्हीं हो ।
तुम पदकंज प्रणाम, इन्द्र करें नत ही हो ।।
सात भयों से दूर, पूर्ण अभय पद दाता ।
जो पूजें तुम नित्य, पावें अनुपम साता ।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अरुजनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'देवनाथ' महादेव, तुम देवन के देवा ।
गणधर मुनिगण नित्य, करते तुम पद सेवा ।।सात०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

नाथ 'दयाधिक' आप, करुणासिंधु जगत में ।
जो तुम पद अनुरक्त, होते मगन अपन में ।।सात०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दयाधिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'पुष्पनाथ' जिनदेव, कुसुमबाण को जीता ।
करते देव हमेश, पुष्पवृष्टि मन प्रीता ।।सात०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

प्रभु 'नरनाथ' जिनेंद्र, नरसुर के सुख भोगे ।
तीर्थंकर पद धार, मुक्ति रमापति होंगे ।।सात०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नरनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'प्रतिभूत' महान्, धर्मधुरंधर मानें ।
सुरकिन्नर गण आय, रुचि से पूजा ठानें ।।सात०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रतिभूतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'नागेंद्र' जिनेंद्र, तुम अनुराग करे जो ।
कर्म अरी को चूर, पूरण सौख्य भरे सो ।।सात०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नागेंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नाथ 'तपोधिक' आप, आराधन के स्वामी ।
दर्शन ज्ञान स्वरूप, द्वादश गण के स्वामी ।।सात०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपोधिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

प्रभो 'दशानन' देव, दश विध धर्म प्रकाशे ।
समवसरण के बीच, भवि मन कमल विकासें ।।सात०।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दशाननजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'आरण्यक' देव, परम पुरुष जगनामी ।
पुण्य महोदधि आप, यश गावें शिवगामी ।।सात०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आरण्यकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'दशानीक' भगवान्, चौंतिस अतिशय पाके ।
सुख पावेंगे नित्य, मोक्ष पुरी में जाके ।।सात०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दशानीकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'सात्विक' जिनराज, सब सत्त्वों के पालक ।
षट्कायों की नित्य, दया करें अघ टालक ।।सात०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सात्विकजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्यं

परमहंस परमेश, श्री चौवीस जिनेशा ।
परम पिता भुवनेश, नमत शतेंद्र हमेशा ।।
सात भयों से दूर, पूर्ण अभय पद दाता ।
जो पूजें तुम नित्य, पावें अनुपम साता ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रक्तकेशादिसात्विकपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

सोरठा

नित्य निरंजन देव, परमहंस परमातमा ।
तुम गुणमणि की माल, धारूं कंठ विषे सदा ।।१।।

नरेन्द्र छन्द

चिन्मय ज्योति चिदंबर चेतन, चिच्चैतन्यसुधाकर ।
जय जय चिन्मूरत चिंतामणि, चिंतितप्रद रत्नाकर ॥
आप अलौकिक कल्पवृक्ष प्रभु, मुंहमांगा फल देते ।
आप भक्त चक्री सुरपति, तीर्थंकर पद पा लेते ॥२॥
जो तुम चरण-सरोरुह पूजें, जग में पूजा पावें ।
जो जन तुमको चित में ध्याते,सब जग उनको ध्यावें ॥
जो तुम वचनसुधारस पीते, सब उनके वच पालें ।
जो तुम आज्ञा पालें भविजन, उन आज्ञा नहिं टालें ॥३॥
जो तुम सन्मुख भक्तिभाव से, नृत्य करें खुश होके ।
तांडव नृत्य करें उन आगे, सुरपति भी मुद होके ॥
जो तुम गुण को नित्य उचरते, भवि उनके गुण गाते ।
जो तुम सुयश सदा विस्तारें, वे जग में यश पाते ॥४॥
मन से भक्ति करें जो भविजन, वे मन निर्मल करते ।
वचनों से स्तुति को पढ़कर, वचनसिद्धि को वरते ॥
काया से अंजलि आदि कर, तन का रोग नशाते ।
त्रिकरण शुचि से वंदन करके, कर्मकलंक नशाते ॥५॥
इस विध तुम यश आगम वर्णे, श्रवण किया है जब से ।
तुम चरणों में प्रीति लगी है, शरण लिया मैं तब से ॥
हे जिननाथ ! कृपा ऐसो अब, मुझपर तुरतहि कीजे ।
'सम्यग्ज्ञानमती' लक्ष्मी को, देकर निजसम कीजे ॥६॥

दोहा

परमश्रेष्ठ चौबीस जिन, पंचकल्याणक ईश ।
नमूं नमूं तुमको सदा, श्रद्धा से नत शीश ॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं ....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० १७
[चौबीसी नं० १६]

पश्चिम धातकीखंडद्वीप ऐरावतक्षेत्र भूतकाल तीर्थंकरपूजा

स्थापना—गीता छन्द

शुभ धातकी वर द्वीप में, पश्चिम दिशा में जानिये।
शुभ क्षेत्र ऐरावत अचल, मेरु के उत्तर मानिये॥
तिसमें हुए चौबीस तीर्थंकर अतीते काल में।
तिनकी करूँ आह्वानना, पूजूँ सदा खुशहाल मैं॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधीऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टक—स्रग्विणी छंद

घातिया पाप मल धोलिया आपने ।
नीर से मैं जजूँ स्वात्म मल धोवने ॥
भूतकालीन तीर्थंकरों को जजूं ।
मोह अरि नाशके मोक्षसुख को भजूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

सर्व संताप को नाशिया आपने ।
गंध से पूजहूँ शांतिकर पाद मैं ॥भूत०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

आत्म सौख्याब्धि में आप अवगाहते ।
शालि से जो जजें स्वात्म सुख पावते ॥भूत०॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ..।

कामशर जीतके आप विष्णू बने ।
कल्पतरु के सुमन लेय अर्चूं तुम्हें ॥भूत०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ....।

वेदना भूख की ना कभी छोड़ती ।
यदि चरू से जजें शीघ्र मुख मोड़ती ॥भूत०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं.....।

मोह अंधेर हत पूर्ण ज्योती धरें ।
दीप से पूजते ज्ञान ज्योती भरें ॥भूत०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ..।

धूप को खेवते कर्म इँधन जले ।
आपके पाद हो सर्व तीरथ भले ॥भूत०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ।

इंद्रियों के विषय छोड़ निज सुख लिया ।
आपको फल चढ़ा स्वात्मरस चख लिया ॥भूत०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं ।

अष्ट द्रव्यादि से अर्घ्य सुंदर किया ।
आपको अर्चते पाप सब क्षय किया ॥भूत०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश-दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

ज्ञाननेत्र से लोकते, लोक अलोक समस्त ।
चौबीसों जिनराज मम, शिवपथ करो प्रशस्त ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छन्द

श्री 'सुमेरु' जिनराज, भव भय क्लेश निवारा ।
परम अतीन्द्रिय सौख्य, पाय सकल गुण धारा ।।
निजानंद सुख हेत, लिया आपका शरणा ।
श्रद्धा भक्ति समेत, मैं पूजूँ तुम चरणा ।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमेरुजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'जिनकृत' भगवान्, सकल करम क्षय कीने ।
परमानंद प्रधान, निज अनुभव सुख लीने ।।निजानंद०।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनकृतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'कैटभनाथ' जिनेश, कर्मकलंक नशाया ।
पहुँचे निज शिवधाम, अनुपम सुख को पाया ।।निजानंद०।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कैटभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'प्रशस्त' दायक नाथ, ध्यान प्रशस्त लगाके ।
पाया शिवसुखधाम, कर्म समूल नशाके ।।निजानंद०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रशस्तदायकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'निर्दमन' जिनेश, मृत्यू का मद हरके ।
निज अनंत गुण खेत, फलित किया निज बल से ।।निजानंद०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्दमनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'कुलकर' निजकुल सूर्य, मुनि मन कमल खिलाते ।
परमामृत से पूर्ण, भवि अघ तिमिर भगाते ।।निजानंद०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुलकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'वर्धमान' भगवान्, भविजन हर्ष बढ़ाते ।
सुर नर किन्नर वृन्द, तुम पद पुष्प चढ़ाते ।।निजानंद०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वर्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'अमृतेंदु' भगवान्, धर्मामृत बरसाते ।
परमानंद निधान, सब जन मन हरषाते ।।निजानंद०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अमृतेंदुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'संख्यानद' जिनेश, ज्ञान सुधा रस झरना ।
नित असंख्य जन आय, लिया तुम्हारी शरणा ।।निजानंद०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संख्यानन्दजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'कल्पकृत' नाथ, चतुर्गती भ्रम हरके ।
शिवकांता के नाथ, हुये त्रिजग निधि वरके ।।निजानंद०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कल्पकृतजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'हरिनाथ' जिनेंद्र, हरि हर ब्रह्मा पूजें ।
इन्द्र नरेंद्र फणीन्द्र, सब मिल तुम पद पूजें ।।निजानंद०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'बहुस्वामी' जिननाथ, त्रिभुवन नाथ तुम्हीं हो ।
जन्मव्याधि के हेतु, अनुपम वैद्य तुम्हीं हो ।।निजानंद०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बहुस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'भार्गव' भगवान्, परम धर्म के कर्ता ।
जो पूजें धर ध्यान, हो जावें शिव भर्ता ।।निजानंद०।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भार्गवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'सुभद्रस्वामि' जिनदेव, भद्र जनों के स्वामी ।
त्रिभुवन औ त्रयकाल, जानत अंतर्यामी ।।निजानंद०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुभद्रस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'पविपाणि' तीर्थेश, कर्म अचल को चूरा ।
गुणमणिखान महान, सर्व गुणों को पूरा ।।निजानंद०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पविपाणिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

देव विपोषित' आप, भक्त जनों को पोषें ।
मुनिगण तुम पद ध्याय, निजमन को संतोषें ।।निजानंद०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विपोषितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'ब्रह्मचारि' जिनदेव, परम ब्रह्म कहलाते ।
गणधर नित तुम ध्याय, स्वातमनिधि विकसाते ।।निजानंद०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मचारिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'असांक्षिक' आप, समवसरण में सोहें ।
संशय तमहर देव, सुर किन्नर मन मोहें ॥
निजानंद सुख हेतु, लिया आपका शरणा ।
श्रद्धा भक्ति समेत, मैं पूजूँ तुम चरणा ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री असांक्षिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'चारित्रेश' जिनेश, पंचम चारित पाके ।
पंचमगति का सौख्य, पाया निज को ध्याके ॥निजानंद०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चारित्रेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'परिणामिक' भगवान्, पंचमभाव लिया है ।
पूर्ण शुद्ध परिणाम, कर शिव प्राप्त किया है ॥निजानंद०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पारिणामिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'शाश्वतनाथ' महेश, लोकशिखर पर राजें ।
पुनर्जन्म नहिं लेत, शाश्वत काल विराजें ॥निजानंद०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शाश्वतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'निधिनाथ' जिनेंद्र, तुमको जो जन ध्यावें ।
नवनिधि ऋद्धिसमेत, अनुपम सुख को पावें ॥निजानंद०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निधिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'कौशिक' भगवान्, भविमन कुमुद विकासें ।
जो ध्यावें मन लाय, निजपर भेद प्रकाशें ॥निजानंद०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कौशिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'धर्मेश' जिनेंद्र, धर्मचक्र के भर्ता ।
सुर ललनायें नित्य, गुण गावें सुखभर्ता ॥निजानंद०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य—शंभु छन्द

त्रिभुवन पति त्रिभुवन मस्तक पर, जाकरके सुस्थिर राज रहे ।
त्रयकालिक गुण पर्यायों युत, संपूर्ण पदारथ जान रहे ॥

वर पंच कल्याणक के स्वामी, चौबीसों तीर्थंकर जग में ।
मैं पूजूँ पूरण अर्घ्य लिये, पाऊं अविचल शाश्वत सुख मैं ॥२५॥

ॐ ह्रीं श्री सुमेरुआदिधर्मेशपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।
शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

जन्म मरण व्याधी महा, उसके नाशन हेत ।
आप भिषग्वर विश्व में, नमूँ नमूँ शिव हेत ॥

पंच चामर छन्द

जयो जिनेश आप ही अनंत ज्ञान पुँज हो ।
जयो जिनेश आप ही अनंत दर्श कुंज हो ॥
जयो जिनेश आप ही अनंत वीर्यवान् हो ।
जयो जिनेश आप ही अनंत सौख्यधाम हो ॥१॥

स्वयंवरा अनंत ऋद्धियां स्वयं तुम्हें वरें ।
हितंकरा अनंत सिद्धियां स्वयं चरण पड़ें ॥
शुभंकरा ध्वनी अनंत भव्य को सुखी करे ।
प्रियंकरा सभा असंख्य भव्य को सुखी करे ॥२॥

गणेश आपको नमें गुणानुवाद गायके ।
मुनीश आपको जपें अनूप रूप ध्यायके ॥
सुरेश आपको जजें त्रिलोकपूज्य मानके ।
नरेश आपको भजें त्रिकालविज्ञ जानके ॥३॥

हितोपदेश आपका समूल मोह को हरे ।
प्रभो विहार आपका समस्त शोक को हरे ॥
जिनेंद्र भक्ति आपकी अपूर्व शक्ति को भरे ।
जिसेक शक्ति के प्रताप मृत्यु मल्ल भी टरे ॥४॥
प्रभो अपूर्व भक्ति से करूं त्रिकाल वंदना ।
प्रभो अपूर्व शक्ति हेतु मैं करूं उपासना ॥
प्रभो मुझे स्वभक्त जान के संभाल लीजिये ।
प्रभो स्वयं के तीन रत्न दे खुशाल कीजिये ॥५॥

दोहा

निजानंद पीयूषरस, निर्झरणी निर्मग्न ।
'ज्ञानमती' सुख सासता, दे मुझ करो प्रसन्न ॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धीऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानका-लीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलि ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपत्ति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० १८

[चौबीसी नं० १७]

पश्चिम धातकीखंडद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—अडिल्ल छन्द

अपरधातकी में, ऐरावत जानिये ।
वर्तमान चौबीस, जिनेश्वर मानिये ॥
तिनकी पूजा करूं, भक्ति उर लायके ।
शुद्ध बुद्ध परमातम गुण चित ध्यायके ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वोपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं चाल—नन्दीश्वरपूजन की

सुरगंगा का शुचि नीर, तनुमल शुद्ध करे ।
जिनचरण सरोरुह धार, मनमल शुद्ध करे ॥
चौबीसों श्री जिनचंद, परमानंद सही ।
जो पूजें धर आनंद, पावें स्वात्म मही ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

कंचनद्रव सम शुचिगंध, तन की ताप हरे ।
जिन चरण सरोरुह चर्च, भव संताप हरे ॥चौबीसों०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .. चंदनं ...।

शशि रश्मि सदृश सित धौत, तंदुल गंध भरे ।
अक्षय आतम सुख हेत, तुम ढिग पुंज धरें ।।
चौबीसों श्री जिनचंद, परमानंद सही ।
जो पूजें धर आनंद, पावें स्वात्म मही ।।३।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो —···· अक्षतं ·· ।

अरविंद कुमुद मचकुंद, सुरभित मन भावें ।
मदनारिजयी पदकंज, पूजत हरषावें ।।चौबीसों०।।४।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ·····पुष्पं ।

घेवर बरफी पकवान, ताजे थाल भरे ।
निजआत्म सुधारस हेतु, तुम ढिग भेंट धरें ।।चौबीसों०।।५।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· नैवेद्यं ···।

घृतदीपक जगमग ज्योति, तुम अज्ञान हरे ।
पूजत जिनचरण सरोज, मन की भ्रांति टरे ।।चौबीसों०।।६।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····· दीपं ···।

कृष्णागरु धूप सुगंध, खेवत धूम उड़े ।
जिनपद पंकज की भक्ति, करते सौख्य बढ़े ।।चौबीसों०।।७।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ·····धूपं ···।

केला एला बादाम, उत्तम सरस लिये ।
निज के अखंड सुख हेतु, तुम पद अर्प्य किये ।।चौबीसों०।।८।।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो····· फलं ···।

वसुविध शुभ अर्घ्य बनाय, तुम पद मैं पूजूँ ।
रत्नत्रय निधि को पाय, संकट से छूटूँ ॥चौबीसों०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो····· अर्घ्यं····।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून,सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर-पदपद्म पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

त्रिभुवन गुरु भगवान्, अनुपम सुख की खान हो ।
मैं पूजूँ धर ध्यान, सकल विघन घन को हरो ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेंन्द्र छंद

श्रीमन् 'साधित' तीर्थंकर को, सुरपतिगण मिल पूजें ।
जो इनको नित वंदन करते, उनके अघरिपु धूजें ॥
नव क्षायिक लब्धी हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
निज आतम अनुभव अमृत को, पीकर तृप्ती पाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री साधितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

'जिन स्वामी' तीर्थंकर जग में, अनुपम हित उपदेशी ।
प्रभु तुम नाम मंत्र ही जग में, रोग शोक दुख भेदी ॥नव०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'स्तमितेन्द्र' जिनेन्द्र विश्व में, परमानंद प्रदाता।
निश्चल मन से जो नित पूजें, वे पावें सुख साता ॥

नव क्षायिक लब्धी हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ।
निज आतम अनुभव अमृत को, पीकर तृप्ती पाऊँ ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्तमितेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'अत्यानंदधाम' जिनवर जी, परमानंद सुख कर्ता।
सुर नर किन्नर सुरललनागण, पूजें भव दुख हर्ता ॥नव०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अत्यानंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'पुष्पोत्फुल्ल' नाथ इस जग में, भविजन मन हरसावें।
सबको आत्यंतिक सुख हेतू, धर्मामृत बरसावें ॥नव०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पोत्फुल्लजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'मँडित' जिनवर तीर्थंकर, श्री सर्वज्ञ कहाते।
शत इंद्रों से वंदित नितप्रति, जो पूजें सुख पाते ॥नव०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मंडितजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'प्रहितदेव' जिनदेव त्रिजगपति, धर्मचक्र के धारी।
दश धर्मों का करें प्रवर्तन, भवि जीवन हितकारी ॥नव०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रहितदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'मदनसिद्ध' सब काम क्रोध मद, माया लोभ नशाके।
परम सुखास्पद धाम लिया है, आठों कर्म जलाके ॥नव०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मदनसिद्धजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'हसदिंद्र' जिनेश्वर सुखकर, विषय कषाय जयी हैं।
मुनिगण उनके पदपंकज भज, पावें मोक्षमही हैं ॥नव०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हसदिंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'चंद्रपार्श्व' जिन अतुल चंद्र हैं, मुनिमनकुमुद विकासी।
जो नित पूजें भक्ति भाव से, पावें निजसुखराशी ॥नव०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'अब्जबोध' तीर्थंकर जग में, भविजनकमल खिलाते ।
जन्मजात बैरी प्राणी को, प्रेम पियूष पिलाते ।।नव०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अब्जबोधजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'जिनवल्लभ' तीर्थंकर मुक्ती, ललना के वर माने ।
सम्यग्दृष्टी जन उनको भज, निज पर को पहचाने ।।नव०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनवल्लभजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'सुविभूतिक' तीर्थंकर भवहर, त्रिभुवन विभव सनाथा ।
पूजक जन उनको वंदत हैं, नित्य नमाके माथा ।।नव०।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुविभूतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

देव 'कुकुद्भास' तीर्थंकर, धर्मध्वजा फहरातं ।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, आत्मसुधारस पाते ।।नव०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुकुद्भासजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'नाथ सुवर्ण' परम तीर्थंकर, वर्ण रहित अशरीरी ।
जो उनके पदपंकज पूजें, होवें चरम शरीरी ।।नव०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुवर्णनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

तीर्थंकर 'हरिवासक' भवहर, भवि दुख शमन करे हैं ।
हरि हर ब्रह्मा बुद्ध सूर्य शशि, तुम पद नमन करे हैं ।।नव०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरिवासकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'प्रियमित्र' भविक जनगण के, मित्र परम उपकारी ।
सुर ललनायें भक्तिभाव से, गावें गुण अविकारी ।।नव०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रियमित्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

भवहर 'धर्मदेव' तीर्थेश्वर, अविचल धाम विराजें ।
सुर किन्नरियां वीणा लेकर, भक्ति के स्वर साजें ।।नव०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'प्रियरत' तीर्थंकर लखते, तीन लोक त्रयकाला ।
जो जन श्रद्धा से नित वंदे, उनके वे प्रतिपाला ।।नव०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रियरतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'नंदिनाथ' भवि को आनंदें, सुरगण उनको वंदे ।
परम अतींद्रिय सौख्य पायके, भोगें परमानंदें ॥
नव क्षायिक लब्धी हेतु मैं, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ ।
निज आतम अनुभव अमृत को, पीकर तृप्ती पाऊँ ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'अश्वानीक' जिनेश्वर तुम हो, शम दम के अवतारी ।
परमप्रशमसुख वे पा लेते, जो पूजें सुखकारी ॥नव०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अश्वानीकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'पूर्वनाथ' सुख लिया अपूरब, क्षपक श्रेणि पर चढ़के ।
निजभक्तों को भी सुख अनुपम, देते हैं बढ़ चढ़के ॥नव०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'पार्श्वनाथ' जिननाथ हमारे, सर्व दुखों के हर्ता ।
सुर नर असुर सदा तुम पूजें, हो जाते शिव भर्ता ॥नव०॥२३॥

ॐ ह्री अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'चित्रहृदय' जिन चित्र विचित्रित, पंच परावर्तन को ।
कर समाप्त निज गुण विचित्र सब, पाया वंदू उनको ॥नव०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चित्रहृदयजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

पूर्णार्घ्य—अडिल्ल छंद

वर्तमान चौबीस जिनेश्वर को जजूँ ।
श्रद्धा भक्ति समेत सतत उनको भजूँ ॥
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय नमाऊँ भाल मैं ।
निज गुण संपति लहूँ तुरत खुशहाल मैं ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीसाधितादिचित्रहृदयपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

दोहा

लोकोत्तर फलप्रद तुम्हीं, कल्पवृक्ष जिनदेव ।
नमूँ नमूँ तुमको सदा, करूँ भक्तिभर सेव ॥१॥

गीता छन्द

जय जय जिनेश्वर धर्म तीर्थेश्वर जगत विख्यात हो ।
जय जय अखिल संपत्ति के भर्ता भविकजन नाथ हो ॥
लोकांत में जा राजते त्रैलोक्य के चूड़ामणी ।
जय जय सकल जग में तुम्हीं हो ख्यात प्रभु चिंतामणी ॥१॥
एकेंद्रियादिक योनियों में नाथ ! मैं रुलता रहा ।
चारों गती में ही अनादि से प्रभो ! भ्रमता रहा ॥
मैं द्रव्य क्षेत्र रु काल भव औ भाव परिवर्तन किये ।
इनमें भ्रमण से ही अनंतानंत काल बिता दिये ॥२॥
बहुजन्म संचित पुण्य से दुर्लभ मनुष योनी मिली ।
हा ! बालपन में जड़सदृश सज्ज्ञान कलिका ना खिली ॥
बहुपुण्य के संयोग से प्रभु आपका दर्शन मिला ।
बहिरात्मा औ अंतरात्मा का स्वयं परिचय मिला ॥३॥
तुम सकल परमात्मा बने जब घातिया आहत हुये ।
उत्तम अतीन्द्रिय सौख्य पा प्रत्यक्ष ज्ञानी तब हुये ॥
फिर शेष कर्म विनाश करके निकल परमात्मा बने ।
कल-देह वर्जित निकल अकल स्वरूप शुद्धात्मा बने ॥४॥
हे नाथ ! बहिरात्मा दशा को छोड़ अंतर आतमा ।
होकर सतत ध्याऊँ तुम्हें हो जाऊँ मैं परमातमा ॥
संसार का संसरण तज त्रिभुवन शिखर पे आ बसूँ ।
निज के अनंतानंत गुणमणि पाय निज में ही बसूँ ॥५॥

दोहा

तुम प्रसाद से भक्तगण, हो जाते भगवान् ।
'ज्ञानमती' निज संपदा पाकर के धनवान् ॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपस्थऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० १९

[चौबीसी नं० १८]

पश्चिम धातकीखंड ऐरावतक्षेत्र भावि तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छंद

अपर धातकी ऐरावत में तीर्थंकर होवेंगे ।
धर्मतीर्थ का वर्तन करके निजपर मल धोवेंगे ॥
गणधर मुनिगण सुरपति नरपति उनकी भक्ति करे हैं ।
हम भी उनका आह्वानन कर पूजन भक्ति करे हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—मोतीदाम छंद

लिया है झारी में शुचिनीर, त्रिधारा दे पाऊँ भवतीर ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊँ शिव साम्राज ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

लिया है चंदन घिस घनसार, चढ़ाऊँ चरणों में हिमसार ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊँ शिव साम्राज ॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....चंदनं....।

धुले हैं तंदुल शशिसम श्वेत, मिले आतम निधि पुंज धरेत ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊँ शिव साम्राज ॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अक्षतं....।

खिले हैं पुष्प सुगन्धित सार, करूं पुष्पांजलि काम निवार ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊं शिव साम्राज ॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं....।

सुधारस सम उत्तम पकवान, चढ़ा कर लूँ समतारस पान ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊं शिव साम्राज ॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ।

शिखा जगमग दीपक की होत, जजूँ दीपक से निज उद्योत ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊं शिव साम्राज ॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... दीपं ... ।

सुगन्धी धूप अगनि में जाल, जलाऊं कर्म अरी तत्काल ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊं शिव साम्राज ॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं ।

मुसम्बी आम सरस फल लाय, चढ़ाकर लूं समकित सुखदाय ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊँ शिव साम्राज ॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... फलं ... ।

लिया मैं अर्घ्य भराकर थाल, चढ़ाऊं भक्ति से नतभाल ।
जिनेश्वर चौबीसों को आज, जजूँ मैं पाऊँ शिव साम्राज ॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखंडद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अर्घ्यं ... ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघशांती हेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥
शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

गुणरत्नाकर तीर्थंकर, तुम पद परम पुनीत ।
कुसुमांजलि करके यहां, मैं अर्चूं धर प्रीत ॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अडिल्ल छंद

श्री 'रवीन्दु' जिनराज त्रिजग के सूर्य हैं ।
भवि के शिवपथ हेतु धर्मरथ धुर्य हैं ॥
मैं नित भक्ति समेत चरण अर्चन करूं ।
जन्मरोग क्षय हेतु प्रभो वंदन करूं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रवीन्दुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'सोमकुमर' जिनदेव अलौकिक वैद्य हैं ।
सर्वव्याधि हर लेत भवोदधि सेतु हैं ॥मैं०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमकुमारजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'पृथ्वीवान्', अतुल गुणखान हैं ।
अनुपम महिमावान, सर्वसुख दान हैं ॥मैं०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पृथ्वीवान्जिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'कुलरत्न' जिनेंद्र, भुवन में श्रेष्ठ हैं ।
कर्मअरी को भेद, स्वयं निर्भेद्य हैं ॥मैं०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कुलरत्नजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'धर्मनाथ' जिनराज, धर्म वर्षा करें ।
दर्शन वंदन कर, भविजन हर्षा करें ॥मैं०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'सोमजिन' मुक्तिरमा के नाथ हैं ।
जो उनको नित अर्चें, नित्य सनाथ हैं ॥मैं०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमजिनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'वरुणेंद्र' जिनेश्वर, भवदधि से तिरें ।
उनकी भक्ती से, भविजन भी उत्तरें ॥मैं०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वरुणेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'अभिनंदन' भगवान, व्यथा भव की हरो ।
साम्यसुधारस पान, करूं इस विध करो ॥मैं०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभिनन्दनजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'सर्वनाथ' जिनदेव तुम्हें जो पूजते ।
सर्वसुखों को पाय जगत् से छूटते ॥
मैं नित भक्ति समेत चरण अर्चन करूँ ।
जन्मरोग क्षय हेतु प्रभो वंदन करूँ ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'सुदृष्टि' जिननाथ दृष्टि सम्यक् करो ।
पाऊं भेदविज्ञान कृपा ऐसी करो ॥मैं०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुदृष्टिजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

नाथ 'शिष्ट' जिनदेव तुम से सुख मिले ।
निर्मल सम्यक् होय ज्ञान भास्कर खिलें ॥मैं०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शिष्टजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'सुधन्य' जिनदेव धन्य तुम पाय मैं ।
जन्म जन्म के पाप, नष्ट हो जांय मे ॥मैं०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धन्यजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'सोमचंद्र' तीर्थंकर भव बाधा हरें ।
मोह ध्वांत को नाश, स्वात्मसिद्धि करें ॥मैं०॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमचंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'क्षेत्राधीश' जिनेश स्वात्म में राजते ।
जो पूजें धर प्रीति सर्व अघ नाशते ॥मैं०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षेत्राधीशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

अहो 'सदंतिक नाथ' तुम्हें जो वंदते ।
करें कर्म का अंत, स्वयं में नंदते ॥मैं०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सदंतिकनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'जयंत' देवाधिदेव जग में कहें ।
उनकी पूजा भक्ति सकल अघ को दहे ॥मैं०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयंतदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

नाथ 'तमोरिपु' मोहध्वांत का क्षय करें।
जो जन पूजें आप पापतम को हरें ॥मैं०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तमोरिपुजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'निर्मितदेव' जिनेश त्रिविध मल क्षय करे।
स्वातम निर्मल हेतु सदा चरणन परे ॥मैं०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्मितदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'कृतपार्श्व' जिनेश्वर तुम शरणा लिया।
करो निजातम सिद्धि अतः धरना दिया ॥मैं०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृतपार्श्वजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'बोधिलाभ' तीर्थेश हमें सद्बुद्धि दो।
नितप्रति मन में बसो, हृदय मम शुद्ध हो ॥मैं०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बोधिलाभजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'बहुनंद' जिनेश हरो दुर्ध्यान को।
धर्म ध्यान नित रहे प्रभो वरदान दो ॥मैं०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बहुनन्दजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

प्रभु 'सुदृष्टि' जिन तुम दर्शन सुखकार है।
जो नित मन में जपे, हुये भव पार हैं ॥मैं०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुदृष्टिजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'कंकुमनाभ' जिनेश कर्म अरि को हने।
सब जग पूजा योग्य आप अर्हन् बने ॥मैं०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कंकुमनाभजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'वक्षेश' जिनेश आप तीर्थेश हैं।
तुमको ध्याते ब्रह्मा विष्णु महेश हैं ॥मैं०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वक्षेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

अपर धातकी द्वीप में, ऐरावत शुभ क्षेत्र ।
भावी तीर्थंकर जजूँ, पाऊँ स्वातम क्षेत्र ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रवींदुआदिवक्षेशपर्यंत चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

सोरठा

त्रिभुवन तिलक महान्, चौबीसों तीर्थेश हैं ।
गाऊँ तिन गुणमाल, पाऊँ निज गुण संपदा ॥१॥

रोला छन्द

अहो जिनेश्वर देव ! सोलह भावन भाया ।
प्रकृती अतिशय पुण्य, तीर्थंकर उपजाया ॥
पंच कल्याणक ईश, आगे तुम होवोगे ।
त्रिभुवनपति नतशीश, कर्ममैल धोवोगे ॥१॥

नाम मंत्र भी आप, सर्व मनोरथ पूरे ।
जो नित करते जाप, सर्व विघ्न को चूरें ॥
तुम वंदत तत्काल, रोग समूल हरे हैं ।
तुम पूजन से भव्य, शोक निमूल करे हैं ॥२॥

इंद्रिय बल उच्छ्वास, आयू प्राण कहाते ।
ये पुद्गल परसंग, इनको जीव धराते ॥
ये व्यवहारिक प्राण, इन बिन मरण कहावे ।
सब संसारी जीव, इनसे जन्म धरावें ॥३॥

निश्चय नय से एक, प्राण चेतना जाना ।
इसका मरण न होय, यह निश्चय उर आना ॥
यही प्राण मुझ पास, शाश्वत काल रहेगा ।
शुद्ध चेतना प्राण, सर्व शरीर दहेगा ॥४॥
कब ऐसी गति होय, पुद्गल प्राण नशाऊँ ।
ज्ञान दर्श मय शुद्ध, प्राण चेतना पाऊँ ॥
ज्ञान चेतना पूर्ण, कर तन्मय हो जाऊँ ।
दश प्राणों को नाश, ज्ञानमयी बन जाऊँ ॥५॥
गुण अनंत भगवंत, तब हों प्रगट हमारे ।
जब हो तनु का अंत, यह जिनवचन उचारें ॥
करो कृपा अब नाथ ! सर्वदुःखों से छूटूँ ।
'ज्ञानमती' कर पूर्ण, निज आतम सुख लूटूँ ॥६॥

घत्ता

जय जय जिनदेवा, तुम पद सेवा, जो भविजन रुचि से करते ।
वे कर्म कर्मफल, पल में निष्फल, करके चिन्मय सुख भरते ॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमधातकीखण्डद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० २०

[चौबीसी नं० १६]

पूर्व पुष्करार्ध द्वीप भरतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पूरब पुष्करार्ध में दक्षिण, दिश में क्षेत्र सुहाता ।
षट्खंडों युत षट्कालों युत, 'भरत' नाम को पाता ॥
आर्यखंड में चौथे युग के, जो तीर्थेश हुये हैं ।
उनका हम आह्वानन करके, पूजें भक्ति लिये हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—भुजंगप्रयात छन्द

तृषा चाह की है बुझी ना कभी भी ।
इसी हेतु से नीर लाया प्रभू जी ॥
जजूँ आज चौबीस जिनके चरण को ।
मिटाऊँ स्वयं के जनम औ मरण को ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जलं....।

महा ताप संसार में मोह का है।
इसी हेतु से पीत चंदन घिसा है ।।जजूँ०।।२।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

हुआ सौख्य मेरा क्षणिक नाशवंता।
इसी हेतु से शालि को धोय संता ।।जजूँ०।।३।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

मनोभू जगत् में सभी को भ्रमावे।
इसी हेतु से पुष्प चरणों चढ़ावें ।।जजूँ०।।४।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो पुष्पं....।

क्षुधा रोग सबसे बड़ा है जगत् में।
इसी हेतु नैवेद्य लाया सरस मैं ।।जजूँ०।।५।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं....।

महाघोर अंधेर अज्ञान का है।
इसी हेतु से दीप लौ जगमगा है ।।जजूँ०।।६।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो दीपं—।

महादुष्ट आठों करम संग लागे।
इसी हेतु से धूप खेऊँ यहाँ पे ।।जजूँ०।।७।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो धूपं....।

स्ववांछीत फल हेतु धूमा अभी तक।
फलों को इसी हेतु अर्पूं प्रभू अब ।।जजूँ०।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो फलं....।

महा अर्घ्य ले आप को पूजता हूँ।
महामोह के फंद से छूटता हूँ॥
जजूँ आज चौबीस जिनके चरण को।
मिटाऊँ स्वयं के जनम औ मरण को॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतोकर सदा।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ॥१०॥

शांतये शांतिधारा।

हर्रासिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा।
तीर्थंकर-पदपद्म, पुष्पाजलि अर्पण करूँ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

गणपति मुनिपति वंद्य, सुरपति नरपति से नमित।
पूजूँ भक्ति अमंद, आनंद कंद जिनंद को॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

गीता छन्द

'दमनेन्द्र' तीर्थंकर जगत में, सर्वसंपति हेतु हैं।
शतइंद्र से वंदित निरंतर, भवोदधि के सेतु हैं॥
जल गंध आदिक अर्घ्य लेकर, मैं करूँ नित अर्चना।
निज आत्म परमानंद चाहूँ, जहाँ पर दुख रंच ना॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दमनेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'मूर्तस्वामी' मूर्त तनु, विरहित अतनु ही शोभते ।
जो वंदते उनको सतत, वे सर्वसुख को भोगते ।।जल०।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मूर्तस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

स्वामी 'विराग' विराग संपति, से त्रिलोकीपति हुये ।
उनके चरण अरविंद को, नमकर भविक जगनुत हुये ।।जल०।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विरागस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

जिनवर 'प्रलंब' सुबाहु लंबित किये ध्यानारूढ़ जब ।
सब जंतुगण मन की कलुषता, धो रहे तुम पास तब ।।जल०।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रलंबजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

तीर्थेश पृथ्वीपति त्रिजगपति, सुरगणों से वंद्य हैं ।
जो नित्य उनको पूजते, वे ही जगत में धन्य हैं ।।जल०।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पृथ्वीपतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

'चारित्रनिधि' तीर्थाधिपति, चारित्र का वितरण करें ।
चारित्र पंचम प्राप्ति हेतु, साधु तुम चरणन परें ।।जल०।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चारित्रनिधिजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

जिनराज 'अपराजित' पराजित, कर दिया यमराज को ।
अतएव गणधर गण तुम्हें, ध्याके हरें भवत्रास को ।।जल०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपराजितजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

जिनवर 'सुबोधक' भव्य मन, पंकज सदा विकसावते ।
जो वंदते वे बोधि रत्नत्रयमयी निज पावते ।।जल०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुबोधकजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

तीर्थेश श्री 'बुद्धीश' के, चरणारविंदों को नमें ।
वे भव्यजन स्वयमेव निश्चय, रत्नत्रयमय परिणमें ।।जल०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बुद्धीशजिनेंद्राय अर्घ्यं····।

जिनराज 'वैतालिक' परमपद, में सदा सुस्थित रहें ।
जो पूजते वे स्वयं ही, धनधान्य सुख संपति लहें ॥
जल गंध आदिक अर्घ्य लेकर, मैं करूँ नित अर्चना ।
निज आत्म परमानंद चाहूं, जहाँ पर दुख रंच ना ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वैतालिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'त्रिमुष्टि' सदैव निज में, राजते परमातमा ।
जो करें उनकी भक्ति संतत, बनें अंतर आतमा ॥जल०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिमुष्टिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मुनिनाथ श्री 'मुनिबोध' जिनवर, तीन जग को जानते ।
उन ज्ञान में अणुवत् सकल जग, एक साथ विभासते ॥जल०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिबोधजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'तीर्थ स्वामी' को नमन नित, इंद्र गण भी कर रहे ।
उन भक्ति नौका जो चढ़े, वे भवजलधि से तिर रहे ॥जल०॥१३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तीर्थस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'धर्मधीश' जिनेश पंचमगति लिया अति चाव से ।
उन भक्तगण भी पंचमीगति, को लहें निज भाव से ॥जल०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मधीशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'धरणेश' धर्म जिनेश तुमको, जो हृदय में धारते ।
सचमुच उन्हें संसार वारिधि, से तुम्हीं तो तारते ॥जल०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धरणेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'प्रभवदेव' जिनेंद्र को, जो भक्ति वंदन नित करें ।
वे पाप पुंज समस्त का, शुभभाव से खंडन करें ॥जल०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभवदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

जिनवर 'अनादीदेव' आदी, अंत से तुम शून्य हो ।
जो वंदते तुमको सदा, वे भी दुखों से शून्य हों ॥जल०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनादीदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'अनादिप्रभु' त्रिजग, अधिपति तुम्हें पूजें सदा ।
सब रोग शोक वियोग संकट, शीघ्र हों उनसे विदा ।।जल०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनादिप्रभुजिनेन्द्राय अर्घ्यं —।

हे 'सर्वतीर्थ' जिनेंद्र तुमको, बार बार प्रणाम है ।
जो हृदय में तुमको धरें, वे स्वयं भुवन ललाम हैं ।।जल०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वतीर्थनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

जिननाथ 'निरुपमदेव' सबके, देवदेव प्रधान हो ।
ब्रह्मा महेश्वर विष्णु तुमको ध्यावते जग मान्य हो ।।जल०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निरुपमदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

श्रीमान् 'कौमारिक' प्रभू, कैवल्यलक्ष्मी पति कहें ।
जो पूजते वे सहज दर्शन ज्ञान सुख वीरज लहें ।।जल०।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कौमारिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

तीर्थेश आप 'विहारगृह', जहं जहं चरण अंबुज धरें ।
देवेंद्र गण वहं वहां स्वर्णिम, सुरभिते अंबुज करें ।।जल०।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विहारगृहजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

तीर्थेश 'धरणीश्वर' जगत में, सर्वजन को मान्य हैं ।
जो उन्हें चित में धारते वे भूमिपर गुणवान हैं ।।जल०।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धरणीश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं····।

जिनराज आप 'विकासदेव', सुकीर्ति चहुँदिश में भ्रमें ।
सुर टोलियाँ बहु भक्ति से, गुणगान कर चरणों नमें ।।जल०।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विकासदेवजिनेंद्राय अर्घ्यं —।

पूर्णार्घ्य—दोहा

पुष्करार्ध पूरबदिशी, भरतक्षेत्र जिननाथ ।
पूरण अर्घ्य चढ़ायके, नित्य नमाऊं माथ ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दमनेंद्रादिविकासदेवपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं····।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य —ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

वसंततिलका छन्द

देवाधिदेव तुम लोक शिखामणी हो ।
त्रैलोक्य भव्यजन कंज विभामणी हो ।।
सौ इंद्र आप पद पंकज में नमें हैं ।
साधू समूह गुण वर्णन में रमे हैं ।।१।।
जो भक्त नित्य तुम पूजन को रचावें ।
आनंद कंद गुणवृन्द सदैव गावें ।।
वे शीघ्र दर्शन विशुद्धि निधान पावें ।
पच्चीस दोष मल वर्जित स्वात्म ध्यावें ।।२।।
निःशंकितादि गुण आठ मिलें उन्हीं को ।
जो स्वप्न में भी बस संस्मरते तुम्हीं को ।।
शंका कभी नहिं करें जिन वाक्य में वो ।
कांक्षें न ऐहिक सुखादिक को कभी वो ।।३।।
ग्लानी मुनी तनु मलीन विषे नहीं है ।
नानाचमत्कृति विलोक न मूढ़ता है ।।
सम्यक् चरित्र व्रत से डिगते जनों को ।
सुस्थिर करें पुनरपी उसमें उन्हों को ।।४।।
अज्ञान आदि वश दोष हुये किसी के ।
अच्छी तरह ढक रहें न कहें किसी से ।।
वात्सल्य भाव करते जिन धर्मियों में ।
सद्धर्म द्योतित करें रुचि से सभी में ।।५।।
वे द्वादशांग श्रुत सम्यग्ज्ञान पावें ।
चारित्र पूर्णधर मनपर्यय उपावें ।।
वे भक्त अंत बस केवलज्ञान पावें ।
मुक्त्यंगना सह रमें शिवलोक जावें ।।६।।

हे नाथ ! कीर्ति सुनके तुम पास आया ।
पूरो मनोरथ सभी जो साथ लाया ।।
सम्यक्त्व क्षायिक करो सुचरित्र पूरो ।
कैवल्य 'ज्ञानमति' दे यम पाश चूरो ।।७।।

दोहा

तुम पद-आश्रय जो लिया, सो पहुँचे निजधाम ।
इसीलिये तुम चरण में, शत शत करूं प्रणाम ।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ।।
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ।।

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० २१

[चौवीसी नं० २०]

पूर्व पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

७

अथ स्थापना—गीता छन्द

वर पूर्व पुष्कर द्वीप में जो भरत क्षेत्र महान् है।
उसमें चतुर्थेकाल में हों तीर्थंकर भगवान हैं॥
उन वर्तमान जिनेश्वरों की मैं करूं इत थापना।
पूजूं अतुल बहु भक्ति से, चाहूँ सदा हित आपना॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—अडिल्ल छन्द

सीतानदि को नीर कलश भर लाइये।
जिनवर पद पंकज में धार कराइये॥
वर्तमान चौबीस जिनेश्वर को जजूँ।
रोग शोक भय नाश सहज सुख को भजूँ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

मलयज चंदन गंध सुगंधित लाइये।
तीर्थंकर पद पंकज अग्र चढ़ाइये॥वर्तमान०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

उज्ज्वल अक्षत मुक्ता फल सम लाइये ।
जिनवर आगे पुंज चढ़ा सुख पाइये ।।वर्तमान०।।३।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

वकुल कमल चंपक बेला सुमनादि ले ।
मदनजयी जिनपाद पद्म पूजूँ भले ।।वर्तमान०।।४।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं....।

कलाकंद मोदक घृत मालपुआ लिये ।
क्षुधा व्याधिक्षय हेतू आज चढ़ा दिये ।।वर्तमान०।।५।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ।

घृत दीपक की ज्योति जले जगमग करे ।
तुम पूजा तत्काल मोह तम क्षय करे ।।वर्तमान०।।६।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीप ....।

अगर तगर सित चंदन आदि मिलायके ।
अग्निपात्र में खेऊँ भाव बढ़ायके ।।वर्तमान०।।७।।

ॐ ह्रीं पर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ....।

अनंनास अंगूर आम आदिक लिये ।
महामोक्षफल हेतु तुम्हें अर्पण किये ।।वर्तमान०।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं ....।

जलगंधादिक अर्घ्य लिया भर थाल मैं ।
रत्नत्रय निधि हेतु जजूँ त्रयकाल मैं ।।वर्तमान०।।९।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥
शांतये शांतिधारा ।

हर्रासिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

ज्ञान चेतनारूप, परमेष्ठी चिद्रूप हैं ।
पुष्पांजलि से पूज, सकल दुःख दारिद हरूं ॥
इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

सखी छन्द

श्री 'जगन्नाथ' तीर्थंकर, सुरगणनुत भव्य हितंकर ।
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके ॥१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री जगन्नाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तीर्थेश 'प्रभास' कहाते, सुरनर मुनिपति यश गाते ॥मैं०॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभासनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'स्वर स्वामी' जिनदेवा, सुर करते तुम पद सेवा ॥मैं०॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वरस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'भरतेश' जिनेश महंता, पूजें भविजन गुणवंता ॥मैं०॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री भरतेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'दीर्घानन' जिन राजा, वे सिद्ध करें सब काजा ॥मैं०॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री दीर्घाननजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'विख्यात कीर्ति' तीर्थंकर, उन वाणी सर्व प्रियंकर ॥मैं०॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विख्यातकीर्तिजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'अवसानि' जिनेश्वर जग में, उनका यश है त्रिभुवन में ।।मैं०।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अवसानिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिननाथ 'प्रबोध' सुहितकर, उन नाम मंत्र भी दुखहर ।।मैं०।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रबोधजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिन 'तपोनाथ' जग स्वामी, त्रिभुवन के अंतर्यामी ।।मैं०।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपोनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

जिन 'पावक' नाम तुम्हारा, आतम अनुभव दातारा ।।मैं०।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पावकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'त्रिपुरेश्वर' जगपति तुम हो, चिन्मूर्ति चिदंबर तुम हो ।।मैं०।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिपुरेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सौगत' देव हमेशा, तुम ध्याते विष्णु महेशा ।।मैं०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सौगतजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'वासव' नाथ हमारे, भव भव के संकट टारें ।।मैं०।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वासवजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिनराज 'मनोहर' नामी, सुख दायक त्रिभुवन स्वामी ।।मैं०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मनोहरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'शुभ कर्म ईश' तीर्थंकर, सब भविजन को क्षेमंकर ।।मैं०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुभकर्मईशजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिनराज 'इष्टसेवित' तुम, कर इष्ट अनिष्ट हरो तुम ।।मैं०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री इष्टसेवितजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'विमलेंद्र' जिनेंद्र सुखालय, संपूर्ण गुणों के आलय ।।मैं०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विमलेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'धर्मवास' सुखदाता, भक्तों के भाग्य विधाता ।।मैं०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मवासजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जग मान्य 'प्रसाद' जिनेश्वर, तुम त्रिभुवन के परमेश्वर ।।मैं०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रसादजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'प्रभामृगांक' जिनेशा, तुम पूजें सकल सुरेशा ।।मैं०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभामृगांकजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'उज्झित कलंक' जिनराजा, तुमही भव जलधि जहाजा ।
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाके, दुख संकट दूर भगाके ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उज्झितकलंकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'स्फटिक प्रभाख्य' जिनेश्वर, सब प्राणिमात्र के ईश्वर ॥मैं०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्फटिकप्रभाजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

जिनराज 'गजेन्द्र' महंता, निज आतम सुख विलसंता ॥मैं०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गजेन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

जिनदेव 'ध्यान जय' जिष्णू, तुम पूजक बनें सहिष्णू ॥मैं०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ध्यानजयजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

पूर्णार्घ्य—दोहा

इंद्रिय विषयों से विरत, परम अतींद्रिय सौख्य ।
नमूं नमूं तीर्थेश सब, पाऊँ सौख्य मनोज्ञ ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रीजगन्नाथादिध्यानजयपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

चाल (हे दीनबन्धु ...)

देवाधिदेव आप सकल दोष दूर हो ।
देवाधिदेव आप सकल सौख्य पूर हो ॥
निज आतमा को आप ही परमातमा किया ।
निज में ही आप मग्न हो निजधाम पा लिया ॥१॥
क्रोधादि शत्रुओं का आपने दमन किया ।
संपूर्ण कषायों को आपने शमन किया ॥
इंद्रिय विषय को जीत अतीन्द्रिय सुखी हुये ।
प्रत्यक्ष ज्ञान से ही आप केवली हुये ॥२॥

संपूर्ण उपद्रव टले हैं आप जाप से।
संपूर्ण मनोरथ फले हैं आप नाम से॥
प्रभु आपको न इष्ट का वियोग हो कभी।
होवे नहीं अनिष्ट का संयोग भी कभी॥३॥

सबके लिये आराध्य इष्ट आप ही कहे।
सबही अनिष्ट नष्ट हों क्षण मात्र ना रहें॥
संपूर्ण रोग शोक भी तुम भक्त के टलें।
धन धान्य अतुल सौख्य भी होवें भले भले॥४॥

इस जग में मुक्ति अंगना के नाथ आपही।
निजकी अनंत ऋद्धियों के साथ आपही॥
चैतन्य चमत्कार परमसौख्य धाम हो।
चिर्तिपड हो अखंड हो त्रिभुवन ललाम हो॥५॥

मैं आपकी शरणागती में आज आ गया।
अपनी अमूल्य ज्ञान कला को भी पा गया॥
ये ज्ञान निधी भवदधी में डूब ना जावे।
करिये कृपा जो मुक्ति तक भी साथ में आवे॥६॥

हे नाथ! मोहराज को अब दूर कीजिये।
निजके अखंड गुण समस्त पूर्ण कीजिये॥
मुझ शत्रु जो यमराज उसे चूर्ण कीजिये।
मुझ स्वात्म सुधारस प्रवाह पूर दीजिये॥७॥

दोहा

आत्यंतिक सुख शांतिमय, तीर्थंकर भगवान्।
'ज्ञानमती' लक्ष्मी मुझे, दे कीजे धनवान्॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला अर्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥
इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० २२
[चौबीसी नं० २१]

पूर्व पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र भावी तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीता छन्द

जो पूर्व पुष्कर भरत में तीर्थेश आगे होयेंगे।
निज कर्म कल्मष पुँज को स्वयमेव आगे धोयेंगे ॥
सच आज भी उन नाम सबके पाप कल्मष धो रहे।
पूजूँ यहां आह्वान कर मेरे सभी पातक दहें ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—नाराच छन्द

श्री जिनेन्द्र की ध्वनी समान स्वच्छ नीर है ।
तीन धार देत ही मिले भवाब्धि तीर है ॥
तीर्थनाथ को जजूं अटूट भक्ति धारके ।
वे सदैव भक्त को भवाब्धि से उबारते ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जलं....।

नाथ के प्रतापसम सुगंध गंध सार है ।
चर्ण में चढ़ावते मिले समस्त सार है ॥तीर्थनाथ०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो चंदनं ..।

धौत शालि नाथ कीर्ति के समान श्वेत हैं ।
पूर्ण सौख्य हेतु पुंज शोभते विशेष हैं ॥तीर्थनाथ०॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

कुंद केतकी गुलाब गंध से भरे खिले ।
आप पादपद्म अर्च ज्ञान कौमुदी खिले ॥तीर्थनाथ०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वोपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं....।

मिष्ट मालपूप आदि स्वर्ण थाल में भरें ।
स्वात्म सौख्य हेतुनाथ आप पास में धरें ॥तीर्थनाथ०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ...।

रत्नदीप लेय के जिनेश आरती करूँ ।
मोहध्वांत को निवार ज्ञान भारती वरूँ ॥तीर्थनाथ०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ..।

श्वेतचंदनादि मिश्रधूप अग्नि में जले ।
अष्टकर्म नष्ट हेतु आत्म स्वच्छता मिले ॥
तीर्थनाथ को जजूँ अटूट भक्ति धारके ।
वे सदैव भक्त को भवाब्धि से उबारते ॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं—।

सेव आम दाडिमादि थाल में भरायके ।
मुक्ति अंगना वरूँ सु आप को चढ़ायके ॥तीर्थनाथ०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं····।

अष्टद्रव्य में मिलाय रत्न अर्घ्य को लिया ।
भेद औ अभेद तीन रत्न हेतु अर्चिया ॥तीर्थनाथ०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ··।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

तीनरत्न से हो गये, तीनभुवन के नाथ ।
तीन शल्य के नाशने, पूजूँ बनूँ सनाथ ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाजलिं क्षिपेत् ।

चौपाई छन्द

श्री 'वसंतध्वज' तीर्थ करंता, निज आतम अनुभव विलसंता ॥
पूजूं आप चरण सुखकारी, निजानंद सुख हो हितकारी ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वसंतध्वजजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'त्रिजयंत' देव जगनामी, परम पूज्य त्रिभुवन के स्वामी ॥पू०।२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिजयंतजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'त्रिस्तंभ' परम सुखदाता, नाम मात्र से होती साता ॥पू०।३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिस्तंभजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'परब्रह्म' पुण्यफल मानें, भव्यजीव तुमको सरधाने ॥पू०।४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परब्रह्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

नाथ 'अबालिश' वैद्य प्रधाना, जन्म रोग नाशन में माना ॥पू०।५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अबालिशजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'प्रवादि' जिनदेव अपूरब, जो ध्यावें सुख लहें अपूरब ॥पू०।६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रवादिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'भूमानंद' तुम्हें जग ध्यावे, जो पूजें धन जन सुख पावें ॥पू०।७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूमानन्दजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'त्रिनयन' तीर्थंकर सोहें, ज्ञाननेत्र से जन मन मोहें ॥पू०।८।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिनयनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'विद्वान्' तीर्थ के कर्ता, दर्शन करते सब दुख हर्ता ॥पू०।९।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विद्वान्जिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'परमात्मप्रसंग' जिनेशा, नमतचरण में सुर असुरेशा ॥पू०।१०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परमात्मप्रसंगजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'भूमीन्द्र' अतुलनिधिदाता, पूजत ही सब मिटे असाता ॥पू०।११।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूमीन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'गोस्वामी' त्रिभुवन स्वामी, तुम हो सबके अंतर्यामी ॥पू०।१२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गोस्वामीजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'कल्याणप्रकाशित' देवा, गणधर भी करते तुम सेवा ॥
पूजूँ आप चरण सुखकारी, निजानंद सुख हो हितकारी ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कल्याणप्रकाशितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'मंडल' तीर्थेश महेशा, रवि शशि तुमको नमें हमेशा ॥पू०।१४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मंडलजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'महावसू' तीर्थेश महाना, पूजत हो जन जगत प्रधाना ॥पू०।१५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महावसूजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'उदयवान' जिन जग उद्योती, नाम जपे सुख संपति होती ॥पू०।१६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उदयवानजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'दिव्यज्योति' से जगत प्रकाशे, केवल ज्ञान विषे सब भासे ॥पू०।१७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दिव्यज्योतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'प्रबोधेश' भविकमल विकासें, जो ध्यावें वे स्वपर प्रकाशे ॥पू०।१८।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रबोधेशजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'अभयांक' जिनेश्वर तारें, भविजन को भव पार उतारें ॥पू०।१९।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभयांकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'प्रमित' नाथ अप्रमित शक्तिधर, जो पूजें वे बने मुक्तिवर ॥पू०।२०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रमितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'दिव्यस्फारक' जिनपद पंकज, पूजत ही मिलती निज संपत ॥पू०।२१।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दिव्यस्फारकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'व्रतस्वामी' जिनदेव अनूपा, चरणकमल वंदे जग भूपा ॥पू०।२२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्रतस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'निधान' जिन सर्वनिधीश्वर, तुमको मनमें धरे ऋषीश्वर ।पू०।२३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निधानजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'त्रिकर्मा' कर्म नशाते, भक्तों को सुख मार्ग बताते ॥पू०।२४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिकर्माजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य—कुसुमलता छन्द

पण मिथ्यात्व विनय संशय, एकांत और विपरीत अज्ञान ।
तथा अवांतर भेद तीन सौ त्रेसठ हैं मिथ्यात्व प्रधान ॥
तुम भक्ती से भव का मूल हेतु मिथ्यात्व नष्ट हो जाय ।
इसी हेतु चौबीसों जिनवर तुमको पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वसंतध्वजादित्रिककर्मापर्यन्तचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

शंभु छन्द

जय जय तीर्थंकर त्रिभुवन पति, जय जय अनुपम गुण के धारी ।
जय जय चिंचिंतामणी आप, चिंतित वस्तू दें सुखकारी ॥
जय जय अनमोल रतन जग में, तुम नाम रसायन भी माना ।
जय जय तुम नाम मंत्र उत्तम, वह महौषधी भी परधाना ॥१॥

यह महामोह अहि के विष को, गारुत्मणि बन अपहरण करे ।
भव वन की जन्म लता को भी, जड़ से उखाड़ कर दहन करे ॥
तुम नाम अलौकिक शक्ति बाण, मृत्यू योद्धा का घात करे ।
भव भव में बंधे कर्म शत्रू, उन सबका जड़ से नाश करे ॥२॥

तुम नाम मंत्र अद्भुत जग में, यह शिवललना को वश्य करे ।
समरस मय अतिशय सुख देके, कर्मोदय के सब कष्ट हरे ॥
तुम नाम आर्त औ रौद्र ध्यान, दोनों को जड़ से नाशे है ।
वर धर्म्यध्यान औ शुक्लध्यान, के बल से निज परकाशे है ॥३॥

माया मिथ्यात्व निदान शल्य, तीनों को दहन करे क्षण में ।
जो विषय वासना की इच्छा, उसको भी शमन करे क्षण में ॥
चिच्चमत्कारमय चेतन की, परिणति में नित्य रमाता है ।
तुम नाम मंत्र सचमुच भगवन्, स्वातम रस पान कराता है ॥४॥

मैं शुद्ध बुद्ध हूँ अमल अकल, अविकारी ज्योति स्वरूपी हूँ ।
निज देहरूप देवालय में, रहते भी चिन्मयमूर्ती हूँ ॥
इस विध से आतम अनुभव ही, पर से सब ममत हटाता है ।
यह निजको निजके द्वारा ही, बस निज में रमण कराता है ॥५॥

दोहा

नाम मंत्र प्रभु आपका, करे सकल कल्याण ।
'ज्ञानमती' सुखसंपदा, करे अंत निर्वाण ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

पूजा नं० २३

[चौबीसी नं० २२]

पूर्व पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पूरब पुष्कर में ऐरावत, क्षेत्र अपूरब सोहे ।
उनमें तीर्थंकर अतीत के, जनमन का मल धोवें ॥
समतारस के आस्वादी मुनि, उनके गुण को गाते ।
हम भी उनकी पूजा करके, कर्म कलंक नशाते ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तार्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—वसंततिलका छंद

क्षीरोदधी सलिल उज्ज्वल भृंग में है ।
देऊं त्रिधार जिनपाद सरोज में मैं ॥
चौबीस तीर्थंकर नाथ तुम्हें जजूँ मैं ।
पीऊँ अपूर्व निज आत्म पियूष को मैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं ....।

सौगंध गंध कर्पूर मिला उसी में ।
चर्चूं जिनेन्द्रपद पद्म सुखैक हेतू ॥चौबीस०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो.... चंदनं ....।

धोये अखंड सित तंदुल ले लिया है ।
रक्खे सुपुंज निज सौख्य अखंड हेतू ॥
चौबीस तीर्थंकर नाथ तुम्हें जजूँ मैं ।
पीऊँ अपूर्व निज आत्म पियूष को मैं ॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... अक्षतं ....।

चंपा गुलाब वकुलादि तुम्हें चढ़ाऊँ ।
निर्मूल कामशर नाशक आपही हैं ॥चौबीस०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं ।

पक्वान्न से तुम जजूँ क्षुधव्याधि हर्ता ।
पाऊँ अनंत निज शक्ति अपूर्व जिससे ॥चौबीस०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं ....।

कर्पूर ज्योति तम बाहर का विनाशे ।
पूजूँ तुम्हें स्वपर ज्ञान विकास हेतू ॥चौबीस०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... दीपं ..।

कृष्णागरू सुरभि धूप जलाय नीके ।
संपूर्ण पाप जलके उड़ते दशों दिक् ॥चौबीस०॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो .. धूपं ....।

पिस्ता बदाम अखरोट अनार लेके ।
मोक्षैक हेतु तुम चर्ण समीप धारूँ ॥चौबीस०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो ..... फलं ।

संपूर्ण अर्घ्य भर थाल तुम्हें चढ़ाऊँ ।
पूरो मनोरथ जिनेश्वर सर्व मेरे ॥चौबीस०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो .....अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

सप्त परम स्थान के, दाता श्री जिनदेव ।
नमूँ नमूँ तुमको सतत, करो अमंगल छेव ॥५॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छन्द

श्री 'कृतिनाथ' जिनेश, तुम कृतकृत्य हुये हो ।
मुनिगण नमित जिनेश, त्रिभुवन वंद्य हुये हो ॥
हृदय कमल में नाथ ! तुमको आज बिठाऊँ ।
पूजूं भक्ति बढ़ाय, सब दुख शोक नशाऊँ ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृतिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'उपविष्ट' जिनेश, मोक्षमहल में तिष्ठें ।
जो पूजें धर प्रीति, आतम सुख विलसंते ॥हृदय०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपविष्टजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'देवादित्य' जिनेश, आप अपूर्व रवी हो ।
भवव्याधी हर वैद्य, उत्तम सौख्य मही हो ॥हृदय०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवादित्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'आस्थानिक' जिनराज, निज में साता पाई ।
वंदत ही तुम पाद, आकुलता नश जाई ॥
हृदय कमल में नाथ ! तुमको आज बिठाऊँ ।
पूजूं भक्ति बढ़ाय, सब दुख शोक नशाऊँ ॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री आस्थानिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'प्रचंद्र' भगवान्, मुनिमन कुमुद खिलाते ।
परमाल्हादक आप, सब संताप मिटाते ॥हृदय०॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रचन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'वेषिक' जिनदेव, जिन मुद्रा के दाता ।
जो तुम आश्रय लेय, मेटे सर्व असाता ॥हृदय०॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री वेषिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'त्रिभानू' आप, जन मनवांछित पूरें ।
जो तुम चरणों लीन, कर्म कुलाचल चूरें ॥हृदय०॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिभानुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्रीमन् 'ब्रह्म' जिनेश, चिदानंद चिद्रूपी ।
तुम पद नमत सुरेश, तुम हो नित्य अरूपी ॥हृदय०॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'वज्रांग' जिनेन्द्र, चरण कमल चित धारें ।
आप तिरे औ अन्य, भविजन को भी तारें ॥हृदय०॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रांगजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'अविरोधी' भगवान, सर्व विरोध मिटाते ।
जात विरोधी जीव, आपस में सुख पाते ॥हृदय०॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अविरोधीजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'अपाप' जिनेश, पाप समूह निवारें ।
जो पूजें तुम पाद, निश्चित स्वर्ग पधारें ॥हृदय०॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपापजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'लोकोत्तर' भगवान्, लोक शिखर पर राजें ।
जो करते गुणगान, लोकोत्तर सुख साजें ।।हृदय०।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लोकोत्तरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'जलधिशेष' जिनदेव, तुम हो गुण रत्नाकर ।
जगत्पूज्य जगदीश, सर्व सुखों के आकर ।।हृदय०।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जलधिशेषजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'विद्योत' जिनेन्द्र, निज परमात्म प्रकाशा ।
किया धर्म उद्योत भव्य कमल प्रतिभासा ।।हृदय०।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विद्योतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सुमेरु' भगवान्, सुर किन्नर गुण गावें ।
श्रद्धा भक्ती ठान, बीन मृदंग बजावें ।।हृदय०।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुमेरुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

आप 'विभावित' देव, सोलह भावन भाके ।
तीर्थंकर पद पाय, बसे शिवालय जाके ।।हृदय०।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विभावितजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'वत्सल' भगवान्, ध्यान जहाँ तुम कीना ।
क्षेत्र हुआ सुखधाम, भविजन मिल हित कीना ।।हृदय०।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वत्सलजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

आप 'जिनालय' ईश, सर्व करम अरि जीते ।
निज आलय में तिष्ठ, परमामृतरस पीते ।।हृदय०।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनालयजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'तुषार' भगवान्, अतिशय शीतल तुम हो ।
जो पूजें भवि आन, उन मन भी शीतल हो ।।हृदय०।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तुषारजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'भुवनस्वामी' तुम देव, अतिशय केवलज्ञानी ।
जो करते तुम सेव, वही स्वपर विज्ञानी ।।हृदय०।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भुवनस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'सुकाम' भगवान्, जनमन पावन करते ।
खेचरगण नित आप, गुणगण कीर्तन करते ॥
हृदय कमल में नाथ ! तुमको आज बिठाऊँ ।
पूजूं भक्ति बढ़ाय, सब दुख शोक नशाऊँ ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकामजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'देवाधी देव' सबदेवों के देवा ।
जो पूजें धर नेह, करें निजातम सेवा ॥हृदय०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवाधिदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'अकारिम' आप, सर्व करम क्षय कीना ।
तुम आश्रय को पाय, भवि निज समरस लीना ॥हृदय०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अकारिमजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'बिंबित' तीर्थेश, ज्ञानमयी दर्पण में ।
तीन लोक प्रत्यक्ष, झलक रहे इक क्षण में ॥हृदय०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बिंबितजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पूर्णार्घ्यं—दोहा

पुण्यराशि औ पुण्यफल, तीर्थंकर भगवान् ।
स्वातम पावन हेतु मैं, अर्घ्यं चढ़ाऊँ आन ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कृतिनाथादिबिंबितपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः

जयमाला

चाल—हे दीन बन्धु

जै तीर्थनाथ ! आप धर्मतीर्थ चलाते ।
जै जै स्वयं के पास भक्तगण को बुलाते ॥

जो भव्य धर्मतीर्थ में स्नान करे हैं।
वे पाप मल को धोके हृदय साफ करे हैं ॥१॥
जिस मात ने तुमको गरभ में मास नव धरा।
त्रिभुवनपती को जन्म दे निजभव सफल करा ॥
जननी वही जिन जन्म से पावन करी धरा।
संपूर्ण नारियों में रत्न वह शुभंकरा ॥२॥
वे ही जनक सच्चे हुये जो आपके पिता।
जिनने जनम दे आपको मेटी जगत व्यथा ॥
तन भी पवित्र आपका सुद्रव्य कहावे।
शुभ हो सभी परमाणुओं से प्रकृति बनावे ॥३॥
तुम देह के आकार वर्ण गंध आदि की।
पूजा करें वे धन्य मनुज जन्म करें भी ॥
नगरी वही पावन हुई जिसमें जनम लिया।
दीक्षा जहाँ ली वह सुथल भी पूज्य कर दिया ॥४॥
जहां पे हुआ कैवल्य औ निर्वाण की भूमी।
सब पूज्य हुईं पाँचों हि कल्याण की भूमी ॥
जिस क्षण गरभ में आ बसे जिस दिन जनम लिया।
जिस काल में दीक्षा व ज्ञान मोक्ष पद लिया ॥५॥
वे दिन सभी पावन हुये प्रभु के प्रसाद से।
उस काल की पूजा करें तुम नाम जाप से ॥
जो भाव आपके वही जग में प्रधान हैं।
उनको जो सतत पूजते वे भाग्यवान हैं ॥६॥
इस विधि सुद्रव्य क्षेत्र काल भाव सभी भी।
होते पवित्र आपके आश्रय से सभी भी ॥
सुद्रव्य क्षेत्र काल भाव प्राप्ति के लिये।
निजात्म तत्त्व साधना की प्राप्ति के लिये ॥७॥

मैं बार-बार आपके द्रव्यादि को गाऊँ।
इनके निमित्त स्वात्म की आराधना पाऊँ॥
फिर बार-बार इस जगत में जन्म ना धरूँ।
'सुज्ञानमती' पायके सिद्धयंगना वरूँ॥८॥

दोहा

द्रव्य क्षेत्र औ काल शुभ, शुद्ध भाव शिव हेतु।
तुम भक्ती परसाद से, मिले हमें निज हेतु॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशति-तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निज संपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

पूजा नं० २४

[चौबीसी नं० २३]

पूर्व पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र

वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पूरब पुष्कर ऐरावत के, वर्तमान तीर्थंकर ।
चिच्चैतन्य सुधारस प्यासे, भविजन को क्षेमंकर ॥
उनको इत आह्वानन करके, पूजूँ मन वच तन से ।
आतम अनुभव अमृत हेतु, वंदूँ अंजलि करके ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वोपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथ अष्टकं—गीता छंद

अगणित कुओं का नीर पीया, प्यास फिर भी ना बुझी ।
इस हेतु जल से पूजहूं, अब मेट दो बाधा सभी ॥
चौबीस तीर्थंकर जगत में, सर्व सुख दातार हैं ।
जो पूजते तुम चरण अंबुज, वे भवोदधि पार हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं....।

भव सिंधु में भी चाह दावानल हमें झुलसा रहा ।
इस हेतु चंदन से जजूँ, अब दुःख नहिं जाता सहा ॥चौबीस।०।२॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ....चंदनं....।

निज आत्म सुख जो सहज मेरा, खंड खंड हुआ सभी ।
उसके अखंडित हेतु अक्षत, पुंज से पूजूँ अभी ॥
चौबीस तीर्थंकर जगत में, सर्व सुख दातार हैं ।
जो पूजते तुम चरण अंबुज, वे भवोदधि पार हैं ॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अक्षतं ... ।

इस मदन ने बस जगत में, जन सर्व को वश में किया ।
इसके निमूलन हेतु सुरभित, सुमन तुम अर्पण किया ॥चौबीस०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं ... ।

तन में क्षुधा व्याधी सदा, औषधि न कुछ उसके लिये ।
इस हेतु उत्तम सरस व्यंजन, आप ढिग अर्पण किये ॥चौबीस०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....नैवेद्यं.... ।

अज्ञान तम अति घोर छाया, आप पर दीखे नहीं ।
इस हेतु दीपक से जजूँ, निज ज्ञान रवि प्रगटे सही ॥चौबीस०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....दीपं.... ।

इन कर्म ने मुझ संपदा को, लूट ली मुझ पास से ।
इस हेतु इनको नाश करने, धूप खेऊं चाव से ॥चौबीस०॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .... - धूपं.... ।

वांछित मिले इस हेतु जग में, देव सब पूजे सदा ।
पर सफल अब तक ना हुआ, इस हेतु फल तुम अर्पता ॥चौबीस०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो .....फलं.... ।

नीरादि में वर रत्न धरके, अर्घ्य सुंदर ले लिया ।
अनमोल निज संपत्ति हेतु, अर्घ्य तुम अर्पण किया ॥चौबीस०॥९॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो -....अर्घ्यं.... ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

सिद्धि वधू भरतार, निज में ही रमते सदा ।
भुक्ति मुक्ति करतार, इसी हेतु भविजन जजें ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

दोहा

श्री 'शंकर' जिनदेवजी, जग में शं करतार ।
अर्घ्य चढ़ाकर मैं जजूँ, होवे निज पद सार ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'अक्षवास' जिनराज को, मिला सौख्य निर्वाण ।
हृदय कर्णिका में सदा, मुनिजन करते ध्यान ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अक्षवासजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'नग्नाधिप' देव तुम, बहिरंतर निर्ग्रंथ ।
नग्न दिगंबर रूप तुम, सत्य मोक्ष का पंथ ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नग्नाधिपजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'नग्नाधिपतीश' को, नमन करें सुरवृंद ।
मैं पूजूँ नित अर्घ्य ले, हरो सकल दुख द्वंद ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नग्नाधिपतीशजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'नष्टपाखंड' को, विश्व नमाता माथ।
मैं भी अर्घ्य चढ़ाय के, फिर ना होउँ अनाथ ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नष्टपाखंडजिनेन्द्राय अर्घ्यं ·।

'स्वप्नवेद' जिननाथ को, नमूं नमूं नत शीश।
हरो अमंगल विश्व के, भरो सकल सुख ईश ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वप्नवेदजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

आप 'तपोधन' आत्मधन, पाकर भये सुतृप्त।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ायकर, पाऊँ सौख्य प्रशस्त ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपोधनजिनेन्द्राय अर्घ्यं ····।

'पुष्पकेतु' जिनराज हैं, मुक्तिरमा भरतार।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय के, पाऊँ सौख्य अपार ॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुष्पकेतुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ····।

श्री 'धार्मिक' जिनराज, का, धर्मचक्र हितकार।
जो भविजन शरणा गहें, नाशें निज संसार ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री धार्मिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

'चन्द्रकेतु' भगवान को, नमते नाग नरेश।
स्याद्वाद अम्भोधि के, वर्धन हेतु महेश ॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री चन्द्रकेतुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अनुरक्त सुज्योति' को, नमन करूं शत बार।
तुम में जो अनुरक्त जन, वे उतरें भव पार ॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनुरक्तसुज्योतिजिनेंद्राय अर्घ्यं ·····।

'वीतराग' जिनदेव के, चरण कमल का ध्यान।
जो जन करते भाव से, पावें सौख्य निधान ॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीतरागजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'उद्योत' जिनेश तुम, ज्ञान भानु तमहार।
पूजूँ सकल विभाव तज, लहूँ ज्ञान भंडार ॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री उद्योतजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

'तमोपेक्ष' भगवान के, गुणगण अपरंपार ।
गणधर भी नहिं गा सकें, मैं पूजूँ सुखसार ॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री तमोपेक्षजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'मधुनाद' जिनेंद्र को, सुरनर खग पति आय ।
पूजें भक्ति बढ़ाय के, मैं पूजूँ हरषाय ॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मधुनादजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'मरुदेव' महान हो, अद्भुत तुम माहात्म्य ।
मैं पूजूँ नित भक्ति से, होऊं सब जन मान्य ॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मरुदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'दमनाथ' जिनेश को, नमें जितेन्द्रिय साधु ।
मैं भी पूजूँ अर्घ्य ले, हरूं सकल दुख बाध ॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री दमनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'वृषभस्वामि' आनंदघन, चिन्मय ज्योति स्वरूप ।
जो पूजें श्रद्धान धर, पावें सौख्य अनूप ॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

अहो 'शिलातन' तीर्थपति, व्रतगुणशील निधान ।
तुम्हें जजें जो भक्ति से, करें अमंगल हान ॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री शिलातनजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'विश्वनाथ' के ज्ञान में, झलके विश्व समस्त ।
त्रैकालिक पर्याययुत, सकल वस्तु प्रत्यक्ष ॥२०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विश्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'महेन्द्र' भगवान हैं, त्रिभुवनपति महनीय ।
मैं पूजूँ नित आप मुझ, हरो दशा दयनीय ॥२१॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री महेन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनवर 'नंद' जगत प्रभो, परमानंद निमग्न ।
तुमको पूजें जो मुदित, वे नर सदा प्रसन्न ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री नंदजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

सकल 'तमोहर' आप हैं, भविजन कमल दिनेश ।
जो पूजें तुम प्रीति धर, हरें सकल दुख क्लेश ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तमोहरजिनेंद्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'ब्रह्मज' जिनदेव को, वंदूँ बारंबार ।
हरूं मोक्ष पथ विघ्न सब, लहूँ सकल सुखसार ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मजजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

पूर्णार्घ्य—गीता छन्द

जो आप में ही आप रत हो, आपको वश पा लिया ।
उन चरण में शत इंद्र ने, भी आप शीश झुका दिया ॥
मैं पूजहूँ उनको सदा वे, सौख्य के भण्डार हैं ।
वे काम मोह व मृत्यु तीनों मल्ल के हंतार हैं ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शंकरादिब्रह्मजपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

सोरठा

जय जय श्री जिनराज, पृथ्वीतल पर आवते ।
बरसें रत्न अपार, सुरपति मिल उत्सव करें ॥१॥

शंभु छन्द

प्रभु तुम जब गर्भ बसे आके, उसके छह महिनेपहले ही ।
सौधर्म इंद्र की आज्ञा से, बहु रतनवृष्टि धनपति ने की ॥
मरकतमणि इंद्र नीलमणि औ, वर पद्मराग मणियां सोहें ।
माता के आंगन में बरसें, मोटी धारा जनमन मोहे ॥१॥
प्रतिदिन साढ़े बारह करोड़, रत्नों की वर्षा होती है ।
पंद्रह महीने तक यह वर्षा, सब जन का दारिद खोती है ॥
जिनमाता पिछली रात्री में, सोलह स्वप्नों को देखे हैं ।
प्रातः पतिदेव निकट जाकर, उन सबका शुभ फल पूछे हैं ॥२॥

पतिदेव कहें हे देवि ! सुनो, तुम तीर्थंकर जननी होंगी ।
त्रिभुवनपति शतइंद्रों वंदित, सुत को जनि भवहरणी होंगी ।।
ऐरावत हाथी दिखने से, तुमको उत्तम सुत होवेगा ।
उत्तुंग बैल के दिखने से, त्रिभुवन में ज्येष्ठ सु होवेगा ।।३।।
औ सिंह देखने से अनंत, बल युक्त मान्य कहलायेगा ।
मालाद्वय दिखने से सुधर्ममय, उत्तम तीर्थ चलायेगा ।।
लक्ष्मी के दिखने से सुमेरु गिरि, पर उसका अभिषव होगा ।
पूरण शशि से जन आनंदे, भास्कर से प्रभामयी होगा ।।४।।
द्वयकलशों से निधि का स्वामी, मछली युग दिखीं सुखी होगा ।
सरवर से नाना लक्षण युत, सागर से वह केवलि होगा ।।
सिंहासन को देखा तुमने, उससे वह जगद्गुरू होगा ।
सर के विमान के दिखने से, अवतीर्ण स्वर्ग से वह होगा ।।५।
नागेंद्र भवन से अवधिज्ञान, रत्नों से गुण आकर होगा ।
निर्धूम अग्नि से कर्मेंधन, को भस्म करे ऐसा होगा ।।
फल सुन रोमांच हुई माता, हर्षित मन निज घर आती है ।
श्री ह्री धृति आदिक देवी मिल, सेवा करके सुख पाती हैं ।।६।।
पति की आज्ञा से शची स्वयं, निज गुप्त वेश में आती है ।
माता की अनुपम सेवा कर, बहु अतिशय पुण्य कमाती है ।।
जब गूढ़ प्रश्न करती देवी, माता प्रत्युत्तर देती हैं ।
त्रयज्ञानी सुत का ही प्रभाव, जो अनुपम उत्तर देती है ।।७।।
इसविध से माता का माहात्म्य, प्रभु तुम प्रसाद से होता है ।
तुम नाम मंत्र भी अद्भुत है, भविजन का अघ मल धोता है ।।
मैं इसीलिये तुम शरण लिया, भगवन् ! अब मेरी आश भरो ।
निज 'ज्ञानमती' संपति देकर, स्वामिन् अब मुझे कृतार्थ करो ।।८।।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धीऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितार्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निज संपति वरें॥
इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० २५
[चौबीसी नं० २४]

पूर्व पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र भावी तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—अडिल्ल छंद

पूरब पुष्कर में ऐरावत जानिये।
आगामी तीर्थंकर को सरधानिये॥
आह्वानन कर उनको नितप्रति पूजिये।
परमानंदस्वरूप सिद्धिपति हूजिये॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितार्थंकर समूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ स्थापनं।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—चौपाई छंद

कर्मपंक प्रक्षालन काज, जल से पूजूं जिन चरणाब्ज ।
चौबीसों जिनवर पदपद्म, पूजत पाऊँ निज सुख सद्म ॥१॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं ...।

चंदन घसूं कपूर मिलाय, पूजूं आप चरण सुखदाय ॥चौ०॥२॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं ।

चंद्रकिरणसम तंदुल श्वेत, पुंज चढ़ाऊँ निजपद हेत ॥चौ०॥३॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ।

वकुलकमल सुम हरसिंगार, चरण चढ़ाऊँ हर्ष अपार ॥चौ०॥४॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ।

कलाकंद गुझिया पकवान, तुम्हें चढ़ाऊँ भवदुखहान ॥चौ०॥५॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ....।

दीपक ज्योति करे उद्योत, पूजत ही हो निज प्रद्योत ॥चौ०॥६॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ...।

धूप दशांग अग्नि में ज्वाल, दुरित कर्म जलते तत्काल ॥चौ०॥७॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ।

एला केला द्राक्ष बदाम, पूजत हो निज में विश्राम ॥चौ०॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं ...।

अर्घ्य चढ़ाय जजूँ जिनराज, तुम प्रभु तारण तरण जिहाज ॥चौ०।९।

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्द्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउ संघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

अतुल ऋद्धि के नाथ, अतुल रूप के तुम धनी ।
अगणित गुण भंडार, मेरे सब संकट हरो ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

पद्धड़ी छन्द

जिनराज 'यशोधर' जगतवंद्य । तुम गुणगण गावें इंद्रवृंद ॥
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय आज । पाऊँ परमाल्हादक स्वराज ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री यशोधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'सुकृतनाथ' जो नमें आप । उनके मिट जाते सकल ताप ॥मैं।२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुकृतनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अभयघोष' दें अभयदान । सब प्राणी गण का करें त्राण ॥मैं।३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अभयघोषजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'निर्वाण' जिनेश्वर आप नाम । जपकर भवि पाते सुखद धाम ॥मैं।४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निर्वाणजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'व्रतवास' जिनेश्वर व्रतिकबंधु । तुमही हो भगवन जगतबंधु ॥मैं।५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्रतवासजिनेंद्राय अर्घ्यं.....।

'अतिराज' अखिल गुण के निधान। तुम भक्त लहें निरुपम सुथान ।।मैं६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अतिराजजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अश्वदेव' तुम चरण सेव। जो करते सुख लभते स्वमेव ।।मैं।७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अश्वदेवजिनेंद्राय अर्घ्य ...।

'अर्जुन' जिनेंद्र तुम पापहीन। मुनिगण तुम ध्यावें ध्यानलीन ।।मैं।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अर्जुनजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'तपश्चंद्र' तप में प्रवीण। तुम शिष्य तपें तप स्वात्मलीन ।।मैं।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपश्चन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'शारीरिक' जिन तनु तापहीन। तुम ध्याकर जन हों देह हीन ।।मैं।१०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शारीरिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

जिनवर 'महेश' तुम देवदेव। सुरपति भी करते चरणसेव ।।मैं।११।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'सुग्रीव' जिनेश्वर नाममंत्र। मुनिजन को पूर्ण करे स्वतंत्र ।।मैं।१२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुग्रीवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

हे 'दृढ़प्रहार' यमशत्रु आप। भक्तों के हरते सकल ताप ।।मैं।१३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दृढ़प्रहारजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

हे 'अंबरीक' अगणित मुनीश। तुम पद पंकज में नमत शीश ।।मैं।१४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अम्बरीकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

हे 'दयातीत' करुणानिधान। करुणा कर दीजे स्वपद थान ।।मैं।१५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दयातीतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'तुंबर' जिनेश गुणगण निधान। जो पूजें ध्यावें मोक्ष थान ।।मैं।१६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तुम्बरजिनेन्द्राय अर्घ्यं.....।

हे 'सर्वशील' अठरह हजार। शीलों के स्वामी गुण अपार ।।मैं।१७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वशीलजिनेन्द्राय अर्घ्यं.....।

'प्रतिजात' जिनेश्वर जन्महीन। भविजन को करते कर्महीन ।।मैं।१८।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रतिजातजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

जिनराज 'जितेंद्रिय' परमसौख्य। इंद्रिय विरहित भोगें मनोज्ञ ।।मैं।१९।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जितेन्द्रियजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

हे 'तपादित्य' भविकमलसूर्य। शिवपथ के नेता परम धूर्य ।।मैं।२०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री तपादित्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'रत्नाकर गुण आकर महान्। अगणित गुणमणि की आप खान।।
मैं पूजूं अर्घ्य चढ़ाय आज। पाऊँ परमाल्हादक स्वराज ।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रत्नाकरजिनेंद्राय अर्घ्यं।

'देवेश' तीर्थंकर देवपूज्य। तुमवाणी भी है जगत्पूज्य ।।मैं।२२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

'लांछन' सुनाम शुभ चिह्न धार। तन शक्ती भी तुम है अपार ।।मैं।२३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री लांछनजिनेन्द्राय अर्घ्यं।

श्री 'सुप्रदेश' जिनवर हमेश। भक्तों के हरते सकल क्लेश ।।मैं।२४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुप्रदेशजिनेंद्राय अर्घ्यं।

पूर्णार्घ्य – गीता छन्द

सज्जाति सद्गार्हस्थ्य पारिव्राज्य और सुरेंद्रता।
साम्राज्यपद आर्हन्त्य पद, निर्वाणपद की पूर्णता ।।
ये सात परम स्थान हैं, तुम भक्त इनको पावते।
क्रम से परमनिर्वाण पाकर, फिर न भव में आवते ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री यशोधरादिसुप्रदेशपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

रोला छंद

जय जय श्री जिनदेव, तुम महिमा अतिभारी ।
जय जय तुम पद सेव, करें निकट संसारी ॥
जय जय मुनिगण नित्य, तुम गुण महिमा गाते ।
हृदय कमल के मार्हि, तुमको सहज बिठाते ॥१॥
भविजन मन गृह मार्हि, जब तुम वास करोगे ।
उनके सब संताप, प्रभु तब क्यों न हरोगे ॥
तुम तनको संस्पर्श, पवन लगे तन में जब ।
अहो कौन सी व्याधि, दूर नहीं होवे तब ॥२॥
सीता को जब राम, अग्नि प्रवेश कराया ।
लिया आपका नाम, अग्नी नीर बनाया ॥
शील माहात्म्य विकास, बहुविध कमल खिले हैं ।
नाम मंत्र परसाद, जन जन हृदय मिले हैं ॥३॥
वारिषेण के घात, हेतू शस्त्र चलायो ।
आप नाम तत्काल, रत्ननहार बनायो ॥
मनोरमा जप नाम, वज्र किवाड़े खोले ।
विद्युच्चर तुम नाम, जप भव बंधन तोड़े ॥४॥
मनोवती ने आप, नाम जपा था जबही ।
दर्श मिला तत्काल, देवनिर्मित से तबही ॥
पूज्यपाद तुम नाम, ले निज दृष्टी पाई ।
मानतुंग गुणगान, कर निज कीर्ति बढ़ाई ॥५॥
बहुत भक्त तुम नाम, लेकर निज दुख चूरे ।
कहूँ कहां तक नाम, होय कभी ना पूरे ॥

मुझको भी हे नाथ ! नाम मंत्र का शरणा ।
नहीं शक्ति कुछ नाथ ! लेश मात्र गुण वरणा ॥६॥
मुझ में अगणित दोष, उन पर दृष्टि न डारो ।
करो हमें संतोष, अपनो विरद निहारो ॥
जब तक मुक्ति न होय, चरणों में रख लीजे ।
नशे महारिपु मोह, ऐसी शक्ति दीजे ॥७॥

दोहा

शरणागत के सर्वथा, तुम रक्षक भगवान ।
'ज्ञानमती' अविचल निधी, दे मुझ करो महान ॥८॥

ॐ ह्रीं पूर्वपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं—।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निज संपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० २६

[चौबीसी नं० २५]

पश्चिम पुष्करार्ध भरतक्षेत्रभूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—नरेन्द्र छन्द

पश्चिम पुष्कर के दक्षिण दिश, भरतक्षेत्र मन भावे ।
उसमें आर्यखंड चौथे युग, में जिनवर उपजावे ॥
हुये अतीत तीर्थंकर चौबिस, उनको पूजूँ ध्याऊं ।
समतारस पीयूषपान करं, भव भव क्लेश मिटाऊं ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—नरेन्द्र छन्द

कंचन झारी में प्रासुक जल, ले तुम पूजन आया ।
चरणकमल में त्रयधारा दे, मन में अति हरषाया ॥
पंचकल्याणक के स्वामी हैं, चौबीसों तीर्थंकर ।
उनके चरणकमल को पूजूँ, वे हैं जग क्षेमंकर ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

सुवरण द्रव सम चंदन शीतल, तन को दाह हरे है ।
चंदन से तुम चरण पूजते, भव संताप टरे है ॥पंच०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

सहज सौख्य मुझ इंद्रियगण मिल, दुःखस्वरूप बनाया।
उसको अक्षय करने हेतू, अक्षत पुँज चढ़ाया ॥
पंचकल्याणक के स्वामी हैं, चौबीसों तीर्थंकर।
उनके चरणकमल को पूजूँ, वे हैं जग क्षेमंकर ॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ...।

कामदेव ने पुष्प बाण से, सब जग वश्य किया है।
उसको वश करने हेतू मैं, पुष्प चढ़ाय दिया है ॥पंच०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ..।

क्षुधारोग सबसे बढ़कर है,इसको शमन करन को।
खाजे पूरण पोली हलुआ, लाय चढ़ाऊं प्रभू को ॥पंच०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ..।

मोहध्वांत ने दृष्टि अंधकर, कुगति गर्त में डाला।
दीपक से अर्चन करते ही, होवे ज्ञान उजाला ॥पंच०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं....।

कर्म शत्रु ने शक्ति अनंती, मेरी छीन लिया है।
धूप खेवते अग्नि माहिं निजशक्ति विकास किया है ॥पंच०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ...।

मनवांछित फल मिला न अब तक, काल अनंत गमाया।
सेव संतरा आदि चढ़ाकर, मनवांछित फल पाया ॥पंच०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं....।

अष्टद्रव्य ले अर्घ्य बनाकर, बहुविधरत्न मिलाये ।
निःश्रेयस सुख संपति हेतू, तुम पद अर्घ्य चढ़ाये ॥पंच०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

सौम्य छवीयुत मुखकमल, मंद मंद मुस्कान ।
अंतर शुद्धी कह रहा, खेद रहित अमलान ॥१।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अडिल्ल छंद

'पद्मचंद्र' जिनराज जगत सरताज हैं ।
जो पूजें वे लहें स्वात्म साम्राज हैं ॥
मैं नित अर्घ्य चढ़ाकर तुम अर्चा करूँ ।
सदा आपके गुणगण की चर्चा करूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मचंद्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'रत्नांग' जिनेश रत्नत्रय गुण भरे ।
भक्तों को दे रतन तीन निजसम करे ॥मैं०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रत्नांगजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

आप 'अयोगीकेश' योग को धारके ।
मुक्ति धाम में पहुँचे योग निवार के ॥
मैं नित अर्घ्य चढ़ाकर तुम अर्चा करूं ।
सदा आपके गुणगण की चर्चा करूं ॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अयोगिकेशजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

हे 'सर्वार्थ' जिनेश सर्व सिद्धी करो ।
विघ्न कर्म को नाश पूर्ण ऋद्धी भरो ॥मैं०॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वार्थिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'ऋषिनाथ'[1] जिनेश ऋषीगण तुम नमें ।
जो पूजें धर नेह शिवालय में रमें ॥मैं०॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋषिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'हरिभद्र' जिनेंद्र आप की अर्चना ।
करै शीघ्र ही मोह मल्ल की भर्त्सना ॥मैं०॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री हरिभद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

आप 'गुणाधिप' गुण अनंत के ईश हो ।
तुम गुण गा गा थके सकल गणईश[2] जो ॥मैं०॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री गुणाधिपजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'पारत्रिक' देव भवाम्बुधि पार हो ।
जो पूजें वे सहज श्रुताम्बुधि पार हों ॥मैं०॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री पारत्रिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'ब्रह्मनाथ' जिनदेव तुम्हें जो पूजते ।
परम ब्रह्म पद लहें कर्म से छूटते ॥मैं०॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री ब्रह्मनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'मुनीन्द्र' जिनदेव आप की वंदना ।
सर्व दुखों का कर देती है खंडना ॥मैं०॥१०॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनीन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

---

१. कृषिनाथ ऐसा भी पाठ है । २. गणधर देव ।

श्री 'दीपक' जिनदेव त्रिजग के सूर्य हो ।
भक्तों को सुख देते आप अपूव हो ॥मैं०॥११॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री दीपकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

तुम 'राजर्षि' जिनेश राजसुख छोड़के ।
सुखी हुये शिवतिय से नाता जोड़के ॥मैं०॥१२॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री राजर्षिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

प्रभो 'विशाखदेव' तुमको जो नित नमें ।
निज अनुभव पा विषय कषायों को वमें ॥मैं०॥१३॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री विशाखदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

आप 'अनिंदित' सर्व जगत में श्रेष्ठ हैं ।
भवव्याधी हरने में उत्तम वैद्य हैं ॥मैं०॥१४॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनिन्दितजिनेन्द्राय अर्घ्यं -।

'रविस्वामी' भव्यों को नित्य प्रबोधते ।
मोक्ष प्राप्ति हित शिष्यों को संबोधते ॥मैं०॥१५॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री रविस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं --।

'सोमदत्त' सब जन मन को आल्हादते ।
जो वंदें वे आत्म गुणों को साधते ॥मैं०॥१६॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

'जयस्वामी' जिनदेव, हरो यम की व्यथा ।
पुनः पुनः नहिं धरूं जन्म भव में यथा ॥मैं०॥१७॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'मोक्षनाथ' जिन मोक्ष महल में रह रहें ।
भक्तों के संपूर्ण पाप क्षण में दहें ॥मैं०॥१८॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री मोक्षनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'अग्रभास' जिन सर्व उपद्रव को हरें ।
जो पूजें वे भूतादि के भय हरें ॥मैं०॥१९॥
ॐ ह्रीं अर्हं श्री अग्रभासजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

'धनुःसंग' जिनदेव ध्यान को धारके।
कर्म शत्रु को हना लक्ष्य निज पा सके ॥
मैं नित अर्घ्य चढ़ाकर तुम अर्चा करूं।
सदा आपके गुणगण की चर्चा करूं ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धनुःसंगजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'रोमांचक' को रोमांचित हो हर्ष से।
जो पूजें वे बचें वैर संघर्ष से ॥मैं०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रोमांचकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'मुक्तिनाथ' सब घाति अघाती नाश के।
मुक्तिरमा को स्वयं वरा उल्लास से ॥मैं०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुक्तिनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'प्रसिद्धनाथ' तुम यश त्रिभुवन में व्याप्त है।
जो गुण कीर्तन करें बनें शिवनाथ हैं ॥मैं०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रसिद्धनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'जितेश' मद ईर्ष्या मत्सर के जयी।
मोहराज को जीत हुये मृत्युंजयी ॥मैं०॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जितेशजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

तीर्थंकर को पूजके, भवदधि तरूं अगाध।
चिदानंद चिन्मय सहज, सुख पाऊं निर्बाध ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्मचंद्रादिजितेशस्वामिपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

जै जै जिनेंद्र आपने जब जन्म था लिया ।
संपूर्ण लोक में महा आश्चर्य भर दिया ॥
सुरगृह में कल्पवृक्ष पुष्पवृष्टि कर झुकें ।
देवों के सिंहासन भी आप आप कंप उठें ॥१॥

शीतल सुगंध वायु मंद मंद बही थी ।
पृथ्वी भी तो हिलने से मानों नाच रही थी ॥
संपूर्ण दिशायें गगन भी स्वच्छ हुये थे ।
सागर भी तो लहरा रहा आनंद हुये से ॥२॥

व्यंतर गृहों में भेरियों के शब्द हो उठे ।
भवनालयों में शंख नाद गूँजने लगे ॥
ज्योतिष गृहों में सिंहनाद स्वयं हो उठा ।
सुरकल्पवासि भवन में घंटा भी बज उठा ॥३॥

इंद्रों के मुकुट अग्र भी स्वयमेव झुक गये ।
जिन जन्म जान आसनों से सब उतर गये ॥
तब इंद्र के आदेश से सुर पंक्ति चल पड़ीं ।
सबके हृदय में हर्ष की नदियां उमड़ पड़ीं ॥४॥

सुरपति प्रभु को गोद में ले गज पे चढ़े हैं ।
ईशान इंद्र प्रभु पे छत्र तान खड़े हैं ॥
सानत्कुमार औ महेंद्र चमर ढोरते ।
सब देव देवियाँ बहुत भक्ती विभोर थे ॥५॥

क्षण में सुमेरु गिरि पे जाके प्रभु को बिठाया ।
पांडुक शिला पे नाथ का अभिषेक रचाया ॥
सौधर्म इंद्र ने हजार हाथ बनाये ।
संपूर्ण स्वर्ण कलश एक साथ उठाये ॥६॥

सबसे प्रभू का न्हवन एक साथ कर दिया ।
जय जय ध्वनी से देवों ने आकाश भर दिया ॥
सब इंद्र औ इंद्राणियों ने न्हवन किया था ।
सब देव औ देवांगनाओं ने भी किया था ॥७॥

अभिषेक जल उस क्षण में पयोसिंधु बना था ।
देवों की सेना डूब रही हर्ष घना था ॥
जन्माभिषेक जिनका स्वयं इंद्र कर रहे ।
उत्सव विशेष और की फिर बात क्या कहें ॥८॥

सुरपति ने पुनः प्रभु को लाके जनक को दिया ।
बहुदेव और देवियाँ सेवा में रख दिया ॥
सुर धन्य वे जो नाथ संग खेल खेलते ।
मिथ्यात्वशत्रु को भी वे घानी में पेलते ॥९॥

मैं भी करूँ सेवा प्रभू की भक्ति भाव से ।
मिथ्यात्व का निर्मूल हो समकित प्रभाव से ॥
बस एक प्रार्थना पे नाथ ! ध्यान दीजिये ।
'सज्ज्ञानमती' पूर्ण हो यह दान दीजिये ॥१०॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निज संपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० २७

[चौबीसी नं० २६]

पश्चिम पुष्करार्धद्वीप भरतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पजा

ॐ

अथ स्थापना—गीता छन्द

पुष्कर अपर के भरत में संप्रति जिनेश्वर जो हुये ।
समरस सुधास्वादी मुनी उनके चरण में नत हुये ॥
उन वीतरागी सौम्य मुद्रा देख जन मन मोदते ।
उनकी करूँ मैं अर्चना वे सकल कल्मष धोवते ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वोपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—भुजंग प्रयात छन्द

मुनी चित्त सम स्वच्छ जल को लिया है ।
प्रभू पाद में तीन धारा किया है ॥
जजूँ तीर्थंकर के चरण पंकजों को ।
मिटाऊँ सभी जन्म के संकटों को ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं····।

घिसा गंध कर्पूर मिश्रित किया है ।
प्रभू चर्ण में चर्च समसुख लिया है ॥जजूँ०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ····चंदनं····।

पयोराशि के फेन समश्वेत शाली ।
धरूँ पुंज सन्मुख बनूँ भाग्यशाली ॥
जजूं तीर्थंकर के चरण पंकजों को ।
मिटाऊँ सभी जन्म के संकटों को ॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... अक्षतं .....।

जुही मोगरा कुंद की माल लेके ।
चढ़ाऊं तुम्हें स्वात्म सुख आश लेके ॥जजूं०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... पुष्पं .....।

जलेबी इमरती भरे थाल लाऊं ।
महातृप्तिकर आप चर्णों चढ़ाऊं ॥जजूं०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... नैवेद्यं .....।

शिखा दीप की बाह्य का ध्वांत नाशे ।
करूं आरती ज्ञान की ज्योति भासे ॥जजूं०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... दीपं .....।

जले धूप अग्नी विषे गंध फैले ।
जलें कर्म वो जो सदा हैं विषैले ॥जजूं०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... धूपं --।

पनस आम अंगूर गुच्छे भले हैं ।
तुम्हें अर्पते सत्फलों को फले हैं ॥जजूं०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो ..... फलं ...।

जलादी मिला अर्घ्य चरणों चढ़ाऊँ ।
निजात्मीक संपत्ति मैं शीघ्र पाऊँ ॥ज.जूँ०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांतीकर सदा ।
चउ संघ शांती हेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

अलंकार भूषण रहित, फिर भी सुन्दर आप ।
आयुध शस्त्र विहीन हो, नमूँ नमूँ निष्पाप ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेन्द्र छन्द

श्री 'सर्वांगस्वामि' तीर्थंकर, अतिशय रुप सुहावे ।
इंद्र हजार नेत्रकर निरखे, तो भी तृप्ति न पावे ॥
मैं पूजूं श्रद्धा उर धर के, समकित ज्योति जगाऊं ।
निज आतम अनुभव रस पीकर, फेर न भव में आऊं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वाङ्गस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'पद्माकर' जिनवर तुमही, भव्यकमल विकसाते ।
केवल ज्ञानमयी किरणों से, तम अज्ञान भगाते ॥मैं॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पद्माकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'प्रभाकर' निजकांती से, दश दिश को नहलाते ।
निज भामंडल में भव्यों को, सात जनम दिखलाते ।।
मैं पूजूँ श्रद्धा उर धर के सम्यकित ज्योति जगाऊं ।
निज आतम अनुभव रस पीकर फेर न भव में आऊं ।।३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभाकरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

हे 'बलनाथ' आप बल पाके, भक्त बने बलशाली ।
मन वच काय बली ऋद्धी पा, हो जाते गुणशाली ।।मैं।।४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बलनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'योगीश्वर' जिनराज आपने, मुनि को योग सिखाया ।
वृक्ष मूल अभ्रावकाश, आतापन आदि बताया ।।मैं।।५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री योगीश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सूक्ष्मांग' वर्णगंधादिक, रहित अमूर्तिक चिन्मय ।
इंद्रिय देहरहित हो फिर भी, परम अतीन्द्रिय सुखमय ।।मैं।।६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूक्ष्मांगजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'व्रतचलातीत' जिनवर जी, कभी न व्रत से डिगते ।
सर्व शीलव्रत गुण के भर्ता, सबको व्रत में धरते ।।मैं।।७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री व्रतचलातीतजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'कलंबक' निष्कलंक हैं, कर्मकलंक विनाशी ।
भव्यों के कलिमल को धोकर, करें स्वच्छ अविनाशी ।।मैं।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कलंबकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

श्री 'परित्याग' जिनेश्वर तुमने, सर्वजगत को त्यागा ।
पूर्ण दिगंबर हो तप कीना, धरा न किंचित् धागा ।।मैं।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परित्यागजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'निषेधिक' पाप क्रिया को, तुमने पूर्ण निषेधा ।
स्वयं क्षपक श्रेणी पर चढ़कर, घाति शत्रु को बेधा ।।मैं।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री निषेधिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'पापापहारि' जिनवरजी, पाप समूह विनाशा ।
भव्यों ने भी तुम भक्ती से, अंतर्मल को नाशा ।।मैं।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पापापहारिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सुस्वामी' जगके नामी, त्रिभुवन अंतर्यामी ।
जो पूजें तुम चरण सरोरुह, वे होते शिवधामी ।।मैं।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुस्वामिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'मुक्तिचंद्र' तीर्थंकर तुमने, मुक्ति धाम को पाया ।
तुम पद भक्त जनों ने भी तो, मुक्ती पथ अपनाया ।।मैं।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुक्तिचन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'अप्राशिक' भगवान तुम्हीं हो, भवि जीवन सुखदाता ।
जो जन पूजें भक्ति भाव से, हरते कर्म असाता ।।मैं।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अप्राशिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'जयचंद्र' करम अरि जेता, भविजन को उपदेशें ।
जो जन आते चरण शरण में, उनको शिवपुर भेजें ।।मैं।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जयचन्द्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'मलाधारि' मलमूत्र पसीना, रहित देह तुम धारा ।
भक्तों का मन निर्मल करने, तुम धुनि अमृत धारा ।।मैं।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मलाधारिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'सुसंयत' संयमियों के, आश्रयभूत तुम्हीं हो ।
सभी असंयत को संयत, करने में एक तुम्हीं हो ।।मैं।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुसंयतजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'मलयसिंधु' जिन नाथ आपको, सुरपति खगपति पूजें ।
नरपति मुनिपति भी नित वंदें, कर्म अरी से छूटें ।।मैं।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मलयसिंधुजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

प्रभू 'अक्षधर' तीर्थंकर हैं, सर्व हितंकर जग में ।
उनके वचन परम प्रीतिकर, भविजन रमते उसमें ।।मैं।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अक्षधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'देवधर' किंकर है नित, सौधर्मेन्द्र तुम्हारा ।
त्रिभुवन के भव्यों ने मिलकर, लीना आप सहारा ॥
मैं पूजूँ श्रद्धा उर धर के समकित ज्योति जगाऊं ।
निज आतम अनुभव रस पीकर फेर न भव में आऊं ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

प्रभू 'देवगण' द्वादश गण के, अधिपति आप बखाने ।
समवसरण में दिव्यध्वनी सुन, सबजन निजहित ठाने ॥मैं॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवगणजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

श्री 'आगमिक' तीर्थंकर जग में, आ वृष तीर्थ चलाया ।
भविजन खेती सिंचन हेतू, धर्मामृत बरसाया ॥मैं॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आगमिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ·।

श्री 'विनीत' तीर्थेश्वर तुमने, विनय धर्म उपदेशा ।
दर्शन ज्ञान चरित्र तप औ, उपचार सहित निर्देशा ॥मैं॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनीतजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

'रतानंद' तीर्थंकर निज में, रत हो जिनके द्वारा ।
परमानंद सुखामृत पीते, शतशत नमन हमारा ॥मैं॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रतानन्दजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

पूर्णार्घ्य—दोहा

क्रोध बिना भी आपने, कर्म शत्रु को घात ।
निर्भय पद को पा लिया, नमूँ नमा कर माथ ॥मैं॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वाङ्गस्वाम्यादिरतानंदपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ····।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

रोला छन्द

जै जै श्री जिनदेव, अद्भुत अतिशय धारी ।
जै जै श्री जिनदेव, सब जन को सुखकारी ।।
जै जै श्री जिनदेव, गणपति तुम गुण गावें ।
चार ज्ञान से युक्त, फिर भी पार न पावें ।।१।।
तुम तन में मलमूत्र, नाहिं पसेव नहीं है ।
रुधिर दुग्ध सम श्वेत, अतिशय रूप सही है ।।
अति सुगंधमय देह, लक्षण सहस रु आठा ।
प्रियहित वचन अपूर्व, अतुल वीर्य तन में था ।।२।।
समचतुष्क आकार, वज्र वृषभ नाराचे ।
ये दश अतिशय नाथ, जन्म समय से साथे ।।
तुम सौंदर्य समुद्र, निरख निरख सुख पावे ।
इंद्र नहीं हो तृप्त, नेत्र हजार बनावे ।।३।।
इंद्र सहस्त्रों नाम, ले स्तवन उचारे ।
निज जिह्वा औ वाणि, को पवित्र कर डारे ।।
प्रभू आप श्रीमान, और स्वयंभू नामा ।
नाम स्तवन जिनेश, करते शिवसुख कामा ।।४।।
नाथ आप प्रतिबिंब, जो स्तवन करे हैं ।
स्थापन संस्तवन, कर सब सौख्य भरे हैं ।।
मल विरहित तुम देह, रूप अनूप तुम्हारा ।
द्रव्य स्तवन जिनेश, भविजन एक सहारा ।।५।।
तुम जन्मादिक भूमि, की स्तुती करें जो ।
क्षेत्र स्तवन करंत, भव भव पाप हरें वो ।।
गर्भादिक तिथिकाल, का स्तवन उचारें ।
काल स्तवन हमेश, करके निज अघ टारें ।।६।।

दर्शन ज्ञान अनंत, सुख औ वीर्य अनंते ।
तुम गुण गान करंत, भाव स्तवन धरंते ॥
नाम स्थापन द्रव्य, क्षेत्र काल भावों से ।
छह विध से त्रयकाल, करते स्तुति जो रुचि से ॥७॥

भक्ति नाव में बैठ, भववारिधि वे तरते ।
करें कर्म नग चूर, मुक्ति रमा को वरते ॥
मैं भी तुम स्तोत्र, करूं सदा मुद मन से ।
पूजा अर्चा और, वंदन भी कर करके ॥८॥

पाऊं शक्ति अपूर्व, यम को मार भगाऊं ।
निज आतम रस पूर, परमानंद उपाऊं ॥
करो कृपा अब नाथ, पुनः नहीं कुछ मांगूं ।
'ज्ञानमती' सुख आश, पूर्ण करो पग लागूं ॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो 'तीस चौबीसी' महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निज संपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० २८

[चौबीसी नं० २७]

पश्चिमपुष्करार्धद्वीपभरतक्षेत्र

भविष्यत् कालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—अडिल्ल छंद

पश्चिम पुष्कर भरतक्षेत्र मनमोहना ।
भाविकाल के तीर्थंकर से सोहना ॥
उन चौबीसों जिनवर की पूजा करूं ।
आशा सरवर तुम वच से सूखा करूं ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—चाल (नन्दीश्वर की)

भागीरथि निर्मल नीर, प्रासुक ले आऊं ।
त्रयधार करूं सुख सीर, चरणाम्बुज ध्याऊं ॥
जिनवर चौबीस महान्, आगे होवेंगे ।
जिन भक्तों के तत्काल, कलिमल धोवेंगे ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

सुरभित चंदन घनसार, शीतल सुखकारी ।
तुम चरणन चचूं आज, समरस सुखकारी ॥जिन०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं ..।

उज्ज्वल तंदुल धुलवाय, थाली भरलाऊं।
तुम आगे पुंज चढ़ाय, आतम सुख पाऊं॥
जिनवर चौबीस महान्, आगे होवेंगे।
निज भक्तों के तत्काल, कलिमल धोवेंगे॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ...।

चंपक जूही अरविंद, सुमनों से अर्चूं।
स्मर शर क्लेश अशेष, नाशूं हिय हर्षूं॥जिन०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ।

पायस पूरी पकवान, तुम ढिग भेंट धरूं।
आतम अनुभव रसपान, कर मन तृप्त करूं॥जिन०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ...।

घृत दीपक ज्योति उद्योत, धारूं तुम आगे।
प्रगटे निजपर का ज्ञान, मोह तिमिर भागे॥जिन०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ...।

दशगंध सुगंधित धूप, अग्नी संग जले।
सब दुरित भस्म हों शीघ्र, निज की भ्रांति टले॥जिन०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ।

काजू अखरोट बदाम, अमृतफल[1] लाऊँ।
तुम चरण चढ़ाकर नित्य, वांछित फल पाऊँ॥जिन०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं ...।

---

१. नाशपाती।

जल चंदन अक्षत पुष्प, नैवज दीप लिया ।
वर धूप फलों से युक्त, अर्घ्य चढ़ाय दिया ।।जिन०।।९।।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ...।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँ जग शांतीकर सदा ।
चउसंघ शांतीहेतु, शांतीधारा मैं करूँ ।।१०।।

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ।।११।।

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

नाथ ! आप शिवपथ विघन, करते चकनाचूर ।
इसी हेतु मैं पूजहूँ, मिले आत्मरस पूर ।।१।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेन्द्र छन्द

मन से संचित पाप उदयगत मानसीक दुख देते ।
नाथ 'प्रभावक' तीर्थंकरजी सब दुख को हर लेते ।।
परम अतींद्रिय ज्ञानसौख्यमय श्री जिनवर को ध्याऊँ ।
चिच्चैतन्य कल्पतरु निज से मनवांछित फल पाऊँ ।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभावकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

वच से संचित कर्म उदय गत वाणी को दुख कारी ।
श्री 'विनतेंद्र' जिनेश्वर पूजा सब दुख संकट हारी ।।परम०।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनतेंद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

तन से संचित पाप उदयगत काया को दुखदायी ।
नाथ 'सुभावक' जिनवर पूजन सब दुखहर सुखदायी ॥
परम अतींद्रिय ज्ञान सौख्यमय श्री जिनवर को ध्याऊँ ।
चिच्चैतन्य कल्पतरु निज से मनवांछित फल पाऊँ ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुभावकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

अशुभ योग से संचित पातक आकस्मिक दुख दाता ।
श्री 'दिनकर' जिनवर की पूजन दुःख हरे दे साता ॥परम०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दिनकरजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

अगणित व्याधी पाप उदयसे तन मन को दुख दाता ।
'अगस्त्येज' जिनवर की पूजा मेटे सर्व असाता ॥परम०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अगस्त्येजोजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

क्रोधकषाय आत्म की शांती भंग करे दुख देवे ।
'श्रीधनदत्त' जिनेश्वर पूजन क्रोध नाश कर देवे ॥परम०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धनदत्तजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

मानकषाय स्वात्म गौरव को मिट्टी में मिलवाता ।
'पौरव' जिनकी पूजन करते मार्दव गुण बन जाता ॥परम०॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पौरवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

माया ठगिनी निज चेतन को ही ठगकर दुख देती ।
श्री 'जिनदत्त' जिनेश्वर पूजा उसका क्षय कर देती ॥परम०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जिनदत्तजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

लोभकषाय आत्म संपत्ती को तृणवत् कर देता ।
'पार्श्वनाथ' का पूजन भवि को संतोषित कर देता ॥परम०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पांचों इंद्रिय के विषयों ने रत्नत्रय निधि लूटी ।
'मुनी सिंधु' का पूजन करते इनसे मूर्छा टूटी ॥परम०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनीसिंधुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

इस मिथ्यात्व शत्रु ने मुझको त्रिभुवन में भटकाया ।
श्री 'आस्तिक' जिन की पूजन ने उसको मार भगाया ।।परम।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री आस्तिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

अविरति आस्रव ने बहुतेरे कर्म आत्मसंग जोड़े ।
'भवानीक' जिन की पूजा से कर्म झड़ें मुख मोड़े ।।परम।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भवानीकजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

मुझ प्रमाद ने मुझको जग के अंधकूप में डाला ।
श्री 'नृपनाथ' आप भक्तों को भव से शीघ्र निकाला ।।परम।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नृपनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

पच्चीसों कषाय ने मिलकर नाना दुःख दिखाये ।
'नारायण' जिनवर की भक्ती सब दुख दूर भगाये ।।परम।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नारायणजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

अप्रशस्त योगों ने जग में सबको रोक रखा है ।
श्री 'प्रशमौक' जिनेश्वर से ही सब दुख शोक नशा है ।।परम।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रशमौकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

अशुभकर्म आस्रव सब जन को भव भव में दुख देता ।
श्री 'भूपति' की पूजन भवि के शुभ आस्रव कर देता ।।परम।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूपतिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

पुण्य पाप सोने लोहे की बेड़ीवत् दुखदायी ।
श्री 'सुदृष्टि' जिनकी पूजा ने सब बेड़ी तुड़वाई ।।परम।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुदृष्टिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

भूत प्रेत डाकिन शाकिनि औ व्यंतर की बाधायें ।
श्री 'भवभीरु' भ्रामहर जगतें तुरत नष्ट हो जायें ।।परम।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भवभीरुजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

देवों द्वारा किये उपद्रव बहु विध पीड़ा देते ।
श्री 'नंदन' जिनवर भक्तों की सब पीड़ा हर लेते ।।परम।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नन्दनजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

दुष्ट नरों द्वारा दी पीड़ा सहन नहीं होवे जब ।
श्री 'भार्गव' जिन पूजन करिये वे दुख शमन करें सब ॥
परम अतींद्रिय ज्ञान सौख्यमय श्री जिनवर को ध्याऊँ ।
चिच्चैतन्य कल्पतरु निज से मनवांछित फल पाऊँ ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भार्गवजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

तिर्यंचों कृत घोर उपद्रव तनिक कष्ट नहिं देवें ।
श्री 'सुवसू' तीर्थंकर का यदि जन आश्रय ले लेवें ॥परम॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुवसूजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

वायुयान नौका आदी से पतन आदि के संकट ।
नाथ 'परावश' की पूजन से टल जाती सब आपद ॥परम॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री परावशजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

तन में व्रण हों अस्थि टूटने आदिक बहु दुख होते ।
'वनवासिक' जिन की पूजन से कष्ट पलायित होते ॥परम॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वनवासिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

शारीरिक मानस आगंतुक आकस्मिक पीड़ायें ।
जो 'भरतेश' जिनेश्वर पूजें सबको दूर भगायें ॥परम॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भरतेशजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्य—दोहा

इहलोकादिक सात भय, जनको करते भीत ।
भय भी भय से भागते, जो पूजें तुम प्रीति ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रभावकादिभरतेशस्वामिपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

शंभु छन्द

जय जय श्रीपति जय लक्ष्मीपति, जय जय मुक्ती ललना पति हो।
जय जय त्रिभुवन पति गणपति के, पति जय हरि हर ब्रह्मा पति हो ।।
कर्मों के भेत्ता हित उपदेष्टा, त्रिभुवन त्रिसमय वेत्ता हो।
जय जय केवलज्ञानी भगवन्, तुम ही शिव पथ के नेता हो ।।१।।
जहं आप विराज रहें भगवन् ! सौ सौ योजन तक उस दिश में।
दुर्भिक्ष अकाल नहीं पड़ता, रहता सुभिक्ष उस उस थल में ।।
जब श्री विहार होता भगवन्, आकाश में आप गमन करते।
हिंसा जीवों की नहिं किंचित्, नहिं कवलाहार आप करते ।।२।।
उपसर्ग न तुम पर हो सकता, चारों दिश चउ मुख दिखते हैं।
नहिं छाया नहीं पलक झपकें, नख रोम नहीं बढ़ सकते हैं ।।
सब विद्याओं के ईश आप, औ दिव्यध्वनी भी खिरती है।
जो तालु ओंठ कंठादिक के, व्यापार रहित ही दिखती है ।।३।।
अठरह महभाषा सात शतक, क्षुद्रक भाषामय दिव्य धुनी।
उस अक्षर अनक्षरात्मक को, संज्ञी जीवों ने आन सुनी ।।
तीनों संध्या कालों में वह त्रय त्रय मुहूर्त स्वयमेव खिरे।
गणधर चक्री औ इंद्रों के, प्रश्नोंवश अन्य समय भि खिरे ।।४।।
भव्यों के कर्णों में अमृत, बरसाती शिव सुखदानी है।
चैतन्य सुधारस की झरणी, दुख हरणी यह जिनवाणी है ।।
प्रभु को जब केवलज्ञान हुआ, ये ग्यारह[1] अतिशय माने हैं।
इन अद्भुत गुण की संख्या को, सूरि यतिवृषभ बखाने हैं ।।५।।

---

१. तिलोयपण्णत्ति में श्री यतिवृषभ आचार्य ने केवलज्ञान के ग्यारह अतिशय तथा देवकृत तेरह अतिशय माने हैं। [तिलोय० अधिकार ४, पृ० २६३]

प्रभु कब ऐसा सौभाग्य मिले, साक्षात् ध्वनी तुम सुन पाऊँ।
संपूर्ण विकल्पों को तजके, तुम चरणों में ही रम जाऊँ॥
पर का संपर्क सभी तज दूँ, निज में ही नितप्रति वास करूँ।
प्रभु केवल 'ज्ञानमती' वर दो, बस आवागमन समाप्त करूँ॥६॥

दोहा

तुम पद पंकज पूजतें, अतिशय पुण्य संयोग।
नहिं अनिष्ट संयोग हो, नहिं हो इष्ट वियोग॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिभरतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निज संपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

卐◆◆卐

पूजा नं० २६

[चौबीसी नं० २८]

पश्चिम पुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र भूतकालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीता छन्द

दिश अपर पुष्कर द्वीप में, शुभ क्षेत्र ऐरावत कहा ।
उस मध्य आरज खंड में, तीर्थेशगण होते वहाँ ॥
जो हुये बीते काल में, उन जिनवरों को मैं जजूँ ।
आह्वानविधि करके यहां, मन वचन तन से नित जजूँ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—स्रग्विणी छंद

नीर से पूजहूँ आप पादाब्ज को ।
आत्म को शुद्ध कर पाउं निजराज को ॥
तीर्थकर्तार को पूजते जो सदा ।
वे कृती शीघ्र पाते निजी संपदा ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जलं....।

गंध चचूँ प्रभो आप पादाब्ज में ।
राग की आग तत्क्षण करूं शांत मैं ॥तीर्थ०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं....।

शालि के पुंज तुम पास में मैं धरूं ।
सौख्य भंडार से मन तिजोरी भरूं ॥
तीर्थकर्तार को पूजते जो सदा ।
वे कृती शीघ्र पाते निजी संपदा ॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं....।

पुष्प अंजलि करूं आप पादाब्ज पे ।
काम को नाशहूँ आप विश्वास पे ॥तीर्थ८॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं ....।

मिष्ट लड्डू चढ़ाऊं तुम्हें प्रेम से ।
भूख बाधा मिटाऊं प्रभु नियम से ॥तीर्थ०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं ....।

दीप से पूजहूँ ज्ञान ज्योती तुम्हें ।
दीजिये भेद विज्ञान ज्योती हमें ॥तीर्थ०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं ..।

धूप खेऊं अगनि पात्र में चाव से ।
आत्म निर्मल करूं भक्ति के भाव से ॥तीर्थ०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं.....।

आम्र आदी फलों से करूं अर्चना ।
मोक्षफल की करूं मैं सदा प्रार्थना ॥तीर्थ०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं ..।

अर्घ्य अर्पण करूं मुक्ति के कांत को ।
चाहु मैं नित्य आत्यंतिकी शांति को ॥तीर्थ०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं—।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुंजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूं ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पदपद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूं ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

सोरठा

केवल दर्शन ज्ञान, सौख्य वीर्य गुण आप में ।
इन गुण हेतु महान, पाद सरोरुह मैं जजूँ ॥१॥

इति मण्डलस्योपरि पुष्पाजलिं क्षिपेत् ।

दोहा

श्री 'उपशांत' जिनेंद्र हैं, प्रशम गुणाकर आप ।
उपशम गुण के हेतु मैं, अर्घ्य चढ़ाऊँ आप ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपशांतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ·।

श्री 'फाल्गुण' भगवान तुम, यम के अंतक सिद्ध ।
मृत्यु मल्ल को नाशने, अर्घ्य चढ़ाऊँ नित्य ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फाल्गुणजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··।

श्री 'पूर्वास' प्रभो तुम्हीं, पूरो सबकी आश ।
मुझे पूर्ण सुख दो अभी, अब ना करो निराश ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पूर्वासजिनेन्द्राय अर्घ्यं —।

श्री 'सौधर्म' जिनेंद्र को, नमन करूँ शतबार ।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भक्ति से, जो उतरूँ भवपार ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सौधर्मजिनेद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'गौरिक' जिनदेव की, भक्ति सर्वसुख देत ।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय मैं, शुक्ल ध्यान के हेत ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गौरिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

नाथ 'त्रिविक्रम' आप हैं, महापराक्रम शूर ।
मैं पूजूँ प्रभु आप को, करूँ कर्म चकचूर ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री त्रिविक्रमजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'नरसिंह' जिनेंद्र हैं, सभी जगत में श्रेष्ठ ।
पूजूँ भक्ती भाव से, हरूँ सकल भव क्लेश ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नरसिंहजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'मृगवसु' जिनराज तुम, भवभय से अतिदूर ।
भय भी भय खाकर गिरे, तुम भक्तों से दूर ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मृगवसुजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'सोमेश्वर' सौम्य छवि, निरख नेत्र हो धन्य ।
तुम पदपंकज पूज के, हुआ जन्म मुझ धन्य ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सोमेश्वरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

नाथ 'सुधासुर' आपको, सुरगण पूजें आय ।
मैं भी पूजूँ भक्ति से, कर्म कलंक पलाय ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुधासुरजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

घात किया सब घातिया, 'अपापमल्ल' है नाम ।
पूजूँ अर्घ्य उतार नित, पाऊँ अविचल धाम ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अपापमल्लजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'विबाध' जिनदेव तुम, अव्याबाध सुखेश ।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय नित, नहिं पाऊँ दुख लेश ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विबाधजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'संधिक' जिन आपको, पूजूँ भक्ति समेत ।
परकी संगति छोड़ के, करूँ सन्धि विच्छेद ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संधिकस्वामिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'मानधात्र' जिनराज को, अर्चूं बारंबार ।
मान लोभ को नाश के, भरूँ सौख्य भंडार ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मान्धात्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'अश्वतेज' तेजोनिधी, अनुपम सुख भंडार ।
आत्म ज्योति के हेतु मैं, पूजूं भक्ति अपार ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अश्वतेजोजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

'विद्याधर' जिनराज को, पूजूं भक्त सनाथ ।
सब विद्या के ईश तुम परमेश्वर पद प्राप्त ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विद्याधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

नाथ 'सुलोचन' आपको, पूजूं अर्घ्य चढ़ाय ।
ज्ञाननेत्र के हेतु ही, अतिशय भक्ति बढ़ाय ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुलोचनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

देव 'मौननिधि' को सदा, अर्चूं विविध प्रकार ।
दिव्यध्वनी के जनक तुम, तुम वच भवि हितकार ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मौननिधिजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'पुंडरीक' भगवान् के, चरण कमल का ध्यान ।
करूँ हृदय में नित्य ही, पाऊँ सौख्य निधान ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुण्डरीकजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'चित्रगण' मैं नमूं, अर्घ्य चढ़ाकर आज ।
विषय वासना दूर कर, पाऊँ समसुख साज ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चित्रगणजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'मणिरिन्द्र' जिनेंद्र को, वंदू मन वच काय ।
परमानंद अनूप तुम, पूजूं अर्घ्य चढ़ाय ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मणिरिन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

'सर्वकाल' तीर्थेश हैं, धर्म चक्र के ईश।
उनको पूजा नित करूँ, नित्य नमाऊँ शीश ॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सर्वकालजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'भूरिश्रवण' तुमको जजूँ, भूरि भूरि गुणगाय।
तुम भव भ्रमण मिटाय के, पहुँचे शिवपुर जाय ॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूरिश्रवणजिनेन्द्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'पुण्यांग' जिनेश हैं, पुण्यराशि अमलान।
पूजूं अर्घ्य चढ़ाय के, पाऊँ पद निर्वाण ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री पुण्यांगजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

पूर्णार्घ्य—गीता छन्द

संपूर्ण अतिशयगुण भरित, चौबीस तीर्थंकर कहे।
उनके चरण की वंदना, भववृंद के पातक दहे ॥
सब भूत प्रेत पिशाच व्यंतर, कष्ट दे सकते नहीं।
जिनने शरण प्रभु का लिया, वे दुःख क्या पाते कहीं ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री उपशांतादिपुण्यांगपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः।

जयमाला

चाल—हे दीनबन्धु ...

हे नाथ! आप ही तो सकल इंद्र वंद्य हैं।
इस भू पे अतः आपही तो धन्य धन्य हैं ॥
संपूर्ण अतिशयों के आप ही तो सद्म हैं।
इस हेतु सभी पूजते तुम पाद पद्म हैं ॥१॥

प्रभु आपके माहात्म्य से असमय में बगीचे ।
सब ऋतु के फूल फल से वे फूले फले दिखें ॥
रज आदि दूर करती सुखद वायु चले है ।
सब जीव वैर छोड़ के आपस में मिले हैं ॥२॥
दर्पण के सदृश भूमि स्वच्छ रत्नमय हुई ।
गंधोद की वर्षा भी मेघ देव कृत हुई ॥
शाल्यादि खेत भी फलों के भार से झुके ।
सब जीव भी आनंद से तो झूम ही उठे ॥३॥
शीतल पवन वायूकुमार देव चलाते ।
सरवर कुंआं भी स्वच्छ जल से पूर्ण हो जाते ॥
उल्कादि धूम रहित गगन स्वच्छ सही है ।
सब जीवों को रोगादि की बाधायें नहीं हैं ॥४॥
सर्वाण्हयक्ष शिर पे धर्म चक्र को धरें ।
चारों तरफ के चक्र दिव्य रश्मियाँ धरें ॥
शुभ श्रीविहार के समय तुम पाद के तले ।
सुरकृत सुगंधि युक्त भी सुवरण कमल खिलें ॥५॥
ये देव रचित तेरहों[1] अतिशय महान् हैं ।
जो आपके अनंत गुणों में प्रधान हैं ॥
कैवल्यज्ञान उदित हो जिस वृक्ष के नीचे ।
वो ही अशोक वृक्ष कहाता है तभी से ॥६॥
जो आपका आश्रय सदा लेते हैं भुवन में ।
उनके कहो क्यों शोक रहेगा कभी मन में ॥
इस हेतु से तुम पाद का आश्रय लिया मैंने ।
निज 'ज्ञानमती' हेतु ही विनती किया मैंने ॥७॥

---

१. तिलोयपण्णत्ति में देवकृत अतिशय तेरह ही माने हैं ।

दोहा

भक्तों के वत्सल तुम्हीं, करुणासिंधु जिनेश ।
करो पूर्ण यह याचना, फेर न मांगूं लेश ॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभूतकालीनचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महा पूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाण लक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निज संपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ३०

[चौबीसी नं० २९]

पश्चिमपुष्करार्धद्वीप ऐरावतक्षेत्र वर्तमान तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीता छन्द

पुष्कर अपर में उत्तरी दिश, क्षेत्र ऐरावत कहा ।
उस मध्य आरजखंड में, षट्काल परिवर्तन कहा ॥
तीर्थेश चक्री आदि चौथे काल में होते वहाँ ।
चौबीस जिनवर वर्तमानिक, को सदा पूजूँ यहाँ ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहिता भव भव वषट् सन्निधीकरणं ।

अथाष्टकं—नाराच छंद

शुक्लध्यान के समान स्वच्छ नीर लाइये ।
नाथ के पदारविंद धार को कराइये ॥
धर्मतीर्थनाथ की सदैव अर्चना करें ।
पूर्ण हों स्वतंत्र वे यहाँ पे जन्म ना धरें ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

स्वर्णकांति के समान पीतगंध लाइये ।
नाथ के पदारविंद अर्च सौख्य पाइये ॥धर्म०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

दुग्धफेन के समान श्वेत शालि लाइये ।
नाथ के पदाब्ज पास पुंज को रचाइये ॥धर्म०॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ।

कुंद मोगरा गुलाब पुष्प भाँति-भाँति के ।
नाथ पाद पूजते हि हो न वश्य काम के ॥धर्म०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं....।

लड्डुकादि मिष्ट खाद्य चित्त को लुभावते ।
भूख वेदना निमूल हेतु ही चढ़ावते ॥धर्म०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं....।

दीपज्योति सर्व अंधकार ना विनाशती ।
आप पूजते स्वचित्त ज्ञान लौ प्रकाशती ॥
धर्मतीर्थनाथ की सदैव अर्चना करें ।
पूर्ण हों स्वतन्त्र वे यहां पे जन्म ना धरें ॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ...।

धूप खेवते दशांग पाप भस्म हो रहे ।
आतमा विशुद्ध होय साम्य सौख्य को लहे ॥धर्म०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं....।

आम्र आदि सत्फलों को अर्पिये जिनेंद्र को ।
मोक्ष सौख्य प्राप्ति हेतु अर्चिये जिनेंद्र को ॥धर्म०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं....।

तीन लोक संपदा जिनेश भक्त को मिले ।
अर्घ्य को चढ़ावते निजात्म की कली खिले ॥धर्म०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं....।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांतीहेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हर सिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

समवसरण प्रभु आपका, दिव्य सभा का रूप ।
मध्य कमल आसन उपरि, राजें तिहुँजग भूप ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

रोला छन्द

श्री 'गांगेयक' देव, सोलह कारण भाके ।
तीर्थंकर पद पाय, बसे मोक्ष में जाके ॥
मैं पूजूँ धर प्रीति, कर्म कलंक नशाऊँ ।
पंचम गति को पाय, फेर न भव में आवूँ ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गांगेयकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ··।

'नल्लवासव' जिनराज, वासव शत तुम वंदे ।
अनुपम सुख की आश, धरके तुम अभिनंदे ॥मैं०॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नल्लवासवजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

श्रीमत् 'भीम' जिनेंद्र, भवभयभीत जनों को ।
आप एक आधार, अतः नमें जन तुमको ॥मैं०॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भीमजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'दयाधिक' आप, कर्म हनें निर्दय हो ।
भक्तों के प्रति आप, पूरणसदय हृदय हो ॥मैं०॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दयाधिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

श्री 'सुभद्र' जिनराज, भद्रजीव तुम पूजें ।
करें आत्म कल्याण, ऐसी युक्ती सूझे ॥मैं०॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुभद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

श्री 'स्वामी' का नित्य, जो जन आश्रय लेते ।
पाते शिवपथ शुद्ध, भवजल को जल देते ॥मैं०॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वामीजिनेंद्राय अर्घ्यं ···।

नाथ 'हनिक' ने घाति, कर्म हने शांती से ।
किया भुवन परकाश, अनुपम निजकांती से ॥
मैं पूजूं धर प्रीति, कर्म कलंक नशाऊँ ।
पंचम गति को पाय, फेर न भव में आवूँ ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री हनिकजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'नंदिघोष' का धर्मघोष जगत में व्यापा ।
भविजन हर्षित चित्त, पूजत हों निष्पापा ॥मैं०॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नन्दिघोषजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'रूपबीज' जिन आप, वचनामृत जो पीते ।
नष्ट करें भवबीज, मृत्युमल्ल भी जीते ॥मैं०॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री रूपबीजजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'वज्रनाभ' जिनदेव, तुम पदकी भक्ती से ।
पाऊँ ऐसी युक्ति, मुक्ति वरूँ शक्ती से ॥मैं०॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रनाभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'संतोष' जिनेश, तृष्णा नदी सुखाते ।
अतिशय निस्पृह चित्त, फिर भी मार्ग दिखाते ॥मैं०॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्रा संतोषजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'सुधर्म' महान, धर्मामृत की वर्षा ।
करते करुणावान, भवि को हर्षा हर्षा ॥मैं०॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुधर्मजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'फणीश्वर' आप, मोह सर्प विष हरते ।
जो पूजें तुम पाद, सब सुख संपति भरते ॥मैं०॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री फणीश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

'वीरचन्द्र' जिनचन्द्र, कर्म अरी के जेता ।
जो तुम आश्रय लेय, वे होते दुःख भेत्ता ॥मैं०॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीरचन्द्रजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'मेधानिक' नाथ, इंद्रिय सुख सब त्यागा ।
निज आतम में वास, करके शिव सुख साधा ॥मैं०॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मेधानिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'स्वच्छनाथ' जिनराज, पूर्ण विशुद्ध हुए हो ।
त्रिविध करम मल धोय, अनुपम शुद्ध हुये हो ॥मैं०॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वच्छनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'कोपक्षय' आप, क्रोधादिक क्षय करके ।
फिर भी जीता आप, कर्म अरी शमदम से ॥मैं०॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कोपक्षयजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

श्री 'अकाम' जिन आप, चरण कमल जो ध्यावें ।
कामदेव मद नाश, निज समरस सुख पावें ॥मैं०॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अकामजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'धर्मधाम' जिन नाम, जो नित मुख से बोलें ।
निज में लें विश्राम, वे संसार न डोलें ॥मैं०॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मधामजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'सूक्तिसेन' जिनदेव, द्वादश गण संबोधें ।
निज निज भाषा माहिं, सब जनमन प्रतिबोधें ॥मैं०॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूक्तिसेनजिनेन्द्राय अर्घ्यं....

'क्षेमंकर' जिननाथ, सब जग क्षेम करे हैं ।
सब जन पूजें आप, सर्व अनिष्ट हरे हैं ॥मैं०॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री क्षेमंकरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'दयानाथ' जिनदेव, अगणित गुणगण धारें ।
सुरनर मुनिगण आय, भक्ति स्तवन उचारें ॥मैं०॥२२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री दयानाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'कीर्तिप' प्रभु आप, कीर्ति लता जग व्यापी ।
जो गुण गावें नित्य, पावें यश अविनाशी ॥मैं०॥२३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री कीर्तिपजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'शुभंकर' आप, सर्व अशुभ परिहारी ।
करके शुभ तत्काल, हरो अमंगल भारी ॥
मैं पूजूँ धर प्रीति, कर्म कलंक नशाऊँ ।
पंचम गति को पाय, फेर न भव में आऊँ ॥२४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शुभंकरजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्यं—दोहा

पूजूँ अर्घ्य चढ़ाय के, प्रभु तुम हो निर्दोष ।
जन तुम भक्ति प्रभाव से, व्रत करते निर्दोष ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गांगेयकादिशुभंकरपर्यंतचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

कुसुमलता छन्द

जय जय तीर्थंकर इस जग में, अभयंकर क्षेमंकर नाथ ।
जय जय जिनवर मुक्ति वधूवर, त्रिभुवनजन को किया सनाथ ॥
समवसरण में अद्भुत वैभव, हुआ आपका जो भगवान् ।
वैसा अब तक किसी अन्य को, नहीं मिला है विभव महान् ॥१॥
मरकत पद्मरागमणियों के, पत्ते फूल अमल अभिराम ।
ऐसा तरु अशोक है हरता, भव्य जनों का शोक तमाम ॥
मुक्ताफल लटके हैं जिनमें, तीनछत्र शशि बिंब समान ।
प्रभु के तीन लोक की प्रभुता, सूचित करते महिमावान ॥२॥
नाना रत्न जटित सिंहासन, मणिस्फटिक विनिर्मित जान ।
उस पर आप अधर चतुरंगुल, राजें कमलापति भगवान ॥

गाढ़ भक्तियुत अंजलि जोड़े, विकसित मुख सब गण के जीव ।
चारों तरफ घेरकर प्रभु को, बैठे हैं जिन भक्ति अतीव ॥३॥
दुंदुभि बाजे बजें उच्च ध्वनि, मानों कहते झट आवो ।
विषय कषायों को छोड़ो अब, प्रभु की चरण शरण आवो ॥
गुंजे भ्रमर जिन्हों पे सुरतरु, के सुमनों की हो वर्षा ।
डंठल नीचे कर ऊरध मुख, खिले कुसुम जनमन हर्षा ॥४॥
सूर्य करोड़ों की द्युति लज्जित करता तुम भामंडल नाथ ।
जिसके दर्शन से भाक्तिकगण, उसमें देखें निज भव सात ॥
कुँद पुष्पसम श्वेत मनोहर चौंसठ चामर ढुरें सदैव ।
जो तुमको नमते ऊरधगति, पाते मानों कहें अतीव ॥५॥
प्रातिहार्य ये आठ आपकी, बाहर लक्ष्मी करें बखान ।
अंतर लक्ष्मी जैसी तुम में, वैसी ही तुम में भगवान ॥
नहिं ऐसा कोई इस जग में, जिससे उपमा हो तुम आन ।
प्रभो स्वयं उपमेय आप ही, और आप ही हैं उपमान ॥६॥

दोहा

आप विभव जो वर्णते, वे हों विभव सनाथ ।
'ज्ञानमती' सुखसंपदा, मिले उन्हें निज हाथ ॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थवर्तमानकालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ··· ।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिन नाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक भरें ।
निर्वाणलक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निज संपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

पूजा नं० ३१
[चौबीसी नं० ३०]

पश्चिम पुष्करार्ध ऐरावतक्षेत्र भविष्यत्कालीन तीर्थंकर पूजा

अथ स्थापना—गीता छन्द

पश्चिम सु पुष्कर द्वीपके, उत्तर दिशा में जानिये ।
शुभ क्षेत्र ऐरावत वहाँ पर कर्म भूमी मानिये ॥
होंगे वहाँ तीर्थेश भावी आज उनकी अर्चना ।
मैं करूँ इत आह्वान करके, मोह की कर वंचना ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं ।

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकर समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधी-करणं ।

अथाष्टकं—वसंततिलका छन्द

क्षीरोदधी जल लिया भर स्वर्ण झारी ।
पूजूँ पदाब्ज प्रभु के अति सौख्यकारी ॥
आगामि तीर्थंकर चौबिस को जजूँ मैं ।
स्वात्मैक जन्य परमामृत को भजूँ मैं ॥१॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतु-र्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं ....।

सौगंध्य गंध घनसार विमिश्र कीजे ।
पादाब्ज अर्च प्रभु के सुख शांति लीजे ॥आगामि०॥२॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसंबंधिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीनचतु-र्विंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं ¨ ।

मोती समान सित तंदुल धोय लेऊँ।
पादाब्ज अग्र बहु पुंज चढ़ाय देऊँ ॥आगामि०॥३॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं....।

मंदार कुंद अरविंद सु पुष्प लाऊँ।
पूजूँ पदाब्ज भव बाधा को मिटाऊँ ॥आगामि०॥४॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ....।

पूरी सुहाल बरफी भर थाल लाऊँ।
अत्यंत तृप्ति कर नाथ तुम्हें चढ़ाऊँ ॥आगामि०॥५॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं....।

कर्पूर ज्योति द्युति को करती निशा में।
पूजूं तुम्हें प्रगट हो निज की दशा में ॥आगामि०॥६॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ..।

खेऊँ सुगंध दश गंध सुअग्नि संगी।
आत्मा पवित्र करलूँ निज भक्ति संगी ॥आगामि०॥७॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं....।

अंगूर आम पनसादिक सत्फलों से।
पूजें पदाब्ज फल ईप्सित हों उन्हों के ॥आगामि०॥८॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं....।

अपूँ अनर्घ्य पद हेतुक अर्घ्य को मैं।
पाऊँ निजात्मधन सौख्य महान को मैं ॥आगामि०॥९॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ।

सोरठा

तीर्थंकर परमेश, तिहुँजग शांती कर सदा ।
चउसंघ शांती हेत, शांतीधारा मैं करूँ ॥१०॥

शांतये शांतिधारा ।

हरसिंगार प्रसून, सुरभित करते दश दिशा ।
तीर्थंकर पद पद्म, पुष्पांजलि अर्पण करूँ ॥११॥

दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

कोटि सूर्य शशि से अधिक, तुम प्रभु ज्योतिर्मान ।
पुष्पांजलि कर पूजहूँ, करिये द्योतित ज्ञान ॥१॥

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

नरेंद्र छन्द

नाथ 'अदोषिक' क्षुधा तृषादिक, अठरह दोष नशाते ।
उनके वचनामृत जो पीते, अजर अमर हो जाते ॥
तीर्थंकर के चरण कमल में, जो भवि शीश नमाते ।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, आनन्द मगल पाते ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अदोषिकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'वृषभदेव' के वचन सुधारस, भव की दाह मिटाते ।
जो उनको शिर पर धर लेते, त्रिभुवन तिलक कहाते ॥ती०।२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभदेवजिनेन्द्राय अर्घ्यं ...।

'विनयानंद' आप निश्चित ही, सबके हित उपदेष्टा ।
विजन को कृतकृत्य बनाके, करते त्रिभुवन वेत्ता ॥ती०।३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विनयानंदजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'मुनि भारत' सर्वगुणों से, पूर्ण दोष विरहित हो ।
इसीलिये शतइंद्रों वंदित, प्रभु त्रैलोक्य महित हो ।।ती०।४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिभारतजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'इंद्रक' जिन आप कथा भी, जन को पावन करती ।
बोधि समाधि की खानी है, पुण्य तिजोरी भरती ।।ती०।५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री इन्द्रकजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'चंद्रकेतु' प्रभु सब त्रिभुवन में, ज्ञान उजेला करते ।
जो तुम भक्ती से विहीन हैं, वे दुख झेला करते ।।ती०।६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चंद्रकेतुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

'ध्वजादित्य' जिन आप विश्व में, नित्य उदित ही रहते ।
राहुग्रह तुमको नहिं ग्रसता, मेघ नहीं ढक सकते ।।ती०।७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ध्वजादित्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री 'वसुबोध' मेघ लोकोत्तर, अमृत जल बरसाते ।
जो उसमें अवगाहन करते, पूर्ण तृप्त हो जाते ।।ती०।८।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वसुबोधजिनेन्द्राय अर्घ्यं—।

नाथ 'मुक्तिगत' आप नित्य ही, मुक्तिरमा के प्यारे ।
अवधि मनःपर्ययज्ञानी भी, तुम गुण वरणत हारे ।।ती०।९।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुक्तिगतजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

'धर्मबोध' प्रभु ज्ञान आपका, क्रम इंद्रिय से विरहित ।
युगपत त्रिभुवन की सब वस्तू जाने, नित्य अपरिमित ।।ती०।१०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री धर्मबोधजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'देवांग' सुमेरु सदृश ही, अचल आप अपने में ।
सुर ललनायें तुम्हें चलित नहिं, कर सकतीं सपने में ।।ती०।११।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवांगजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'मारीचिक' तीर्थंकर की, भक्ती गंगा में ही ।
नित स्नान किया करते जो, निर्मल होते वे ही ।।ती०।१२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मारीचिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'सुजीवन' के वचनामृत जो कानों से पीते ।
गर्भ अवस्था की दुरवस्था, के दुख को भी जीतें ॥
तीर्थंकर के चरण कमल में, जो भवि शीश नमाते ।
सर्व अमंगल दूर भगाकर, आनंद मंगल पाते ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुजीवनजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

नाथ 'यशोधर' के गुण गाकर, उसमें ही रम जाते ।
इस जग में वे नित्य महोत्सव, आनंदित सुख पाते ॥ती०।१४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री यशोधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'गौतम' जिनराज आपका, नाम मात्र जो पाते ।
नित्य निगोद इतर निगोद के, दुःखों से छुट जाते ॥ती०।१५।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री गौतमजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'मुनिशुद्धि' जिनेश्वर भक्ती, भव भव दुख हरणी है ।
भव सागर से तरने हेतू, वही एक तरणी है ॥ती०।१६।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री मुनिशुद्धिजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

नाथ 'प्रबोधिक' तुम प्रभाव से, मुनी ज्ञान धन धरते ।
द्वादशांग मय द्रव्य भावश्रुत, का अवगाहन करते ॥ती०।१७।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री प्रबोधिकजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'सदानीक' जिन आप मोह की, सेना मार भगाई ।
नाम मंत्र भी प्रभो आपका, भविजन को सुखदाई ॥ती०।१८।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सदानीकजिनेंद्राय अर्घ्यं ..।

श्री 'चारित्रनाथ' पद पंकज, का जो आश्रय लेते ।
पंचम यथाख्यात चारित को, वे निश्चित पा लेते ॥ती०।१९।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चारित्रनाथजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

'शतानंद' प्रभु तुम पूजक ही, सज्जाती को पाते ।
सद्गृहस्थ बन देश चरित धर, क्रमशः शिवपद पाते ॥ती०।२०।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री शतानंदजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

श्री 'वेदार्थ' जिनेश्वर प्रभु की, जो आराधन करते ।
दीक्षा जैनेश्वरी प्राप्तकर, सुरपति का पद धरते ॥ती०।२१।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वेदार्थजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

'सुधानीक' प्रभु तुम भक्ती ही, चक्रवर्ति पद देती ।
छह खंडों की प्रभुता देकर, सुख संपति भर देती ॥ती०।२२।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुधानीकजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री 'ज्योतिर्मुख' आप ज्योति का, कण भी यदि मिल जावे।
तो निश्चित ही तुम भाक्तिक जन, अर्हत्पदवी पावें ॥ती०।२३।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ज्योतिर्मुखजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री 'सुरार्ध' जिन आप चरण रज, जो मस्तक पर धरते ।
वे निर्वाण परम लक्ष्मी पा, मोक्ष महल पग धरते ॥ती०।२४।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुरार्धजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

पूर्णार्घ्यं - त्रिभंगी छन्द

तुम भक्ति अकेली, मुक्ति सहेली, समसुखमेली जो करते ।
निज कर्मबंध अघ, खंड खंड तब, पुण्य पुंज सब वे भरते ॥
जल आदिक लाके, अर्घ्य चढ़ाके, तुम गुण गाके मैं ध्याऊँ ।
जिनवर गुण संपति, आत्मिक संगति, त्रिभुवन वंदित मैं पाऊँ ॥२५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अदोषिकादिसुरार्धनाथपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

जाप्य—ॐ ह्रीं त्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमः ।

जयमाला

पंच चामर छन्द

जयो जिनेंद्र आप ही अनंतज्ञान धारते ।
समस्त लोक औ अलोक एक साथ जानते ॥

जयो जिनेंद्र आप ही अनंत दर्शवान हैं।
सु एक साथ सर्व विश्व देखते महान हैं ॥१॥

जयो जिनेंद्र आप ही अनंत सौख्य भोगते।
समस्त काल तक सुखी अतः पुनः न लौटते ॥

जयो जिनेंद्र आप ही अनंत वीर्यवान हैं।
अनंत वस्तु देखते तभी भि ना थकान है ॥२॥

प्रभो क्षुधा तृषा जनम जरा मरण न खेद है।
न आर्त स्वेद रोग शोक मोह राग द्वेष है ॥

न आश्चर्य मद न भीति नींद चिंत ना तुम्हें।
अठारहों भि दोष से विमुक्त हो नमूं तुम्हें ॥३॥

प्रभो छियालिस गुणों समेत अरिहंत हो।
सु पंच कल्याणकों सनाथ मुक्ति कंत हो ॥
सु आप श्री विहार से पचास[1] वर्ष तक वहाँ।
अकाल वा उपद्रवादि लेश भी न हों वहाँ ॥४॥

समोसरण में आपके किसी के जन्म मृत्यु ना।
न रोग शोक क्लेश ताप वैर भाव रंच ना ॥
सु बारहों सभा के जीव आपकी ध्वनी सुनें।
विषय कषाय से विरक्त स्वात्म तत्त्व को गुनें ॥५॥

जिनेश आप भक्ति से अनेक पार हो गये।
मुझे करो भवाब्धि पार आ गया इसीलिये ॥
विलंब नाथ ! ना करो समस्त दोष को हरो।
स्वयं का भक्त जान के दया करो दया करो ॥६॥

---

१. हरिवश पुराण पर्व ५९ पेज ७०३।

घत्ता

जय जय भवजित तुम, किंचित गुणसुम, भक्तिसूत्र में गूंथी है ।
जो 'ज्ञानमती' युत, कंठ धरें नित, शिव लक्ष्मी वश होती है ॥

ॐ ह्रीं पश्चिमपुष्करार्धद्वीपसम्बन्धिऐरावतक्षेत्रस्थभविष्यत्कालीन-चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महापूजा महोत्सव को करें ।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें ॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें ।
निर्वाणलक्ष्मी "ज्ञानमति" युत पाय निजसंपति वरें ॥

इत्याशीर्वादः ।

卐◆◆卐

समुच्चय जयमाला

चाल (हे दीन ···)

जै जै प्रभो ! तुम सिद्धि अंगना के कांत हो ।
जै जै प्रभो ! आर्हन्त्य रमा के भी कांत हो ॥
हे नाथ ! आपकी सभा अनुपम विशाल है ।
उसके लिये इस जग में न कोई मिशाल है ॥१॥
पृथ्वी से पांच सहस धनुष उपरि गगन में ।
प्रभु आपका समोसरण है मात्र अधर में ॥
सोपान पंक्ति बीस सहस श्रेष्ठ मणिमयी ।
बस एक मूहूरत में सभी चढ़ते हैं सही ॥२॥

बहु रत्नमयी धूलिसाल कोट प्रथम है।
उसमें हैं चार द्वार नाम विजय आदि हैं॥
चारों दिशा में चार मानस्तंभ बताये।
जो कोस अड़तालीस तक भी दर्श कराये॥३॥

है चैत्यभवन भूमि रम्य द्रह वनादि से।
जिन बिंबनिलय से पवित्र तुम प्रसाद से॥
आगे है रम्यखातिका जो स्वच्छ जल भरी।
फूले कमल से हंस आदि रव से चित हरी॥४॥

है तीसरी लतावनी बकुलादि कुसुम से।
बल्ली के मंडपों से रम्य व्याप्त सुरभि से॥
उद्यानभूमि चौथि चार दिश में चार वन।
अशोक सप्तछद तथा चंपक व आम्रवन॥५॥

इनमें है चैत्यवृक्ष जैन बिंब को धरें।
मुनिगण भी जिनकी वंदना बहुभक्ति से करें॥
आगे है ध्वजाभूमि जो अगणित ध्वजा धरे।
हंसादि चिन्ह दश तरह से युत ध्वजा धरें॥६॥

दशविध सुकल्पतरु से कल्पवृक्ष भू कही।
सिद्धार्थ वृक्ष सिद्ध बिंब युक्त धर रही॥
इनकी जो वंदना करें त्रिकाल भक्ति से।
वे सर्वसिद्धि प्राप्त करें स्वात्म शक्ति से॥७॥

आगे की भूमि में कहीं महलों की पंक्तियां।
जिन भक्ति नृत्य आदि करें देव देवियां॥
भू आठवीं जो बारहों कोठों को है धरे।
मणिस्फटिक की भित्ति से विभक्त गण धरे॥८॥

कोठे प्रथम में श्रीगणेश साधुगण रहें।
क्रम से है कल्पवासिनी देवी वहां रहे॥

है तीसरे में आर्यिका औ श्राविका घनी ।
फिर ज्योतिषी औ व्यंतरी व भवनवासिनी ॥९॥
फिर व्यंतरों ज्योतिष्क भवनवासि के कोठे ।
आगे हैं कल्पवासि मनुष औ पशू कोठे ॥
द्वादश गणों के जीव ये चारों तरफ घिरे ।
जिनदेव की वाणी सुने सम्यकत्वगुण धरें ॥१०॥
आगे की प्रथम पीठ पे यक्षेन्द्र खड़े हैं ।
चउदिश में यक्ष धर्म चक्र शिर पे धरे हैं ॥
हैं पीठ दूसरी पे चिन्ह युक्त ध्वजायें ।
तृतीय पीठ को भी रत्नरचित बतायें ॥११॥
इसके उपरि है गंधकुटी नाथ की बनी ।
जिस पर हैं चमर आदि व बजती हैं किंकणी ॥
मणिस्फटिक से बना रत्नजटित सिंहासन ।
जो गंध कुटी मध्य में है कमल इवासन ॥१२॥
इस पे जिनेंद्र चार अंगुल अधर राजते ।
त्रैलोक्यनाथ अतुल विभवयुत विराजते ॥
चौंतीस अतिशयों व आठ प्रातिहार्य से ।
आनन्त्य चतुष्टय सहित अनुपम विभासते ॥१३॥
ये ग्यारहों हि भूमियां अद्भुत निकेत हैं ।
इन मध्य मध्य कोट त्रय व पांच वेदि हैं ॥
सब रत्न की रचना वहां नवनिधि भरी पड़ीं ।
गोपुर व द्वार नाट्यशालायें बड़ी बड़ीं ॥१४॥
प्रेक्षा सदन अभिषेक सदनआदि वहां पे ।
मंडप सभागृहादि भी श्रुत केवलि ताके ॥
वापी सरोवरों में वहाँ फूल खिले हैं ।
वापी में कर स्नान सात भव भी दिखे हैं ॥१५॥

कोठों का लघू क्षेत्र तो भी जिन प्रभाव से ।
प्राणी असंख्य बैठते निर्वैर भाव से ॥
आतंक रोग भूख प्यास आदि ना वहां ।
मिथ्यात्वि असंज्ञी अभव्य शूद्र ना वहां ॥१६॥
अंधे भी वहां देखते गूँगे भी बोलते ।
लंगड़े चढ़े सब सीढ़ियाँ, बहिरे भी हैं सुनते ॥
विष भी वहां निर्विष बने सब शोक टले हैं ।
सब जात विरोधी वहां आपस में मिले हैं ॥१७॥
स्तूप बनें तीनलोक आदि के वहां ।
जो सर्व सृष्टि रूप धरें शोभते वहां ॥
बहु धूपघड़ों में सभी सुधूप खे रहे ।
निज कर्म धूप को उड़ा आनंद ले रहे ॥१८॥
इत्यादि विभव है अपूर्व कौन कह सके ।
गणधरगुरू सुरगुरु भी नहिं पार पा सके ॥
जो एक बार समोसरण में चले गये ।
वे भव्य मोक्ष पथिकों की कोटी में आ गये ॥१९॥
जो भक्त एक बार भी तुम अर्चना करें ।
निश्चित वे कर्म प्रकृतियों की खंडना करें ॥
फिर वे कभी यमराज के चंगुल में ना पड़ें ।
हो पूर्ण 'ज्ञानमती' मोक्ष महल में चढ़ें ॥२०॥

दोहा

सर्व सात सौ बीस जिन, पंचकल्याणक ईश ।
हो कल्याणक कल्पतरु, नमूँ नमूँ नत शीश ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं सार्धद्वयद्वीपसम्बन्धिपंचभरतपंचैरावतक्षेत्रस्थत्रिंशच्चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।

शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो तीस चौबीसी महा पूजा महोत्सव को करें।
वर पंचकल्याणक अधिप जिननाथ के गुण उच्चरें॥
वे पंचपरिवर्तन मिटाकर पंचकल्याणक धरें।
निर्वाण लक्ष्मी 'ज्ञानमति' युत पाय निज संपति वरें॥

इत्याशीर्वादः।

अन्त्यमंगल

शंभु छंद

ये भरत और ऐरावत हैं, बस ढाईद्वीप तक पंच पंच।
इन मध्य आर्यखण्डों में ही, षट्काल परावर्तन प्रपंच॥
चौथे युग में चौबिस चौबिस तीर्थंकर होते रहते हैं।
चौबीसी तीस भूत संप्रति भावी से मुनिवर कहते हैं॥१॥
ऐसे अनंत चौबीसी भी हो गईं अतीत काल में जो।
होंगी अनंत चौबीसी भी आगे के भाविकाल में जो॥
तीसों चौबीसी का पूजन करके उनको शत वंदन है।
संपूर्ण अनंतानंत रूप चौबीसी को भी वंदन है॥२॥
संपूर्ण विदेहों में जितने तीर्थेश हुये औ होवेंगे।
हैं वर्तमान में भी जितने निजकर्मकालिमा धोवेंगे॥
जो पंचकल्याणकयुत अथवा दो तीन कल्याणक पाते हैं।
उन सब तीर्थंकर को नित प्रति, हम झुक-२ शीश नवाते हैं॥३॥
जो भव्य तीस चौबीसी की हर्षित हो पूजन करते हैं।
वे सर्व असाता को हरके, निजसुखमय साता भरते हैं॥
बहुविध सुख अनुभव कर इनकी, कोटी में भी आ सकते हैं।
फिर शाश्वत सुख को पाकर के, अपने में ही नित रमते हैं॥४॥

दोहा

भूत भविष्यत संप्रती, तीर्थंकर सुविधान।
करो भव्यजन भक्ति से, 'ज्ञानमती' सुखदान॥५॥

पुष्पांजलिः।

अथ प्रशस्ति

गीता छंद

सन्मति प्रभू को नित नमूँ शासन जिन्हों का आज है ।
संपूर्ण विघ्नों का प्रणाशन ही जिन्हों का काज है ॥
उन धर्म संतति में हुये श्री कुंदकुंदाचार्य हैं ।
जो हम सभी जन के लिए बस एक ही आधार है ॥१॥

श्री कुंदकुंदाम्नाय में शुभ गच्छ सरस्वति मान्य है ।
उनमें प्रसिद्धी प्राप्त गण सु बलात्कार प्रधान है ॥
उस संतती माला के मणि श्री शांति सागर सूरिवर ।
उन पट्ट के आचार्य गुरुवर वीरसागर धुर्यधर ॥२॥

उनसे लिये व्रत आर्यिका के 'ज्ञानमति' मैं हो गई ।
जिन शास्त्र के स्वाध्याय से विद्या निधी कुछ मिल गई ॥
श्री देशभूषण सूरि मेरे प्रथम गुरु विख्यात हैं ।
श्रुत की कृपा से ज्ञानधन कुछ आज मेरे पास है ॥३॥

तीर्थंकरों की परमभक्ती प्रेरती मुझ को रही ।
श्री तीस चौबीसी विधान रचा गया जिससे सही ॥
श्री वीर संवत् त्रय अधिक पच्चीस सौवें वर्ष में ।
कार्तिक अमावस्या तिथी निर्वाण उत्सव पर्व में ॥४॥

श्री हस्तिनापुर क्षेत्र में पूरण विधान हुआ सही ।
जो स्वपर के हित हेतु अतिशय पुण्यकर महिमामयी ॥
यावत् रहे जिनधर्म जग में, भव्यजन हित साधता ।
तावत् रहें सुविधान यह, भविसौख्यदायी सासता ॥५॥

श्री तीस चौबीसी विधान समाप्त

卐◆◆卐

विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान

(लघु)

विद्यमान बीस तीर्थंकर पूजा

स्थापना—गीता छंद

सीमंधरादिक बीस तीर्थंकर विदेहों में रहें।
जिनकी सभा में आज भी भविवृंद निजकल्मष दहें॥
उन विद्यमान जिनेश की मैं नित करूं आराधना।
पूजन करूं अतिभक्ति से निजतत्त्व को ही साधना॥१॥

ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रस्थसीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रस्थसीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं विदेहक्षेत्रस्थसीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरसमूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथाष्टकं—स्रग्विणी छंद

पद्मद्रह का सलिल गंधवासित लिया।
नाथ चरणाब्ज में तीन धारा किया॥
बीस तीर्थंकरों की करूं अर्चना।
हो प्रभू भक्ति से मोह की वंचना॥१॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो जलं....।

गंध कर्पूर चंदन घिसा के लिया।
आप पादाब्ज में चर्च के अर्चिया॥बीस०॥२॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो चंदनं....।

कौमदी धौत तंदुल लिये थाल में ।
आप पादाग्र में पुंज को धार मैं ॥
बीस तीर्थंकरों की करूं अर्चना ।
हो प्रभू भक्ति से मोह की वंचना ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अक्षतं ··· ।

मौलसिरि मालती पुष्प ताजे लिये ।
कामशर के जयी आपको अर्पिये ॥बीस०॥४॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो पुष्पं ····।

पूड़ियाँ लड्डुकादी भरे थाल में ।
पूजते भूख व्याधी नशे हाल में ॥बीस०॥५॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो नैवेद्यं ···।

ज्योति कर्पूर की ध्वांतहर जगमगे ।
दीप से अर्चते ज्ञान ज्योती जगे ॥बीस०॥६॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो दीपं ····।

धूप दशगंध खेऊं सदा अग्नि में ।
कर्म संपूर्ण हों भस्म तुम भक्ति में ॥बीस०॥७॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो धूपं ।

आम अंगूर नींबू बिजौरा लिया ।
मोक्षफलहेतु प्रभु आपको अर्पिया ॥बीस०॥८॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो फलं ···।

अर्घ्य में रत्न सुंदर मिले हैं भले ।
पूजते आपको स्वात्म निधियां मिले ॥बीस०॥९॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं ····।

शांतिधारा करूं नाथ पादाब्ज में ।
शांति आत्यंतिकी शीघ्र हो नाथ में ॥१०॥
शांतये शांतिधारा ।

कुंद कल्हार जूही चमेली खिले ।
पुष्प अंजलि करूं सौख्य संपत मिले ॥११॥
दिव्य पुष्पांजलिः ।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

इक सौ साठ विदेह के शाश्वत बीस जिनेश ।
पुष्पांजलि करके जजूँ मिटे सकल भव क्लेश ॥

इति मंडलस्योपरि विंशतिदलकमलमध्ये पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

शंभु छंद

श्री मेरु सुदर्शन के पूरब विदेह सीता के उत्तर तट ।
है पुंडरीकिणी पुरी पिता श्रेयांस सती माता विश्रुत ॥
वृष चिह्न सहित श्री 'सीमंधर' भगवान् अभी भी राजे हैं ।
मैं उनको अर्घ्य चढ़ा करके पूजूँ आतम सुख भासे हैं ॥१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सीमंधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री मेरु सुदर्शन के पूरब विदेह सीता नदि दक्षिण में ।
दृढ़रथ पितु मात सुतारा से, जन्में प्रभु विजया नगरी में ॥
गज चिह्न धरें श्री 'युगमंधर' तीर्थंकर समवसरण में हैं ।
हम पूजें बहुविध भक्ति लिये, सब के ही लिये शरण वे हैं ॥२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री युगमंधरजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री जंबूद्वीप अपर विदेह, सीतोदानदि के दक्षिण में ।
श्री पुरी सुसीमा के राजा उन रानी से भगवन जन्में ॥
मृगचिह्न सहित 'श्रीबाहु' आप विहरण कर भविजन हरषाते ।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके प्रभु धर्मामृत तुम बरसाते ॥३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री बाहुजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

श्री जंबूद्वीप अपर विदेह, सीतोदा नदि के उत्तर में ।
हैं पुरी अयोध्या के नरपति उनकी रानी से प्रभु जन्में ॥
तीर्थेश 'सुबाहू' शतइंद्रों वंदित कपिचिह्न सहित राजें ।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, सब रोग शोक दारिद भाजें ॥४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सुबाहुजिनेंद्राय अर्घ्यं....।

धातकीखंड पूरबविदेह सीतानदि के उत्तर तट पे।
अलकापुरि में पितु देवसेन, प्रभु हुये देवसेना मां से ॥
रविचिन्ह सहित श्री 'संजातक' तीर्थंकर विहरण करते हैं।
उनको हम पूजें भक्ती से वे सबके पातक हरते हैं ॥५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री संजातकजिनेन्द्राय अर्घ्यं ·'

श्री विजयमेरु पूरबविदेह सीता नदि के दक्षिण तट में।
विजयानगरी पितु मित्रभूति जननी सुमंगला से जनमें ॥
शशिचिन्ह धरें जग उद्योती तीर्थेश 'स्वयंप्रभ' शिवभर्ता।
वे गणधर मुनिगण से वंदित, उनका अर्चन भव दुखहर्ता ॥६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री स्वयंप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ···।

धातकीद्वीप पश्चिमविदेह, सीतोदा के दक्षिण जानो।
है पुरी सुसीमा नृपकीर्ति पितु, मात वीरसेना मानो ॥
है सिंहचिन्ह श्री 'ऋषभानन' तीर्थंकर अनुपम सुखधारी।
निज परमानंद सौख्य हेतू मैं, पूजूँ त्रिभुवनगुण धारी ॥७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ऋषभाननजिनेन्द्राय अर्घ्यं ····।

श्री विजयमेरु पश्चिमविदेह, सीतोदा के उत्तर तट में।
है नगरि अयोध्या पिता मेघरथ, प्रसू सुमंगला से जन्मे ॥
तीर्थेश 'अनन्तवीर्य' भगवन् गज चिन्ह सहित केवलज्ञानी।
जो पूजें ध्वावें गुण गावें, वे होवें धर्म शुक्लध्यानी ॥८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अनंतवीर्यजिनेंद्राय अर्घ्यं ·।

धातकी खंड में अचलमेरु, पूरब विदेह सीता उत्तर।
विजया नगरी में नागराज पितु माता भद्रा लोकोत्तर ॥
रवि चिन्ह धरें प्रभु 'सूरिप्रभ' त्रिभुवन भर में उद्योत करें।
निज आत्म रसास्वादी साधू, वंदें हम भी जयघोष करें ॥९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सूरिप्रभजिनेंद्राय अर्घ्यं ····।

पश्चिम धातकि में अचलमेरु पूरब विदेह नदि के दक्षिण ।
पुरिपुंडरीकिणी पिता विजय, माता विजया उत्तम लक्षण ॥
शशि चिन्ह धरें भवतम हरते, तीर्थेश 'विशालकीर्ति' मानें ।
सुर किन्नर गण स्तुति करते, उन प्रभु की हम पूजा ठानें ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री विशालकीर्तिजिनेन्द्राय अर्घ्यं....।

श्री अचल मेरु पश्चिमविदेह, सीतोदा के दक्षिण तट में ।
है पुरी सुसीमा पिता पद्मरथ सरस्वती मां से जन्में ॥
है चिन्ह शंख प्रभुलोकोत्तम, तीर्थेश 'वज्रधर' कहलाते ।
परमाल्हादक सुख के भोक्ता, तुम पूजन कर हम गुण गाते ॥११॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वज्रधरजिनेंद्राय अर्घ्यं ...।

श्री अचलमेरु पश्चिम विदेह सीतोदा नदि के उत्तर में ।
वर पुंडरीकिणी नगरी के, नृप की रानी से प्रभु जनमें ॥
तुम वृषभ चिह्न हे 'चंद्रानन' ! मेरा मन कुमुद खिला दीजे ।
मैं भक्ती से तुम पद पूजूँ, मेरा निज राज्य दिला दीजे ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चंद्राननजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

पूरब पुष्कर पूरब विदेह सीतानदि के उत्तर तट में ।
पितु देवनंदि रेणुका मात, जनमें प्रभु नगरि विनीता में ॥
तुम पद्मचिन्ह हे 'चंद्रबाहु' ! मैं तुम चरणांबुज को ध्याऊं ।
जब तक नहिं मुक्ति मिले प्रभु जी, तुम चरणों में ही रम जाऊं ॥१३॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री चंद्रबाहुजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पूरब पुष्कर पूरब विदेह सीतानदि के दक्षिण दिश में ।
विजयानगरी में पिता महाबल माता जिनमति से जन्में ॥
तुम चंद्रचिन्ह हे जनवत्सल ! तीर्थेश 'भुजंगम' दया करो ।
मैं सम्यग् रत्नत्रय बल से निजको पालूं यह कृपा करो ॥१४॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भुजंगमजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

मंदरमेरु पश्चिम विदेह सीतोदा नदि के दक्षिण पे।
है नगरि सुसीमा मां ज्वाला गलसेन पिता पावन तुम से ॥
तुम चिन्ह सूर्य हे 'ईश्वर' जिन ! भविजन मन कमल खिलाते हो।
मैं पूजूं आप मुमुक्षु को, मुक्ती से शीघ्र मिलाते हो ॥१५॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री ईश्वरजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

मंदर मेरू पश्चिम विदेह सीतोदा नदि के उत्तर में।
हैं नगरि अयोध्या के स्वामी उनकी रानी से प्रभु जन्में ॥
वृष लांछन युत हे 'नेमीप्रभ' ! सद्धर्म ध्वजा को फहराते।
जो तुमको वंदन करते हैं, वे आतम सौरभ लहराते ॥१६॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री नेमीप्रभजिनेन्द्राय अर्घ्यं ।

पश्चिम पुष्कर पूरब विदेह, सीता नदि के उत्तर जानो।
पुरि पुंडरीकिणी भानुमती माता भूपाल पिता मानो ॥
ऐरावत चिन्ह कहा श्रीमन्, जिन 'वीरसेन' त्रिभुवन वंदित।
मैं पूजूं भक्ति बढ़ा करके, तुम भाक्तिक हों गुणमणि मंडित ॥१७॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री वीरसेनजिनेंद्राय अर्घ्यं ।

विद्युन्माली मेरू पूरब, सुविदेह नदी के दक्षिण में।
विजया नगरी पति देवराज हैं जनक उमामाता सच में ॥
शशि चिन्ह सहित हे 'महाभद्र' ! तुम शरणागत के रक्षक हो।
मैं पूजूं स्वातम निधि हेतू, तुम धर्म चक्र के वर्तक हो ॥१८॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री महाभद्रजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

पश्चिम पुष्कर पश्चिम विदेह, सीतोदा के दक्षिण दिश में।
श्रीभूति पिता गंगादेवी मां नगरि सुसीमा में जनमें ॥
तुम स्वस्तिक चिन्ह 'देवयशजिन' तुम घाति चतुष्टय के घाती।
मैं पूजूं श्रद्धा से तुममें, सु अनंत चतुष्टय अविनाशी ॥१९॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री देवयशोजिनेंद्राय अर्घ्यं ....।

विद्युन्माली मेरु पश्चिम, सुविदेह नदी के उत्तर में।
पितु श्री सुबोध हैं प्रसू कनकमाला सुअयोध्या[1] नगरी में ॥
प्रभु 'अजितवीर्य' तुम कमल चिह्न भविजन भव दाह शमन करते।
मैं पूजूं भक्ती से नितप्रति मेरे भवक्लेश न क्यों हरते ॥२०॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री अजितवीर्यजिनेन्द्राय अर्घ्यं ..।

पूर्णार्घ्य—कुसुमलता छंद

ढाई द्वीप में पांच मेरु संबंधित, पांच विदेह महान।
प्रत्येकों में चार चार तीर्थंकर विद्यमान सुखखान ॥
पंच कल्याणक के सब स्वामी, पंचपरावर्तन से दूर।
मैं पंचांग नमूं प्रभु करिये, पंचमगति के सुख भरपूर ॥२१॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री सीमंधरादि अजितवीर्यपर्यंतविंशतितीर्थंकरेभ्य: पूर्णार्घ्यं....।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलि:।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्रीसीमंधरादिविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्यो नम:।

जयमाला

पंच चामर छंद

जयो जयो जयो जिनेंद्र इंद्रवृंद बोलते।
त्रिलोक में महागुरू सु आप नाम तोलते ॥
सुधन्य धन्य धन्य आप साधुवृंद बोलते।
जिनेश आप भक्त ही तो निज किवाड़ खोलते ॥॥१॥

समोसरण में आपके महा विभूतियां भरी।
अनेक ऋद्धि सिद्धियां सुआप पास में खड़ी ॥

---

१. नगरी के नाम आदि कवि जौहरी लाल कृत 'बीस विहरमाण जिनपूजा" पुस्तक से लिये गये हैं।

अनंत अंतरंग गुण समूह आप में भरें ।
गणीन्द्र औ सुरेंद्र चक्रि आप संस्तुती करें ॥२॥
हरिन्मणी के पत्र पद्मराग के सुपुष्प हैं ।
अशोक वृक्ष देखते समस्त शोक अस्त हैं ॥
अनेक देववृंद पुष्पवृष्टि आप पे करें ।
सुगंध वर्ण वर्ण के सुमन खिले खिले गिरें ॥३॥
जिनेश आपकी ध्वनी अनक्षरी सुदिव्य है ।
समस्त भव्य कर्ण में करे सुअर्थ व्यक्त है ॥
न देशना कि चाह है न तालु ओंठ पुट हिले ।
असंख्य जीव के धुनी से चित्तपद्मिनी खिलें ॥४॥
सुचामरों कि पंक्तियां ढुरें सुसूचना करें ।
नमें तुम्हें सुभक्त वे हि ऊर्ध्व में गमन करें ॥
सुसिंह पीठ आपका अनेक रत्न से जड़ा ।
विराजते सुआप हैं अतः महत्त्व है बढ़ा ॥५॥
प्रभासुचक्र कोटि सूर्य से अधिक प्रभा धरे ।
समस्त भव्य के उसी में सात भव दिखा करें ।
सु देवदुंदुभी सदा गभीर नाद को करे ।
असंख्य जीव का सुचित्त खींच के वहाँ करे ॥६॥
सफेद छत्र तीन जो जिनेश शीश पे फिरें ।
प्रभो त्रिलोकनाथ आप सूचना यही करें ॥
सुप्रातिहार्य आठ ये हि बाह्य की विभूतियां ।
सुरेश ने रचे तथापि आप पुण्य राशियां ॥७॥
प्रभो तुम्हीं महान मुक्ति बल्लभापती कहे ।
प्रभो तुम्हीं प्रधान ईश सर्व विश्व के कहे ॥
प्रभो तुम्हें सदा नमें सु भक्ति आप में धरें ।
अनंतकाल तक वहीं अनंत सौख्य को भरें ॥८॥

दोहा

तुम गुण सूत्र पिरोय स्रज, विविधवर्णमय फूल ।
धरें कंठ उन 'ज्ञानमति', लक्ष्मी हो अनुकूल ॥

ॐ ह्रीं सीमंधरादिविंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं ...।
शांतये शांतिधारा । दिव्य पुष्पांजलिः ।

गीता छन्द

जो विहरमाण जिनेंद्र बीसों का सदा अर्चन करें ।
वे भव्य निज के ही गुणों का नित्य संवर्द्धन करें ॥
इस लोक के सुख भोग के फिर सर्वकल्याणक धरें ।
स्वयमेव केवल ज्ञानमति हो मुक्ति लक्ष्मी वश करें ॥१॥

इत्याशीर्वादः ।

प्रशस्तिः

वीर अब्द पच्चीस सौ, तीन सुखद अमलान ।
कार्तिक कृष्णा सप्तमी, पूरण हुआ विधान ॥१॥
विद्यमान श्री बीसजिन, पूजन मंगलकार ।
'ज्ञानमती' साध्वी रचित सबजन को सुखकार ॥२॥
करें करावें जो भविक, त्रिकरण शुद्धि विधान ।
पूज्य सदृश वे भी बनें, परमानंद निधान ॥३॥

विद्यमान बीस तीर्थंकर विधान समाप्त

卐◆◆卐

आरती

मैं तो आरती उतारूँ रे चौबीसों जिनवर की।
जय जय चौबीसों जिनवर, जय जय जय ॥
पहली आरती करूँ कैलाश, गिरिवर अनुपम की। गिरिवर अनुपम की।
मुक्ति पाए जहाँ वृषभेश, नाभि के नंदन की। नाभि के नंदन की।
तीर्थ करतार कहे, युग के आधार रहे, महिमा है अपरम्पार।
हो हो जिनकीमहिमा है अपरम्पार। मैं तो....
दूजी आरती करूँ सिद्धक्षेत्र, चम्पा पुरिवर की। चम्पा पुरिवर की।
वासूपूज्य जिनेश्वर ध्याय, वसुपूज्य नंदन की। वसुपूज्य नंदन की।
भक्ति करो झूम झूम, नृत्य करो घूम घूम, जीवन सुधारो रे।
हो हो प्यारा प्यारा जीवन सुधारो रे। मैं तो....
तीजी आरती महागिरिराज, गिरनार पर्वत की। गिरनार पर्वत की।
राजुल त्याग चले नेमिनाथ, सिद्धि को वरने को। सिद्धि को वरने को।
दीक्षा ले साधु बने, मुक्ति के कांत बने, सिद्धलोक विराजे जा।
हो हो सिद्धलोक विराजे जा। मैं तो....
चौथी आरती करूं निर्वाण पावापुरिवर की। पावापुरिवर की।
त्रिशला नंदन हैं वीर महावीर, मुक्ति के स्थल की। मुक्ति के स्थल की।
कुण्डलपुर जन्म हुआ, कण कण पवित्र हुआ, सिद्धार्थ के दरबार।
हो हो राजा सिद्धार्थ के दरबार। मैं तो –
पंचम आरती करूँ उस तीर्थ, अद्भुत अनुपम को। अद्भुत अनुपम की।
सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र, बीस जिनेश्वर की। बीस जिनेश्वर की।
"माधुरी" गुणगान करे, मन में यह आश धरे, भक्ती करूँ दिनरात।
हो हो प्रभु भक्ति करूँ दिनरात। मैं तो....

भजन

—कु० माधुरी शास्त्री

श्री तीस परम चौबीस, सात सौ बीस जिनेश्वर ध्याऊँ,
भवबंधन शीघ्र मिटाऊँ।

त्रय लोक कहे परमागम में,
है मध्यलोक इनके मधि में।
कृत्याकृत्रिम जिनचैत्य वंदना गाऊँ,
भवबधन शीघ्र मिटाऊँ।

ढाई द्वीपों में पाँच भरत,
है पाँच क्षेत्र शुभ ऐरावत।
दस क्षेत्रों के त्रैकालिक जिनवर ध्याऊँ,
भवबंधन शीघ्र मिटाऊँ।

सुर इन्द्र सदा वंदन करते,
हम भी परोक्ष अर्चन करते।
प्रत्यक्ष देशना मिले भावना भाऊँ,
भवबंधन शीघ्र मिटाऊँ।

जिसने सच्चा श्रद्धान किया,
निज आत्मा का उत्थान किया
इक चाह "माधुरी" सिद्धालय पा जाऊँ,
भवबंधन शीघ्र मिटाऊँ।

卐◆◇卐

तीस चौबीसी विधान मंडल का नक्शा